यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार 2007-08
से सम्मानित

भारत की महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटील के कर-कमलों से, हिंदी में उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन हेतु वर्ष 2007-08 के लिए इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार ग्रहण करते हुए यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री एम.वी.नायर. केंद्रीय गृह मंत्री श्री पी. चिदंबरम भी इस अवसर पर उपस्थित थे.

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

मानव संसाधन - विविध आयाम

संपादन

अरुण श्रीवास्तव

डॉ. नीरा प्रसाद

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

मानव संसाधन - विविध आयाम

संपादक

अरुण श्रीवास्तव

डॉ. नीरा प्रसाद

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग
केंद्रीय कार्यालय, मुंबई - 400 021
फोन : 022-22896610/22896612
फैक्स : 022-22048632
email: arunsrivastava@unionbankofindia.com

स्टाफ महाविद्यालय
बन्नेरघट्टा रोड, बेंगलूर -560083
फोन : 080-22639001/22639020
फैक्स : 080-27828627
email: neeraprasad@unionbankofindia.com

मानव संसाधन - विविध आयाम

संरक्षक
- **एम.वी.नायर**
  अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

मार्गदर्शन
- **एस.रामन**
  कार्यपालक निदेशक
- **एस.सी. कालिया**
  कार्यपालक निदेशक

विशेष सहयोग
- **यू.बी.रायरीकर**
  महाप्रबंधक (कार्मिक)
- **आर.बी.मेनन**
  महाप्रबंधक (प्रशि.) एवं प्राचार्य
  स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर

परामर्श
- **एम.के.पटनायक**
  उप महाप्रबंधक (कार्मिक)

प्रधान संपादक
- **अरुण श्रीवास्तव**
  प्रभारी, राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग
  केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

संपादक
- **डॉ. नीरा प्रसाद**
  राजभाषा प्रभारी
  स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर

प्रथम संस्करण : दिसंबर 2009

मुद्रक: **लावण्या मुद्रणा,** बेंगलूर, फोन: 080-26610563

इस पुस्तक में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया प्रबंधन की उनसे सहमति आवश्यक नहीं है. स्रोत का उल्लेख करने पर इस पुस्तक में प्रकाशित आलेखों को पूर्णतया या आंशिक तौर पर उद्धृत किये जाने पर बैंक को कोई आपत्ति नहीं होगी.

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

एम.वी. नायर
अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि बैंकिंग संबंधी विषयों पर हिंदी में पुस्तकें प्रकाशित करने के निर्णय की कड़ी में इस वर्ष "मानव संसाधन-विविध आयाम" विषय पर यह महत्वपूर्ण प्रकाशन प्रस्तुत किया जा रहा है.

वास्तव में, आज के परिवर्तनशील दौर में निरंतर बदलते बैंकिंग परिदृश्य को देखते हुए मानव संसाधन प्रबंध का महत्व स्वतः सिद्ध हो जाता है. बैंकिंग के नए-नए क्षेत्रों के ज्ञान और अभ्यास को प्रसारित करने के लिए उचित प्रशिक्षण और व्यावहारिक ज्ञान निश्चय ही आवश्यक है, किन्तु सैद्धांतिक ज्ञान का अपना एक अलग और विशिष्ट महत्व है. इस उद्देश्य की पूर्ति करती है हमारी यह पुस्तक "मानव संसाधन-विविध आयाम", जिसमें हमारे बैंक के कुशल स्टाफ सदस्यों ने उत्साहपूर्वक मानव संसाधन के विभिन्न विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है. पुस्तक में संकलित आलेख बैंक के सक्षम प्रशिक्षण तंत्र को और भी सुदृढ़ करेंगे तथा पाठकों को मानव संसाधन के संबंध में गहन जानकारी प्रदान कराएंगे, ऐसा मुझे विश्वास है.

मैं इस पुस्तक में आलेख प्रस्तुत करनेवाले सभी लेखकों की सराहना करता हूँ और इस प्रशंसनीय प्रयास एवं योगदान के लिए राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई और स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर को भी हार्दिक बधाई और शुभकामनाएं देता हूँ. मैं अपेक्षा करता हूँ कि भविष्य में भी पुस्तक-प्रकाशन का यह रचनात्मक और उपयोगी क्रम जारी रखा जाएगा.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

एम वि नायर

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

एस. रामन
कार्यपालक निदेशक

"मानव संसाधन-विविध आयाम" विषय पर उत्कृष्ट आलेखों का संकलन आज के समय की परम आवश्यकता है और जन-सामान्य की भाषा में, एक उपयोगी प्रकाशन के रूप में ऐसे आलेखों को उपलब्ध कराना वस्तुतः सराहनीय है. इस उत्तम कार्य के लिए मैं उन विद्वान स्टाफ सदस्यों और हमारे राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, मुंबई एवं स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर को साधुवाद देता हूँ, जिन्होंने रोचकता का पूर्ण निर्वाह करते हुए इतने गंभीर विषयों पर पठनीय आलेख लिखे व इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग प्रदान किया.

वैश्विक उदारीकरण और तीव्र परिवर्तन के युग में बैंकिंग परिदृश्य में आमूल-चूल रूपांतरण दिखाई दे रहा है, इन परिवर्तनों के अनुरूप कार्मिकों के लिए स्वयं को बदलना अपरिहार्य हो गया है. तेज़ी से बदलते इस परिवेश में प्रशिक्षण तंत्र का दायित्व स्वतः बढ़ जाता है कि वह अपने कार्मिकों को इस बदलाव के लिए तैयार करे और निरंतर नवीनतम एवं उच्च कोटि की उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराए. मुझे खुशी है कि इस परख पर भी यह पुस्तक खरी उतरती है.

मुझे पूरा यकीन है कि हमारे कार्मिक एवं असंख्य पाठक इस श्रेष्ठ प्रकाशन का खुले दिल से स्वागत करेंगे और हम ऐसे ही ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी प्रकाशन निरंतर तैयार करते रहेंगे.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

एस.सी. कालिया
कार्यपालक निदेशक

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि हमारे बैंक द्वारा हिंदी में बैंकिंग संबंधी पुस्तकों के प्रकाशन की शृंखला प्रारंभ की गई है. इसी क्रम में इस वर्ष "मानव संसाधन - विविध आयाम" शीर्षक से आलेखों का संकलन प्रकाशित किया जा रहा है.

मानव संसाधन विषय पर पुस्तक रूप में उपयोगी एवं व्यावहारिक सामग्री उपलब्ध कराना, आज के दौर की माँग है, क्योंकि मानव संसाधन का सुप्रबंध आज अनिवार्यता के साथ-साथ चुनौती बनकर इस निरन्तर बदलते बैंकिंग परिदृश्य के सामने उभरा है. इस सामग्री का उपयोग हमारे प्रशिक्षण तंत्र के लिए भी लाभदायी होगा और हमारे कार्मिकों को वक्त की ज़रूरत के अनुरूप टीम भावना से कार्य निष्पादन हेतु तैयार करने में मददगार होगा.

मैं इस अनुकरणीय कार्य के लिए बैंक के उन विद्वान स्टाफ सदस्यों की प्रशंसा करता हूँ, जिन्होंने मानव संसाधन विषय पर सार्थक आलेख रचे. राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई व स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर के प्रति भी हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिनके सामूहिक एवं अथक प्रयासों से यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है. साथ ही इस उत्कृष्ट कार्य की पूर्ण सफलता की भी मैं कामना करता हूँ.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

एस.सी. कालिया

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

सम्पादकीय

मानव स्वभाव से ही परिवर्तन और सम्भावनाओं के प्रति आकर्षित होता आया है. ज्ञान-विज्ञान की नई-नई ऊँचाइयों को छूने पर भी उसकी जिज्ञासा सदैव बेहतर को और बेहतर बनाने के लिए बनी रहती है. इसी कारण समाज के हर क्षेत्र में हमें निरंतर तेजी से विकास और परिवर्तन दिखाई देता है. परिणामस्वरूप कार्यालयों, विशेषकर बैंकों की कार्यप्रणाली पूरी तरह से रूपांतरित हुई है. भारी भरकम लेजर, फाइलें अब इतिहास की बात बन कर रह गई हैं. साफ सुथरी मेज पर रखे कम्प्यूटर और सामने रखे की-बोर्ड पर थिरकती उंगलियों से ही अब बैंकिंग व्यवसाय चलने लगा है. बैंकिंग उत्पाद लगभग सभी बैंकों में एक समान हैं, अंतर है तो बैंक के मानव संसाधन द्वारा उनकी प्रस्तुति का.

बैंकों के कार्यक्षेत्र से अपेक्षाएं निरंतर बढ़ती जा रही हैं. राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बढ़ती चुनौतियों का सामना करने के लिए बैंकों को अपने मानव संसाधन को अद्यतन तकनीक और सुविधाओं से सज्जित करना पड़ता है. साथ ही मानव संसाधन के चहुंमुखी विकास के लिए समय-समय पर प्रशिक्षण और अभिप्रेरणा भी आवश्यक होती है. प्रशिक्षण इन आवश्यकताओं को पूरा करने का एक सशक्त माध्यम होता है. यूनियन बैंक के प्रशिक्षण तंत्र ने अपने इस दायित्व को बखूबी समझा और निभाया है. यही कारण है कि बैंक के प्रशिक्षण तंत्र को तीन बार राष्ट्रीय स्तर के "गोल्डन पीकॉक नेशनल ट्रेनिंग अवार्ड" से सम्मानित किया गया है.

हमारे इस महत्वाकांक्षी प्रकाशन में मानव संसाधन के विविध आयामों पर हमारे बैंक के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत अनुभवी एवं कुशल स्टाफ सदस्यों ने सरल एवं सुबोध भाषा में मौलिक लेखन किया है. यह पुस्तक वस्तुतः उन्हीं के द्वारा परिश्रमपूर्वक लिखे गए आलेखों का संकलन है. हमें विश्वास है कि यह पुस्तक बैंकिंग क्षेत्र के नए-पुराने सभी लोगों का हर स्तर पर मार्गदर्शन कर पाएगी.

हमारे इस प्रयास को कार्यरूप में परिणत करने में बैंक के सर्वोच्च स्तर से हमें निश्चित ही आशीर्वाद और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, जिसके लिए 'आभार' शब्द बहुत छोटा प्रतीत होता है. साथ ही पुस्तक के लिए जिन अनुभवी कार्मिकों ने अपना रचनात्मक सहयोग दिया है, उनके प्रति हम कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी हमारे सहकर्मियों की रचनाधर्मिता की लहर इसी प्रकार संक्रमित होगी रहेगी.

हमारे पिछले प्रकाशन **"बैंकिंग - विविध आयाम"** की बैंकिंग जगत में बहुत सराहना हुई और पाठकों से भी बहुत अच्छी प्रतिक्रियाएं मिलीं.आशा है कि हमारी यह नई पुस्तक भी बैंकिंग जगत की कसौटी पर खरी उतरेगी.

पुस्तक के प्रकाशन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग देने वाले सभी साथियों के प्रति हम अपना आभार व्यक्त करते हैं.

डॉ.नीरा प्रसाद

अरुण श्रीवास्तव

यूनियन बैंक
ऑफ इंडिया

अनुक्रम

- यूनियन बैंक में प्रोजेक्ट नवनिर्माण - एक नई शुरुआत
  - एस. गोविंदन तथा आर.बी. मेनन 1
- कुशल नेतृत्व की पहचान - टीम निर्माण
  - एम.के. पटनायक 10
- मौन : संवाद का एक प्रभावशाली रूप
  - ज्ञान प्रकाश 17
- तूफानों में जलती शमा - सकारात्मक सोच
  - अनुपम मेहरोत्रा 22
- मानव संसाधन विकास में प्रशिक्षण - एक निवेश
  - रमेश केलकर 30
- अभिप्रेरणा - सिद्धांत व व्यवहार
  - अतुल कुमार 35
- संप्रेषण - कला या विज्ञान
  - डॉ. अजित मराठे एवं संजय प्रकाश श्रीवास्तव 44
- अध्यात्म और कार्यक्षेत्र
  - एच.एन. सक्सेना 50
- संवेगात्मक प्रतिभा : उद्देश्यपूर्ण, समृद्ध एवं शांतिपूर्ण जीवन का रहस्य
  - पी.के. मोहन्ती 56
- जिंदगी में पल बनाम पलों में जिंदगी
  - के.आर. जयप्रकाश 62

- प्रभावशाली व्यक्तित्व के लक्षण
  - कंवर भान चावला 67
- सकारात्मक सोच - एक आवेग
  - डॉ. चेतना पांडेय 76
- अभिप्रेरणा - एक विद्युतीय संचार
  - संदीप गुप्ता 86
- सफलता के घटक - परिश्रम एवं भाग्य
  - अरुण श्रीवास्तव 93
- मानव संसाधन प्रबन्धन एवं संप्रेषण
  - प्रदीप कुलकर्णी 100
- समस्याएं समाप्त नहीं होतीं, केवल रूप बदलती हैं
  - संतोष कुमार शुक्ल 107
- मन के हारे हार है, मन के जीते जीत
  - रामगोपाल सागर 114
- सकारात्मक सोच का जादू
  - सुनीता वंजानी 125
- नेतृत्व कला या विज्ञान
  - मुकेश भारती 131
- संगठन में मूल्य आधारित प्रणाली
  - कल्याण कुमार 140
- टकराव प्रबंधन एवं नेतृत्व
  - बृजेश तिवारी 146
- मानसिक तनाव प्रबंधन - विसंगति में जीने की कला
  - मोहन बोधनकर 155
- समय नहीं वरन् स्वयं का प्रबंध करें
  - महेन्द्र एस. मड़के 162

- विसंगतियों का प्रबंधन - कुशल नेतृत्व की पहचान
  - सुलभा कोरे 166
- कर्मचारी ब्रांडिंग-नई दृष्टि
  - ए.वी. कृष्ण कुमार 175
- अभिप्रेरित करने की कला
  - के.एस. वेंकटेश 182
- टकराव या सामंजस्य - चुनाव आपका
  - डॉ. नीरा प्रसाद 186
- स्वयं की पहचान
  - नरेंद्र सिंह परमार 191
- बैंकिंग उद्योग में मानव संसाधन पूँजी की भूमिका
  - पुष्कर कुमार सिन्हा 196
- अध्यात्म एवं गृहस्थ जीवन
  - केशव ग्रोवर 201
- असंभव को संभव बनाने का मंत्र - अभिप्रेरणा
  - अरविन्द कुमार 204
- शारीरिक भाषा और सम्प्रेषण
  - रणनिपुण बनर्जी 208
- अध्यात्म एवं कार्यालय
  - संतोष श्रीवास्तव 214
- हर समस्या एक चुनौती : हर चुनौती एक अवसर
  - दीपक व्ही. राचेलवार 221
- मानव संसाधन विकास में मूल्यांकन रिपोर्ट का महत्व
  - आदर्श कुमार 227

एस. गोविंदन तथा आर.बी. मेनन

यूनियन बैंक में प्रोजेक्ट नवनिर्माण - एक नई शुरुआत

यूनियन बैंक की स्थापना 1919 में हुई. प्रथम चालीस वर्षों तक, बैंक ने रूढ़िवादी ढंग से कार्य करते हुए सामान्य वृद्धि दर्ज की. तथापि, वर्ष 1969 तक, अपने व्यवसाय एवं शाखाओं की संख्या के आधार पर यह सुदृढ़ बैंक बन गया, जिसके कारण भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीयकरण हेतु चुने गये बैंकों में इसे भी शामिल किया गया.

अस्सी के दशक तक बैंक ने पारंपरिक व्यवसाय के क्षेत्र पर ध्यान देते हुए रुढ़िवादी प्रगति की नीति जारी रखी. उदारीकरण के पश्चात, बैंक ने प्रगति की एक महत्वाकांक्षी योजना बना कर ऊंची छलांग लगायी, जिससे 1993 और 1996 के मध्य बैंक का व्यवसाय दोगुना हो गया. साथ ही साथ, बैंक ने अपने परिचालनों का कम्प्यूटरीकरण किया तथा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकिंग उद्योग में अग्रणी बैंक के रूप में उभरने लगा. पहली बार, बैंक ने अपनी पहचान बनायी. अपने व्यावसायिक ढांचे को नया रूप देने के लिए नयी रूपरेखा तैयार करने के लिए बैंक ने कारोबार के स्वरूप के आधार पर शाखाओं का वर्गीकरण करके पहला बड़ा कदम उठाया.

नयी शताब्दी में, बैंक ने सभी शाखाओं को सीबीएस नेटवर्क में लाने की परियोजना प्रारंभ करने के साथ ही सार्वजनिक निर्गम के माध्यम से पूंजी एकत्र करने पर ध्यान दिया. इन दोनों ही घटनाओं का व्यवसाय वृद्धि तथा स्टाफ के रवैये में बदलाव पर भारी प्रभाव पड़ा. तृतीय पक्ष के उत्पादों यथा जीवन एवं गैर-जीवन बीमा के विपणन तथा म्यूचुअल फंड के विपणन के द्वारा व्यवसाय के नये क्षेत्र में प्रवेश किया है. तीव्र प्रगति तथा उच्च लाभप्रदता के परिणामस्वरूप बैंक को एक ऐसे बैंक

के रूप में पहचान मिली, जिसमें बैंकिंग उद्योग का एक बड़ा बैंक बनने की क्षमता है. फिर भी, बाजार की चुनौतियों का मुकाबला करने तथा गतिशील अर्थव्यवस्था के लिए बैंक में आमूल-चूल परिवर्तन की आवश्यकता थी. आगे इसी आमूल-चूल परिवर्तन की प्रक्रिया की कहानी दी गई है.

1. पृष्ठभूमि

वर्ष 2006 में यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का बाजार में हिस्सा बैंकिंग उद्योग में तुलना योग्य था. कुछ पैरामीटरों में बैंक का वित्तीय कार्यनिष्पादन पर्याप्त रूप से संतोषजनक रहा और बड़े बैंकों के साथ इसकी स्वस्थ तुलना हुई. हालांकि, अपने कार्यनिष्पादन से संतुष्ट होने के बैंक के पास पर्याप्त कारण थे, बैंकिंग उद्योग में हो रहे परिवर्तनों ने शिथिलता की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी थी. 8 वर्ष की अवधि में, कुल जमाराशि में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का बाजार अंश लगभग 82% से घटकर 77% हो गया. नयी पीढ़ी के निजी क्षेत्र के बैंकों तथा कुछ विदेशी बैंकों ने उदारीकृत वातावरण का लाभ उठाकर अपनी शाखाएं खोल कर, उन के माध्यम से ग्राहकों के संभावना वाले क्षेत्र को लक्ष्य किया.

निःसन्देह बैंक के कई मजबूत पहलू थे, यथा समान रूप से फैला हुआ मजबूत शाखा तंत्र, उच्चस्तरीय ग्राहक सेवा के साथ अत्यधिक उत्कृष्ट कार्य-संस्कृति तथा परियोजनाओं को प्रभावपूर्ण ढंग से निष्पादित करने का इतिहास. इन सब में अधिक महत्वपूर्ण था कि बैंक का लगभग 82% व्यवसाय कोर बैंकिंग नेटवर्क के तहत् था, कोर बैंकिंग के क्षेत्र में बैंक, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में अग्रणी रहा. इस के अतिरिक्त, तीव्र परिवर्तन प्रक्रिया के सम्मुख एक प्रमुख चुनौती एक सफल अतीत के प्रति सजगता के साथ बैंक की उच्च आयु औसत रही. उच्च आयु औसत का मुख्य कारण सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में दो दशक से अधिक समय तक नयी भर्ती पर लगभग प्रतिबंध जैसी स्थिति रही है.

अतः बैंक प्रबंधन के समक्ष चुनौती थी कि अपने लगभग 28000 स्टाफ को परिवर्तन प्रक्रिया में किस प्रकार शामिल करे, जिसमें मानव, प्रक्रिया तथा टेक्नॉलाजी शामिल होगी. बैंक ने वांछित परिवर्तन को शुरु करने के लिए एक परामर्श प्रक्रिया अपनाने का निर्णय लिया.

2. प्रोजेक्ट नवनिर्माण का अभ्युदय

बैंक के जीवन में 17 एवं 18 नवम्बर 2006 के दो दिन लगभग ऐतिहासिक रहे हैं. ये वही दो दिन हैं, जब मुम्बई-पुणे हाईवे पर एम्बी वैली नामक एक रिसॉर्ट

में एक कार्यशाला आयोजित की गई थी. इस कार्यशाला में बैंक के उच्च प्रबंधन ने भाग लिया, जिसमें अन्वेषण तथा बैंक की स्थिति पर इस दृष्टि से चर्चा हुई कि अगले 5 वर्षों के लिए बैंक के विज़न की पहचान हो सके. इस कार्यशाला की व्यवस्था, परिवर्तन प्रक्रिया पर परामर्श के लिए नियुक्त बोस्टन कन्सल्टिंग ग्रुप ने की.

दो दिनों तक हुई चर्चा के दौरान, बैंक के उच्च प्रबंधन ने ऐसे नाजुक क्षेत्रों की पहचान की, जहां परिवर्तन आवश्यक था. उन क्षेत्रों को महत्व के क्रम में क्रमबद्ध किया गया. तदनन्तर, दूर की जाने वाली कमियों की भी पहचान की गई. कार्यशाला की समाप्ति पर, समूह ने संयुक्त रूप से बैंक द्वारा वर्ष 2012 तक हासिल किये जाने वाले विज़न का निर्धारण किया, जो विश्वव्यापी उपस्थिति के साथ भारत के तीन शीर्ष राष्ट्रीयकृत बैंकों में से एक बनना था.

सम्पूर्ण परिवर्तन प्रक्रिया को एक परियोजना शीर्षक के तहत शुरु किया गया, जिसे कालान्तर में **प्रोजेक्ट नवनिर्माण** के नाम से जाना गया. प्रोजेक्ट का लक्ष्य बैंक को ग्राहक-केन्द्रित बैंक में परिवर्तित करना था, वर्ष 2012 तक एक विज़न प्राप्त करना था.

3. मिशन का संदेश देना - टाउनहॉल बैठक

बैंक के सभी कर्मचारियों को परिवर्तन प्रक्रिया के महत्व से अवगत कराने के लिए, अध्यक्ष एवं प्रबंधक निदेशक महोदय ने सम्पूर्ण देश में टाउनहॉल बैठकों की शृंखला आयोजित की. इनमें से 35 बैठकों को अध्यक्ष महोदय ने संबोधित किया तथा शेष केन्द्रों पर कार्यपालक निदेशकों तथा महाप्रबंधकों ने बैठकों को संबोधित किया. इन टाउन हॉल बैठकों में प्रत्येक केन्द्र के सभी स्टाफ सदस्यों को संबोधित किया गया. इस प्रकार, 28000 सदस्यों के यूनियन बैंक परिवार को टाउन हॉल बैठकों के द्वारा संबोधित किया गया.

अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक ने टाउन हॉल बैठकों में निम्नलिखित गतिविधियों के संदर्भ में परिवर्तन की आवश्यकता का महत्व बतायाः

- टेक्नॉलाजी ने आज हमारे बैंकिंग के तरीके को बदल दिया है. अतः परिवर्तन का पहला कारण है, टेक्नॉलाजी के प्रति लचीला रवैया अपना कर अपनी कार्यप्रणाली को पुनर्निर्धारित करना.
- देश की जनसंख्या में तीव्र परिवर्तन आया है, फलस्वरूप भारत की लगभग 40% जनसंख्या 18 से 35 वर्ष की आयु वर्ग में होने के साथ ही यह दुनिया

के युवा देशों में से एक बन गया है. अतः एक संगठन के रूप में, हमें इस वर्ग से संपर्क स्थापित करना है, जो कि परिवर्तन प्रक्रिया की सफलता के लिए एक प्रमुख चुनौती है.

- बाजार की प्रतिस्पर्धा के कारण विपणन, बिक्री तथा हमारे ग्राहकों को सेवा देने के लिए नये कौशल की आवश्यकता है. भारतीय अर्थव्यवस्था का द्वार विदेशी बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों के लिए खुलने के बाद प्रतिस्पर्धा और तीव्र होगी. हमारे भीतर परिवर्तन लाने तथा बाजार की उभरती हुई स्थितियों के लिए तैयार रहने के लिए यह और भी आवश्यक है.

4. प्रोजेक्ट

अभिचिह्नित क्षेत्रों में ग्राहक केन्द्रित बड़े उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रोजेक्ट नवनिर्माण में 4 प्रमुख पहलों को अभिनिर्धारित किया गया है :-

❖ रिटेल आस्ति के संदर्भ में, नव निर्माण पहल के तहत् 40 केन्द्रों पर यूनियन लोन प्वाइंट की अवधारणा बनाकर लागू की गई. यूनियन लोन प्वाइंट को गृह निर्माण ऋण, कार ऋण, शिक्षा ऋण एवं बैंक द्वारा समय-समय पर दिये जाने वाले अन्य खुदरा ऋण देने के लिए उत्कृष्ट केन्द्र के रूप में तैयार किया गया है. खुदरा ऋण बाजार, जो चहुंमुखी प्रगति के दौर से गुजर रहा था, में बैंक को बढ़त दिलाने के लिए यूनियन लोन प्वाइंट को तैयार किया गया.

❖ एसएमई के तहत् की गई पहल ने **'सरल'** की अवधारणा को जन्म दिया. बैंक द्वारा सभी प्रमुख केन्द्रों पर सरल खोले गये हैं. ये सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों को ऋण मंजूर करने के लिए समस्त सुविधाओं से सुसज्जित विशेषीकृत प्रक्रिया केन्द्र हैं. ये बिजनेस बैंकिंग शाखाओं (शाखाओं का वह समूह जिसे विशेष रूप से इस क्षेत्र को ऋण के लिए प्रोत्साहित करने हेतु अभिचिह्नित किया गया है) के लिए 'प्रक्रिया हब' के रूप में कार्य करते हैं. एसएमई पर यह फोकस बैंक की इस नीति के अनुरूप था, जिसके अनुसार बैंक द्वारा इस क्षेत्र को, हमारी अर्थव्यवस्था में इसकी बड़ी संभावना एवं महत्व के कारण कारोबारी वृद्धि के विशेष ध्यान क्षेत्र के रूप में, अंगीकार करने का प्रयास किया गया है.

❖ **शाखा बिक्री एवं सेवा** - यह उन 1000 से अधिक पर्सनल बैंकिंग शाखाओं के लिए शुरू की गयी अवधारणा है, जो रिहायशी एवं वाणिज्यिक क्षेत्रों में स्थित हैं, किन्तु प्राथमिक रूप से बचत बैंक या चालू खाता से संबंधित

उत्पादों एवं सेवाओं की पूर्ति कर रही हैं. इन शाखाओं में बिक्री एवं सेवा, अवधारणा गतिविधि के उन 4 प्रमुख क्षेत्रों पर केन्द्रित प्रयास के माध्यम से सक्रिय की गई, जो परिवर्तन प्रक्रिया के कोर पहलू थे. वे हैं:

i) ग्राहक प्रोफाइल का स्तरोन्नयन करके सम्पर्क क्षमता में वृद्धि करना.

ii) विदेश संबंधी बिक्री एवं अभियान के लिए क्षमता विकसित करना.

iii) लीड जेनरेशन अवधारणा के तहत् नया व्यवसाय प्राप्त करने तथा उत्पादों एवं सेवाओं की क्रास सेलिंग के लिए टीम के रूप में प्रयास करना.

iv) टेक्नॉलाजी के प्रति उदारता दर्शाते हुए वैकल्पिक डिलीवरी चैनल को प्रोत्साहित करना.

जो शाखाएं बिक्री एवं सेवा केन्द्र के रूप में परिवर्तित की गईं, वहां हाई नेटवर्थ खातों को सम्पर्क सेवाएं प्रदान करने के लिए ग्राहक सम्पर्क प्रबंधक पदस्थ किये गये. सम्पर्क बैंकिंग पहल के तौर पर वहां प्रिविलेज लाउंज बनाये गये.

इस अवधि में बैंक ने शाखाओं में रिलेशनशिप अधिकारी की अवधारणा शुरु की, जिसे यदि सार्वजनिक क्षेत्र बैंकों में अपनी किस्म का पहला प्रयोग कहा जाए तो गलत नहीं होगा. शाखा में कार्यरत सभी अधिकारियों को इस आदेश के साथ मोबाइल फोन उपलब्ध कराये गये कि उनमें से प्रत्येक 100 ग्राहकों से सम्पर्क रखेगा. इस प्रक्रिया के द्वारा संबंधित शाखा से संबद्ध मूल्य एवं रिलेशनशिप के आधार पर बड़ी संख्या में ग्राहकों को रिलेशनशिप लाभ प्रदान किये गये.

❖ **बैक ऑफिस प्रक्रियाओं का केन्द्रीयकरण**

टेक्नॉलाजी के द्वारा बैंक उन प्रक्रियाओं को केन्द्रीयकृत करने में सक्षम हुआ, जो शाखा परिसर के बैक ऑफिस में की जाती थीं. शुरु में, समस्त समाशोधन प्रक्रिया तथा ग्राहकों को चेकबुक जारी करने का कार्य केन्द्रीयकृत बैक ऑफिस में अन्तरित किया गया. केन्द्रीयकृत बैक ऑफिस की कार्यप्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए खाता खोलने के फार्म से डाटा कैप्चर, इलेक्ट्रानिक क्लियरिंग सेवा लेनदेन तथा ग्राहकों को खाता विवरण जारी करने का कार्य इसमें शामिल किया गया.

केन्द्रीयकरण प्रक्रिया तथा बिक्री एवं सेवा अवधारणा साथ-साथ चलती हैं, जिसमें शाखाएं उपर्युक्त कार्यों से मुक्त रखी गई हैं. फलस्वरूप सम्पूर्ण शाखा, लेनदेन तथा रिलेशनशिप बैंकिंग प्रदान करने के लिए बिक्री एवं सेवा केन्द्र में परिवर्तित कर दी गई है.

5. लीड प्रबंधन प्रणाली

नव निर्माण पहल के एक भाग के रूप में बैंक ने दिसम्बर, 08 में एक साफ्टवेयर सहायता प्रणाली शुरू की है, जिसे लीड प्रबंधन प्रणाली कहा जाता है. इस प्रणाली के माध्यम से बैंक के सभी कर्मचारी मौजूदा एवं नये ग्राहकों को उत्पाद एवं सेवाओं के लिए लीड प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसे संबंधित शाखा प्रबंधकों, ग्राहक सम्पर्क प्रबंधकों एवं विपणन अधिकारियों द्वारा उत्पाद प्रदान करने के लिए संभाल लिया जाता है. इस प्रकार लीड प्रबंधन प्रणाली संगठन की सहभागिता वृद्धि की कार्य संस्कृति एवं ग्राहक सम्पर्क मूल्य वृद्धि का एक अभिन्न अंग बन चुकी है.

नव निर्माण पहल की शुरुआत परिवर्तन प्रक्रिया को "*करो और दिखाओ*" के माध्यम से दर्शानेवाले प्रशिक्षकों, की पहचान के द्वारा की गयी थी. बैंक स्टाफ में से 80 से अधिक पूर्णकालिक प्रशिक्षकों का चयन करके शाखा बिक्री एवं सेवा, खुदरा उत्पाद ऋण विपणन एवं एसएमई उत्पाद विपणन का कार्य करने के लिए कोचिंग प्रदान करने हेतु सूचीबद्ध किया गया. इस प्रकार कोचिंग कार्यक्रम परिवर्तन प्रक्रिया को समझने में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुआ. इसके द्वारा नव निर्माण परियोजना पर विभिन्न स्थानों पर 1000 से अधिक शाखाओं में चरणबद्ध तरीके से परिवर्तन का प्रदर्शन किया गया. कोचिंग टीम ने *'आंखों देखी पर विश्वास करो'* कहावत को चरितार्थ किया.

नवनिर्माण के माध्यम से परिवर्तन प्रक्रिया नवम्बर, 06 से अप्रैल, 08 की 18 माह की अवधि में पूरी की गई. इस चरण में बैंक ने अपने संगठनात्मक ढांचे को वृद्धि के अभिचिह्नित क्षेत्रों में **'बिजनेस वर्टिकल्स'** के द्वारा पुनर्गठित किया. जून, 08 में लागू किए गए बिजनेस वर्टिकल्स बैंक को अपनी वृद्धि के विज़न को आगे ले जाने के लिए तैयार किए गए थे. कारपोरेट स्तर पर भी निरूपित बिजनेस वर्टिकल्स से विशिष्ट व्यावसायिक क्षेत्रों में शाखाओं के पुनर्गठन में सहायता मिली, ताकि व्यवसाय की केन्द्रित प्रगति हो सके. इससे निर्धारित समय में स्तरीय उत्पाद एवं सेवा के माध्यम से ग्राहक को श्रेष्ठ सेवा प्रदान करने के मूल उद्देश्य का मार्ग प्रशस्त हुआ. बिजनेस वर्टिकल्स का अन्तिम लक्ष्य व्यवसाय के संबंधित क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त करना तथा ग्राहक के लिए उत्तम मूल्य सृजित करना था.

कारपोरेट स्तर पर बनाये गये बिजनेस वर्टिकल्स निम्नलिखित हैं -

- **लार्ज कारपोरेट :** यह वर्टिकल औद्योगिक वित्त शाखा तथा ओवरसीज शाखा के रूप में पदनामित 20 शाखाओं के माध्यम से कार्य करेगा, जो रु.35 करोड़ तथा इससे ऊपर की बैंकिंग सुविधा की आवश्यकता वाले कारपोरेट एवं बड़े बिजनेस हाउसेज की सम्पूर्ण बैंकिंग आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खोले गये हैं. बड़े कारपोरेट ने लोन सिंडिकेशन, मर्जर एवं एक्विजिशन तथा परामर्श सेवाओं के उभरते हुए अवसरों के नये क्षेत्र में भी प्रवेश पा लिया.

- **एसएमई वर्टिकल :** एसएमई वर्टिकल ने लघु एवं मध्यम उद्यमियों को ऋण देने तथा 175 समर्पित बिजनेस बैंकिंग शाखाओं के माध्यम से इस क्षेत्र की व्यावसायिक वृद्धि को बढ़ावा देने पर ध्यान दिया.
- **खुदरा ऋण :** खुदरा ऋण वर्टिकल ने देश भर में फैले हुए 40 समर्पित यूनियन लोन प्वाइंट्स के माध्यम से खुदरा ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति की.
- **वैयक्तिक बैंकिंग एवं परिचालन :** इस बिजनेस वर्टिकल ने खुदरा दायित्व उत्पाद तथा बैक ऑफिस प्रक्रिया के केन्द्रीयकरण तथा बिक्री एवं सेवा पहल के कार्यान्वयन में सहयोग किया. इस वर्टिकल ने देश भर में फैली हुई 1000 वैयक्तिक बैंकिंग शाखाओं के सहयोग से कार्य संचालन किया.
- **ग्रामीण एवं कृषि व्यवसाय :** इस वर्टिकल ने 800 ग्रामीण एवं अर्द्धशहरी शाखाओं के सहयोग से कृषि उधार के साथ ही समावेशी बैंकिंग पहल की आवश्यकताओं की पूर्ति की.
- **लेनदेन बैंकिंग :** इलेक्ट्रानिक उत्पाद के तहत् उभरते हुए व्यवसाय के क्षेत्र को समायोजित करने तथा एटीएम, इलेक्ट्रानिक फंड ट्रांस्फर, ई-बैंकिंग इत्यादि सेवाओं को संचालित करने के लिए संगठनात्मक ढांचे में लेनदेन बैंकिंग नामक एक नया प्रभाग खोला गया. इस वर्टिकल ने भी लेनदेन सम्पर्क के नये क्षेत्र यथा साख पत्र, गारंटी पत्र, चैनल फाइनेन्सिंग एवं सरकारी कारोबार सम्पर्क के विकास की जिम्मेदारी ली. लेनदेन बैंकिंग वर्टिकल सार्वजनिक क्षेत्र बैंकिंग में अपनी तरह का पहला था.
- **ट्रेजरी एवं अन्तरराष्ट्रीय बैंकिंग :** इस वर्टिकल ने ट्रेजरी से संबंधित व्यवसाय तथा अन्तरराष्ट्रीय बैंकिंग गतिविधियों के विस्तार पर ध्यान दिया.

रीब्रांडिंग प्रक्रिया

18 महीने में पूरी हुई परिवर्तन प्रक्रिया के बाद बैंक तकनीक, प्रसंस्करण एवं

उत्पाद के माध्यम से नये जमाने की बैंकिंग चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए पूरी तरह तैयार था. बाजार में बैंक से आगे कोई दूसरा बैंक नहीं था. समुचित प्रशिक्षण तथा कोचिंग कार्यक्रम के प्रभाव, जोकि नवनिर्माण का भाग हैं, ने स्टाफ सदस्यों तथा शाखाओं में बाजार आउटलेट के रूप में कार्य करने के लिए नये कौशल एवं नयी प्रेरणा का संचार किया. इस चरण पर बैंक ऐसी स्थिति में पहुँच गया, जहां रीब्रांडिंग प्रक्रिया आवश्यक हो गयी. रीब्रांडिंग प्रक्रिया का उद्देश्य 18 माह की अवधि में हुए आन्तरिक परिवर्तनों को आम जनता तथा हितधारकों के समक्ष लाना था.

रीब्रांडिंग प्रक्रिया की विषयवस्तु थी - ग्राहक तथा बैंक के मध्य संबंध. अवधारणा यह थी कि बैंक एक ऐसी संस्था की भूमिका अदा करेगा जो कि ग्राहक एवं उपभोक्ता का साझेदार होगा तथा उनके सपनों को पूरा करने में साथ होगा. कई डिजाइन तैयार किये गये तथा इन पर चर्चा हुई और अंत में जो डिजाइन बैंक के लिए चुनी गई, उसमें यूनियन बैंक और ग्राहक के आपसी संबंधों की प्रगाढ़ता के प्रतीक के रूप में दो "यू" आपस में गुंथे हुए हैं. इसके लिए लाल एवं नीले रंग चुने गये - लाल रंग दृढ़ता, शक्ति, ऊर्जा, मजबूती का प्रतीक है, जबकि नीला रंग गहराई, विश्वास, स्थिरता, एकनिष्ठा का प्रतीक है. इस अभियान का घोषवाक्य था "**आपके सपने सिर्फ आपके नहीं**".

नये लोगो को जारी करने के समय, सम्पूर्ण देश के अखबारों में तथा देश विदेश के टेलीविजन में एक अभियान चलाया गया. यह अभियान अभूतपूर्व रूप से सफल रहा. नया लोगो कई प्रकार से बैंक के एक पारंपरिक सार्वजनिक क्षेत्र बैंक से, एक प्रभावशाली एवं अग्रणी संगठन में परिवर्तित होने का प्रतीक है, जो अपने विज़न 2012 को पूरा करने के लिए सभी आवश्यक क्षमताओं से सुसज्जित है.

रीब्रांडिंग प्रक्रिया दिनांक 1 सितम्बर 2008 को ग्राहकों के समक्ष अध्यक्ष महोदय द्वारा निम्नलिखित 4 प्रमुख ब्रांड वादों की घोषणा के साथ ही उच्चतम स्थल पर पहुँच गई -

1. धन का मूल्य
2. वचनबद्ध समय में सुपुर्दगी
3. चैनल चयन का विकल्प
4. उत्पाद एवं मूल्य में पारदर्शिता

तुलनात्मक रूप से एक अल्प अवधि में [संस्था के 90 वर्षों के इतिहास में], परिणाम दिखाई दिये तथा बैंक ने कई क्षेत्रों में बैंकिंग उद्योग के स्तर के ऊपर वृद्धि दर्ज की, जिसका सबूत नीचे दिये गये आंकड़े हैं :

कारोबार में वृद्धि - यूनियन बैंक ऑफ इंडिया

	अगस्त 07 से दिसम्बर 07		अगस्त 08 से दिसम्बर 08	
	रकम	%	रकम	%
कोर जमाराशि	8700	12.35	17300	19.87
अग्रिम	10187	15.97	13309	17.32
खुदरा अग्रिम	428	6.14	1230	14.38

कारोबार में वृद्धि - अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक

	अगस्त 07 से दिसम्बर 07		अगस्त 08 से दिसम्बर 08	
	रकम	%	रकम	%
समग्र जमाराशि	180623	6.52	182516	5.38
अग्रिम	188021	9.59	184661	7.50

जिस अवधि में यूनियन बैंक ऑफ इंडिया ने जमा एवं अग्रिम दोनों में तीव्रगति से वृद्धि दर्शायी है, उसी अवधि में जैसा कि ऊपर दिया गया है, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में वृद्धि दर निम्नतर है. अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में जमा एवं अग्रिम का प्रतिशत 6.52% तथा 9.59% से घट कर क्रमशः 5.38% तथा 7.50% रहा.

अंत में, परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है तथा ऐसी किसी भी परियोजना का कभी समापन नहीं होता. यूनियन बैंक ऑफ इंडिया में परिवर्तन प्रक्रिया ने बैंक को कार्यनिष्पादन के उच्चतर स्तर को प्राप्त करने तथा इसे वास्तविकता में परिवर्तित करने का मजबूत आधार प्रदान किया है.

एस. गोविंदन, महाप्रबंधक (वैयक्तिक बैंकिंग एवं परिचालन) तथा **आर.बी. मेनन,** महाप्रबंधक (प्रशिक्षण) हैं.

एम.के. पटनायक

कुशल नेतृत्व की पहचान - टीम निर्माण

वर्षों पहले किसी मित्र से एक वाकया सुना था कि सुनसान रास्ते से होकर व्यापारियों का काफिला गुजर रहा था. इतने में कुछ लुटेरों से उनका सामना हुआ और लुटेरों ने उन्हें लूट लिया. काफी दूर चलने के बाद उन्हें कस्बे में पुलिस चौकी मिली और उन्होंने घटना की रिपोर्ट कुछ इस तरह से दर्ज की.

हम चालीस लोग सुनसान रास्ते से गुजर रहे थे, हमें 3 डाकुओं का एक दल मिला और उन्होंने हमें लूट लिया. पुलिस को आश्चर्य हुआ और उन्होंने फिर पूछा कि वे सिर्फ तीन लोग थे और तुम लोग चालीस, फिर यह कैसे हुआ? दोबारा लोगों ने ही कहा, "बताया तो साहब, हम चालीस 'लोग' थे और उनका, तीन लोगों का 'दल' था. कैसे मुकाबला करते?"

पुलिस को समझ आया या नहीं हम नहीं जानते, पर इसमें एक समझदारी की बात जरूर है कि दल चाहे छोटा हो या बड़ा, पर मकसद दल से पूरा होता है. बिखरे हुए लोगों के झुंड से नहीं. इस कहानी से यदि हम सकारात्मक सीख लें तो दल या टीम की अहमियत उभर कर सामने आती है. कहते हैं **'टीम वर्क - ड्रीम वर्क'** अर्थात् टीम से ही सपने साकार होते हैं. किसी भी सामूहिक कार्य में चाहे वह खेल का मैदान हो, सामाजिक गतिविधियां हो या सार्वजनिक प्रतिष्ठान, टीम की आवश्यकता सर्वोपरि है.

पदोन्नति के लिए एक साक्षात्कार में प्रार्थी से प्रश्न किया गया कि प्रमोशन के बाद यदि किसी क्षेत्र या इलाके में पदस्थ कर दिया जाये तो आपकी पहली प्राथमिकता क्या होगी. उत्तर था निःसंदेह 'टीम निर्माण', क्योंकि टीम के बिना लीडर कैसा? इस उत्तर की काफी सराहना हुई. सत्य है, टीम के बिना कार्यसिद्धि असंभव है.

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि एक सफल नेतृत्व के लिए एक सफल टीम का बहुत बड़ा योगदान रहता है. चाहे शाखा हो, क्षेत्र या कोई और दफ्तर, एक संगठित टीम से ही व्यवस्थित कार्यप्रणाली को आधार मिलता है. टीम असंभव को संभव बनाने की क्षमता रखती है. नेतृत्व को टीम के सदस्यों की क्षमता की पहचान कर उन्हें विश्वास में लेना पड़ता है. इस प्रक्रिया में यह मानकर चलना चाहिए कि सभी सदस्यों की काबिलियत एक सी नहीं होगी. हमें इस स्थिति को भलीभाँति समझना ही पड़ेगा और फिर कार्य आबंटन भी उसी प्रकार से करना पड़ेगा.

रोड मैप :

कुशल टीम के निर्माण व परिचालन में प्रमुखता से ध्यान देने की जरूरत है कि प्रत्येक की भूमिका की स्पष्ट जानकारी टीम के प्रत्येक सदस्य को हो. उसे क्या करना है, उससे क्या अपेक्षित है, साथ ही उद्देश्यों या लक्ष्यों की भी स्पष्ट जानकारी उन्हें प्रदान की जानी चाहिए.

विज़न :

टीम के सामने सदैव एक 'विज़न' का होना जरूरी है. एक सपना जो उन्हें अपना लगे, जिसे साकार करने के लिए वे तन-मन से प्रयत्नशील हों.

संप्रेषण :

आपसी विचार विनिमय के लिए संप्रेषण की आवश्यकता है, जो सरल, स्पष्ट व सटीक हो. टीम के प्रत्येक सदस्य से लगातार संवाद बनाये रखना चाहिए, ताकि विचारों, सुझावों का सतत आदान-प्रदान बना रहे.

बेहतर संप्रेषण के लिए टीम के सदस्यों में आपसी समझ व भाषिक एकरूपता भी सहायक होती है. नेतृत्व करने वाले मुखिया के विचारों, भावों व भाषा में स्पष्टता, उत्साह और आकांक्षाओं का सामंजस्य होना भी अत्यावश्यक है.

नेतृत्व का स्वरूप और महत्व :

नेतृत्व में संपूर्ण विश्वास, लक्ष्य से भी आगे जाने की ललक व महत्वाकांक्षा, टीम के सदस्यों द्वारा असंभव लगने वाले कार्य भी संभव कर दिखाती है.

लीडर - कौन? कैसा? कैसे बनते हैं? उनके क्या गुण होते हैं?

स्वच्छ अनुकरणीय चरित्र, उदात्त सोच, मूल्यबोध, दृढ़ता, निश्चय, एकाग्रता,

उदारता, संकट में स्थिर दिमाग, उचित मार्गदर्शन - ये सब एक कुशल नेतृत्व के लक्षण हैं. हमारे इतिहास या पुराणों में नेतृत्व की व्याख्या की गयी है. प्राचीन ग्रंथों में इसके श्रेष्ठ उदाहरण विभिन्न चरित्रों के माध्यम से हमारे समक्ष आते हैं. गीता की सृष्टि ऐसे ही एक महान चरित्र के द्वारा हुई है. युगपुरुष श्रीकृष्ण द्वंद्व में फंसे वीर अर्जुन को दिग्भ्रमित होने से रोकते हैं तथा उचित दिशा में उन्हें संचालित करते हैं. प्रत्येक धर्म में ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं - जैसे यीशु मसीह हों, नानक हों या पैगम्बर मोहम्मद. आधुनिक समाज तंत्र में हमने ऐसे मसीहों को देखा है, जिन्होंने अपने व्यक्तित्व, विचारधारा से राष्ट्र और विश्व के घटना-प्रवाह को प्रभावित किया है, नयी दिशाओं की ओर समय की धारा को मोड़ दिया है. जिस राष्ट्र में नेतृत्व जितना सक्षम, समर्थ रहा, उसे प्रगति से कोई नहीं रोक सका. गांधीजी व लूथर किंग जैसे युगपुरुषों ने अपने नैतिक व आध्यात्मिक नेतृत्व के बल पर अवतार का रूप धारण कर लिया. परन्तु सोचने की बात है कि ऐसे गुण लेकर लीडर पैदा होते हैं या समय के अनुसार बन जाते हैं या परिस्थितियां ऐसे लीडर पैदा करती हैं?

कोई एक स्पष्ट उत्तर नहीं है. इन सभी तत्वों के समावेश से ही नेतृत्व की उत्पत्ति होती है या फिर कभी-कभी कोई एक कारण ही पर्याप्त होता है. नेतृत्व को उभारने के लिए निम्न कसौटी से लीडर की क्षमता का पता लगता है :

- o लीडर किन परिस्थितियों में कैसा बर्ताव करता है, अर्थात् समस्याओं का समाधान कैसे करता है.
- o क्या आकर्षण होता है कि लोग उसके साथ हो लेते हैं.
- o ऐसा कौन सा तत्व है, जिससे लोग समर्पित भाव से, स्वतः स्फूर्त भाव से साथ चलते हैं. यह स्थिति दीर्घस्थायी होती है, यदि मजबूरी में (अनमनेपन से) साथ में आना पड़े तो कार्य की गुणवत्ता व समय-सीमा में अवश्य फर्क पड़ता है.

दृढ़ निश्चय व लगातार सुधार की तीव्र इच्छा शक्ति, टीम को साथ रखने में उनमें विश्वास जगाने में व चुस्त दुरुस्त व सजग बनाये रखने के लिए भी नेतृत्व की बड़ी भूमिका है, क्योंकि लोग वही करते हैं, जो आप करते हैं. केवल कहना काफी नहीं है, उसे करके दिखाना (डेमोन्स्ट्रेट) पड़ता है, तब टीम में उस कार्य को करने का विश्वास पैदा होता है. अतः अपने कार्यों से मिसाल प्रस्तुत करने में ही नेतृत्व की सफलता निहित है.

नेतृत्व, ईश्वर प्रदत्त गुण है या विकसित करना पड़ता है, मेरे विचार में दोनों की ही आवश्यकता है. फिर भी अधिकतर योगदान सहज या रुहानी होता है. परंतु

विकसित नेतृत्व को भी नकारा नहीं जा सकता. ऐसे कई उदाहरण हैं, जिन्होंने तमाम कमजोरियों के बावजूद, उनसे निजात पाकर नेतृत्व का अपने में विकास किया. कई मशहूर लीडर पहले कमजोर व्यक्तित्व वाले रहे. पर कदम-दर-कदम कमजोरियों से ऊपर उठकर सक्षम नेतृत्व प्रदान किया और समय की कसौटी पर खरे उतरे और कालजयी बन गये.

आत्मविवेचन :

संकट की स्थिति में लीडर क्या करते हैं कि उनका चरित्र और निखरकर उभरता है. यह कोई जरूरी नहीं कि हर समय वह सही रास्ता ही चुनें. परन्तु यदि सही समय से निर्णय लिया गया है तो बाद में सुधार की गुंजाइश होती है. कुशल नेता वही हैं, जो बीच रास्ते में रुककर कुछ देर आत्म-विवेचन करें, समीक्षा करें व फिर आगे बढ़ें. यदि जरूरत हो तो उपायों में बदलाव या सुधार लाएं, ताकि लक्ष्यों की प्राप्ति समय-सीमा में सुनिश्चित हो.

टीम निर्माण :

बैंकिंग उद्योग सेवा उद्योग है. हमारी सेवा, हमारी योजनाएं हमारे उत्पाद हैं. हमारे कर्मचारी हमारे उत्पाद के उपादान हैं. इन लोगों के माध्यम से समाज के विभिन्न तबकों के लोगों तक बैंक की सेवाओं को सुचारू रूप से पहुंचाना हमारा ध्येय है. अतः इस प्रक्रिया के प्रारंभ से लेकर अंतिम बिंदु तक हमारी सारी प्रक्रिया लोगों के इर्दगिर्द घूमती है, लोगों से ही जुड़ी है. टीम निर्माण के लिए सबसे अहम कड़ी है, अपने कार्मिकों की क्षमताओं का सही आकलन व तदनुसार कार्य का आबंटन. इसलिए प्रत्येक कर्मचारी को सतर्क व सजग रहकर समग्र प्रक्रिया की एक अहम कड़ी के रूप में अपना कार्य करना होता है. इसके महत्व को समझकर जितनी मजबूती से दूसरी कड़ियों से तालमेल या समन्वय बिठाकर अपनी सेवा प्रदान करेंगे, कार्य-संपादन में उतनी ही सफलता प्राप्त होगी.

संस्था में कार्मिकों की प्रकृति में भिन्नता होती है :

1) कुछ लोग तत्काल नेतृत्व की सोच के अनुसार सोचते हैं और साथ हो लेते हैं.
2) कुछ लोग लचीले विचार वाले होते हैं, जो कुछ देर से ही समझ कर साथ हो लेते हैं.
3) कुछ रूढ़ विचार वाले होते हैं, जो नये विचारों को स्वीकार नहीं करते हैं, पर यथास्थिति को बनाये रखने में विश्वास रखते हैं.

4) चौथे प्रकार के लोग उदासीन होते हैं, जिनकी सहभागिता प्रायः न के बराबर होती है.

उपर्युक्त संवर्गों में से जिस संस्था में 1, 2 संवर्ग के लोगों की संख्या अधिक है, वहां माहौल अच्छा होने के साथ ही सफलता शीघ्र प्राप्त होती है. 3, 4 संवर्ग के लोगों को 1, 2 के संवर्ग में लाना बड़ी चुनौती है और नेतृत्व का भरसक प्रयास यह होना चाहिए कि अधिक से अधिक लोगों को 1, 2 संवर्ग में लाया जाए.

व्यक्तिगत पहचान व साझेदारी :

सभी में व्यक्तिगत पहचान की ललक होती है, अतः प्रतिभा की पहचान के साथ उनके द्वारा उत्कृष्ट कार्यपरिणाम के लिए प्रोत्साहन व पहचान की समय-समय पर आवश्यकता पड़ती है. इनसे कार्मिकों का उत्साहवर्धन होता है, साथ ही टीम से जुड़ाव और मजबूत होता है.

नवीन सोच, बेहतर परिणाम :

नई सोच, नयी विधाओं का आदान-प्रदान करें, ताकि उनमें नये परिवर्तनों को स्वीकार करने की उत्कंठा का विकास हो सके. मानसिक खुलापन या विस्तार, जिसमें कल्पनाशक्ति का विकास हो, बड़े सपने देखने के आदी हों. किसी भी कार्य में टीम के सदस्यों के बीच आपसी रिश्तों का दृढ़ व सूझबूझ से मजबूत होना अत्यंत आवश्यक है, ताकि किसी भी सदस्य से रुकावट के बारे में सकारात्मक चर्चा कर समाधान के लिए उचित मार्ग या उपाय निकाले जा सकें.

धरातल पर हम सभी इन्सान हैं, सबके विचार, नजरिए, कार्यशैली व समस्या के समाधान के तरीके आदि भिन्न-भिन्न होंगे. इस दिशा में कुशल नेतृत्व के लिए मानवीय धरातल पर आपसी विचारों में एकरूपता तलाशने की भूल नहीं करनी चाहिए. भिन्न-भिन्न विचारों के बीच की दूरी को यथासंभव दूर कर अपने अनुभव से एक सर्वमान्य दिशा को तय करना है, ताकि सभी की शक्तियों का संचालन सकारात्मक तरीके से लक्ष्यों के अनुरूप हो सके.

समय - प्रबंधन :

समय-सीमा की पाबंदी बहुत जरूरी है, पूरी टीम को इसका महत्व समझाना मुखिया की जिम्मेदारी है. सावधानी यह बरतनी होगी कि कितना समय, कितनी देर तक विचारों में समय व्यतीत करना है. इसका कोई निर्धारित मापदंड नहीं है, फिर भी कार्य की दिशा तय करने से पहले न्यूनतम विचारविमर्श कर लेना चाहिए, ताकि सबको लगे कि उनके विचारों को अहमियत दी गयी है. अंत में मुखिया

के द्वारा जो रास्ता बताया जाये या जो रास्ता तय हो, उसके प्रति सबका विश्वास जागे.

कुशल नेतृत्व के लिए यह भी आवश्यकता है कि कार्य की समय-सीमा अपनी टीम को भली-भाँति समझा दें. कई बार प्रकिया में उलझकर विचार-विमर्श / सलाह करते-करते बहुमूल्य समय निकल जाता है और समय-सीमा का पालन नहीं हो पाता. यह कमी है जो प्रायः फील्ड-स्तर एवं प्रशासकीय-स्तर पर बहुतायत में होती है. अतः इस बारे में सतर्कता बरतनी है कि प्रक्रिया की कठिनाइयों पर विचार-विमर्श आदि में कम से कम समय लगाया जाये, निर्धारित समय-सीमा में प्रत्येक कार्य को करने की संस्कृति का संचार होना चाहिए.

इसी प्रकार **तत्परता** सफलता का मूलमंत्र है, चाहे कार्य हो या न हो, इसकी सूचना प्रमुख को तत्परता से दी जानी चाहिए, ताकि भविष्य की योजना की रूपरेखा तय की जा सके.

कार्य का अनुश्रवण :

कार्य आबंटन के बाद समय-समय पर मानिटरिंग की जाये, पर एक सीमा तक स्वतंत्रता भी दी जाये, ताकि कार्मिक अपनी प्रतिभा का भी इस्तेमाल करें. कुछ नया सोचने तथा करने का मौका उसे भी मिले. इससे प्रत्येक क्षेत्र में उनकी मानसिकता में सृजनात्मकता का समावेश होगा. कार्य देकर उन में विश्वास जगायें, परंतु बीच-बीच में जांच अवश्य कर लें, ताकि यदि उपायों में सुधार की आवश्यकता हो तो उस दिशा में सोचा जा सके. प्रत्येक सफलता को उत्सव के माहौल में मनाना चाहिए, ताकि कार्य-परिवेश में ताजगी व स्फूर्ति आये. इससे नयी ऊर्जा का संचार होता है. उनके व्यक्तिगत जीवन में या उनके कैरियर को बढ़ाने में सार्थक मदद करना भी नेतृत्व का फर्ज बनता है.

प्रत्यायोजन :

टीम के प्रत्येक सदस्य को यह महसूस होना चाहिए कि टीम में सामूहिक रूप से तथा व्यक्तिगत रूप से भी उसकी भूमिका महत्वपूर्ण है. टीम के सदस्यों को अपनी जिम्मेदारी व क्षमता बढ़ाने का भरपूर मौका दिया जाना चाहिए. किसी की अनुपस्थिति में स्वयं जिम्मेदारी लेकर उसके कार्य करने की पहल/क्षमता का उनमें विकास होगा. इससे संस्था को लाभ के साथ ही व्यक्तिगत विकास भी होगा और एक महत्वपूर्ण आवश्यकता यह कि किसी विशेष कार्य में महारथ हासिल कर विशेषज्ञ और अपरिहार्य बनाने के स्थान पर उन्हें अन्य दायित्व सौंपे जायें. कार्यों में

अदला-बदली करें, ताकि उन्हें भी नये कार्य सीखने का मौका मिले, साथ ही नये तरीकों की तरफ रुझान बढ़े. सदैव टीम को यह महसूस होना चाहिए कि उनके प्रत्येक कार्य में संस्था के साथ ही उनका विकास भी निहित है.

निष्कर्ष :

कुल मिलाकर नेतृत्व एक सारथी की भूमिका निभाता है, जो अपनी टीम के सदस्यों को सही दिशा में संचालित करता है. इस प्रकार इस 'सप्लाई चेन' सिस्टम के माध्यम से अत्यंत कुशलता व निपुणता के साथ कार्य करने में ही संस्था का हित निहित है, चूंकि यह चेन मानव निर्मित है, अर्थात् लोगों से बनी चेन है, चार मशीनों का संयोजन नहीं है. अतः कार्य के दायरे से ऊपर उठकर उच्चतर मानवीय संबंधों के तहत आपसी अपनत्व की आवश्यकता है. इससे एक बेहतर कार्य संस्कृति का निर्माण होता है, जिससे संस्था के प्रत्येक कर्मचारी को निश्चित ही फायदा पहुंचता है. अतः जिस टीम में आपसी तालमेल, रिश्ते जितने आत्मिक होंगे, उसकी सफलता का प्रतिशत भी अधिक होगा.

यह भी सत्य है कि टीम का प्रत्येक सदस्य अपने-आप में प्रतिभासंपन्न होने पर भी यदि टीम को उचित मार्गदर्शन प्राप्त नहीं होता तो टीम की सफलता संदिग्ध रहती है. ऐसे में कुशल नेतृत्व की आवश्यकता पड़ती है, जो समुचित दिशा प्रदान करे, नये विचारों से लक्ष्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करे और सभी परिस्थितियों में टीम में अंदरूनी शक्ति को संचालित करे.

अक्सर यह भी देखा गया है कि टीम के सभी सदस्य व्यक्तिगत रूप से सर्वोत्तम हैं, पर अनुरूप नतीजा नहीं मिलता, जबकि औसत प्रतिभावाली टीम के सक्षम नेतृत्व के कारण अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल हो जाती हैं. प्रखर बुद्धिमत्ता वाले टीम सदस्यों में ईर्ष्या, मनमुटाव, द्वेष की भावना पनपना स्वाभाविक है. परंतु यहीं कुशल नेतृत्व की पहचान उभरकर आती है, जो इस नकारात्मक सोच को सकारात्मक ऊर्जा में परिवर्तित कर टीम को आगे बढ़ाये.

यह सच है कि हम सब संस्था के लिए कार्य करते हैं, परंतु यह भी सच है कि टीम के मुखिया को टीम का हर सदस्य प्रबंधन का प्रतीक मानता है. अतः जितना संगठित, प्रगतिशील व संवेदनशील नेतृत्व होगा, टीम के मनोबल, उत्साह व कार्यक्षमता में उतनी ही वृद्धि होगी. कुशल नेतृत्व व सक्षम टीम एक दूसरे के पूरक हैं, दोनों की प्रभावी भूमिका से संस्था को सफलता निस्संदेह प्राप्त होगी.

एम.के. पटनायक, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई में उप महाप्रबंधक (कार्मिक) हैं.

ज्ञान प्रकाश

मौन : संवाद का एक प्रभावशाली रूप

इंसान स्वभावतः मौन होता है. मौन इंसान की फितरत है. मौन रहकर वह धीर, गंभीर और चिंतनशील प्रतीत होता है.मौन एक मुद्रा है. इसके साथ अभिव्यक्ति के लिए उसकी मुस्कराहट, चेहरे के हाव भाव, आंखों की चमक, पलकों की हरकतें और गर्दन की मुद्राएं संकेत हैं. इन संकेतों से इंसान मौन रहकर भी अपनी सहमति, स्वीकृति, असहमति, खुशी और नाराजगी व्यक्त कर सकता है. यह जरूरी नहीं कि अभिव्यक्ति के लिए हर प्रसंग पर कुछ बोल कर ही भाव प्रकट किए जाएं.

यह सच है कि भाव प्रकट करने के लिए अनिवार्यतया शब्दों की आवश्यकता नहीं होती, पर अपनी बात कहने के लिए, संवाद के लिए शब्दों का महत्व तो है. संवाद का स्वरूप है कि आपस में की जाने वाली बातचीत से विचारों का परस्पर आदान प्रदान होना. यदि विचारों का आदान प्रदान संकेतों और हाव भावों से पर्याप्त ढंग से हो जाता है तो उसमें अनर्गल वार्तालाप की गुंजाइश नहीं होती. क्यों कि प्रकट शब्द ही अधिक मधुर और कर्कश रूप में व्यक्त हो सकते हैं. मौन संवाद हमेशा शालीन और सुखद होता है.

मौन अपने आप में एक सशक्त भाव है. मौन में इंसान की शक्ति, सूझबूझ, गंभीरता सब छुपे होते हैं.जो जितना मौन है, वह अंदर से उतना ही ऊर्जावान और सक्रिय है, क्योंकि उसने अपनी ऊर्जा बेवजह बोलकर नहीं गंवाई है. मौन स्वभाव के व्यक्ति का प्रभाव अधिक और निर्णय असरकारक होते हैं.यह एक खूबी है कि ऐसे व्यक्ति हर स्थिति को अपने काबू में कर पाने में समर्थ हो जाते हैं.

कम बोलने वाले इंसान की बातें निर्णायक व दमदार हुआ करती हैं.लोग ऐसे व्यक्तियों को सुनने के लिए लालायित रहते हैं. कम शब्दों में बहुत कुछ कह देने

की कला में माहिर ऐसे व्यक्तित्व अपने कारोबार को सफल ढंग से अंजाम देने में कामयाब देखे गए हैं. कैसा भी मामला हो, शिकायत हो, हर पक्ष को सुनकर अपनी निर्णायक बात रख देने की खूबी इनमें होती है. सच व वास्तविकता को धरातल पर लाने से स्थितियां नियंत्रण में हो जाती हैं, क्योंकि सच सामान्य व सहज अभिव्यक्ति है. इसके लिए बनावट की जरूरत नहीं होती. झूठ शरीर में नाड़ियों को झंकृत करता है. सच में शरीर का हर भाग सहज बना रहता है. अंदर कोई अस्वाभाविक हलचल, ऊहापोह नहीं होती.

मौन, ध्यान का एक रूप है. पर समानार्थी नहीं. मौन चेतना है और ध्यान शून्य है, अवचेतन है. ध्यान के दौरान हमें केवल वही केन्द्र बिन्दु महसूस होता है जिस पर ध्यान केन्द्रित हो. ध्यान हमारे शालीन स्वभाव की पराकाष्ठा है. ध्यान तक पहुंचना एक कड़ी साधना है. निरंतर अभ्यास से ही यह अवस्था पाई जा सकती है. मौन हमारी दिनचर्या का एक अभिन्न हिस्सा बन गया है. किसी भी बातचीत के निर्णय के लिए मौन पद्धति बेवजह के प्रतिकूल प्रभावों से बचाती है. हमारी निजी जिंदगी में भी मौन की अहम भूमिका होती है. दाम्पत्य व पारिवारिक उलझनों, विरोधाभासों में मौन के जरिए सही हल व सहज समाधान निकाले जा सकते हैं.

मौन, शांत या चुप होने का पर्यायवाची कतई नहीं है. तीनों के भावार्थ में अंतर की महीन सी लकीर स्पष्ट झलकती है. मौन एक जीवंत व सक्रिय मनोभाव है. मौन के समय आस-पास की हर हरकत आत्मसात होती है. हर क्षण चौकन्ना होता है. उसकी प्रतिक्रिया या जवाब के लिए अंदर ही अंदर मंथन चलता है. यह एक सजीव प्रक्रिया है.

शांत होने का भाव अपने आस-पास के वातावरण को विस्मृत कर देने से है. सब अच्छा-बुरा भूल कर निश्चेत भाव से हर बात को पी जाना. उसके लिए जवाब मंथन जरूरी नहीं. सुना और चला गया. स्वयं को तनाव मुक्त रखने वाले शांत हो जाने की क्रिया अपनाते हैं. पर यह मौन से अधिक कठिन और सहनशील होती है.

चुप रहने का भाव प्रसंग को बढ़ावा न देने की अवस्था है. इसमें अपनी भूल की स्वीकारोक्ति या दबाव का भय, स्वयं को अक्षम, कमजोर समझने व निरुत्तर हो जाने का भाव प्रकट होता है. क्रोध में हम शांत होने की सलाह देते हैं, चुप रहने की नहीं. चुप हो जाना समर्पण का ही स्वरूप है. मौन और चुप में यही बारीक फर्क है. मौन साहस से बात सुन सकता है. चुप असमर्थ हो जाता है. चुप प्रसंग को टाल देने का रुख अख्तियार कर लेता है. जो हर समय समझदारी या समाधानकारक

स्थिति नहीं हो सकती. समझदारी तो प्रसंग का हल निकालने व समाधान का तरीका खोजने में है.

बैंकिंग कारोबार एक सेवा प्रधान उद्योग है. हमारी हर गतिविधि का सरोकार ग्राहक से है, व्यक्ति से है. हमारे कारोबार की शुरुआत ग्राहक से शुरू होकर ग्राहक पर ही खत्म होती है. इसी ग्राहक को ठीक ढंग से संभालने के बीच मुद्रा और हमारा कौशल कार्य करते हैं. तभी तो बैंकिंग को MAN, MONEY & MATERIAL से परिभाषित किया जाता है. इसमें मानव मुख्य भूमिका में है. मुद्रा व मटीरियल गौण हैं. मानव प्रबंधक भी है और ग्राहक भी. इनमें सही सामंजस्य स्थापित कर प्रभावकारी ढंग से कार्यान्वित करने का कौशल बैंकर का है. हम जितनी कुशलता व समझदारी से इसे संभालने में सक्षम होंगे, कारोबार की उन्नत स्थिति भी उसी के अनुरूप परिलक्षित होगी.

ग्राहक का मकसद सदैव लाभ, फायदा या बैंक पर अधिकार जमाने पर नहीं टिका है. उसका अंतिम लक्ष्य है संतुष्टि. जिस जगह उसे संतोषजनक व सम्मानजनक सेवाएं प्राप्त होंगी, वह उसी ओर आकर्षित होता है. ऐसे समय उसे अधिक ब्याज या ऋण पर कम ब्याज का प्रलोभन भी प्रभावित नहीं कर पाता. ग्राहक संतुष्टि के लिए कई भौतिक व अभौतिक साधन हैं. भौतिक, आरामदायक सुविधाएं उसे आकर्षित कर सकती हैं, पर अच्छा वातावरण, शालीन व्यवहार, तत्पर कार्य, परिशुद्ध कार्य शैली उसे अधिक लुभाएगी. और इन सबसे अलग है, उसे यथेष्ट महत्व मिलना. उसकी बात को नजरअंदाज न करना.

जब किसी कारण या सेवा से व्यक्ति असंतुष्ट होता है तो उसे व्यक्त करने के स्वतंत्र तरीके अपनाता है. अपने दुःख व खीज को गुस्से से प्रकट करता है. अनर्गल भाषा व तेज आवाज में क्रोध जताता है. कभी धीरे-धीरे बड़बड़ाता हुआ कर्मचारी या व्यवस्था को कोसता है तो कभी उपलब्ध व्यवस्था के माध्यम से मौखिक या लिखित शिकायत करता है. यह उसे मिली असंतुष्ट सेवाओं/अवांछित व्यवहार की स्वाभाविक प्रतिक्रिया है. वह किसी उद्देश्य या मकसद के साथ हमारे पास आता है और उसे अन्यथा अप्रत्याशित प्रतिकूल स्थिति मिलती है, जो उसके लिए निःसंदेह पीड़ाजनक और अप्रिय है.

ऐसे असंतुष्ट व्यक्ति के भावों को समझ पाना और उसे उचित ढंग से हैंडल करना ऐसे इंसान का ही काम है, जिसमें मौन होकर उसकी बात सुन सकने का धैर्य हो, हौसला हो. क्रोधित व्यक्ति क्रोध में बहुत कुछ अनर्गल, अवांछित विचार उगल देता है. यदि उसकी बात सुने बगैर हम सही गलत पर तर्क-वितर्क जारी कर दें तो

उसका क्रोध व पीड़ा और बढ़ जाते हैं.ऐसे समय वही निर्णायक क्षण होता है, जब उसे मौन रहकर सुना जाए. उसे यह कतई न महसूस हो कि उसे नजरंदाज किया जा रहा है. उसे गंभीरता से नहीं लिया जा रहा. या उसकी बात पर गौर नहीं किया जा रहा व बात को मखौल के रूप में लिया जा रहा है. समझदारी तो यही है कि जब तक वह अपनी बात पूरी तरह न कह दे, उसे बीच में टोकना, उसकी बात भंग करना उसे अपमान लगता है. और स्वभावतः आदमी स्वयं को अपमानित महसूस करने पर अधिक उग्र और पीड़ित महसूस करता है. इसके बाद उसके मन में गलत इरादों के साथ कदम उठाने का दुस्साहस पनप जाता है. यह स्थिति केवल उसकी बात धीरज से, मौन व ध्यान से सुनकर संभाली जा सकती है. यही मौन ऐसी परिस्थिति के बीच संवाद का एक सशक्त माध्यम व कारगर उपाय सिद्ध होगा.

यह सच है कि मौन रहकर, ध्यान से असंतुष्ट की बात सुनना, है तो बड़ी साधना व कौशल का काम, लेकिन यह उपाय या यह सूझबूझ आपको तनाव से दूर रखने और समय की बरबादी पर अंकुश रखने के लिए कारगर युक्ति है. मौन होकर बात सुनने का यह अर्थ कतई नहीं कि आप उसकी हर बात स्वीकार कर रहे हैं. सच मान रहे हैं.यह कोई समर्पण का भाव नहीं है, न ही किसी भय की अभिव्यक्ति. यह असंतुष्ट की शिकायत व पीड़ा समझने का शालीन तरीका है और प्रभावशाली भी. मौन हमें बहस व कुतर्कों के झंझट से मुक्त रखता है. बेवजह तनाव और आवेश को नियंत्रित रखता है. मौन हर तरह से हितकारी और प्रभावकारी ढंग है. मौन के दौरान हम सामान्यतया मुस्कराहट या स्वीकारोक्ति के संकेत देते हैं. इससे असंतुष्ट को राहत मिलती है. वह स्वयं को बेहतर अवस्था में महसूस करता है. वह मानता है कि उसे गंभीरता से लिया गया है और उसकी बात को नजरअंदाज नहीं किया जा रहा है. ये उसके लिए सुखद क्षण हैं. उस वक्त वह परिणाम की अपेक्षा से व्याकुल नहीं होता. उसे इस बात की संतुष्टि होती है कि उसकी बात को महत्व दिया गया, शांति से सुना गया. यह उसका उग्र रवैया बदलने का अचूक मंत्र साबित होता है.

इसी मौन के कारगर तरीके से ही ग्राहक संतुष्टि के लिए ''YES-BUT'' फार्मूला अधिक प्रभावी रूप से प्रचलन में है. आप सामने वाले की हर सही व गलत शिकायत / सुझाव को ''हाँ'' की मौन स्वीकृति से ग्रहण करते जाइए और उसकी बात पूरी होने पर उसे समझाइए कि आप का हर तर्क/विचार आपकी दृष्टि से सच / ठीक / उचित प्रतीत होता है, BUT या लेकिन हकीकत और वास्तविकता में व्यवस्थाएं इस तरह से हैं. ऐसे माहौल में वह उचित व सच को मानने से नहीं कतराएगा, बल्कि कुछ सही जानकारी पाकर धन्य होकर ही जाएगा.

इस बात को हमें निश्चित रूप से गंभीरता से स्वीकारना होगा कि जानकार, समझदार और स्वभावतः सुशील व्यक्ति ही मौन जैसी तपस्या में सफल हो सकता है. अन्यथा अज्ञानता, जानकारी विहीन व रूखे स्वभाव वाले व्यक्ति मौन की साधना करने में सक्षम नहीं हो सकते. वे मौन की बजाय तर्क-वितर्क, बहस और चेलैन्ज की भाषा अधिक बोलते हैं. साथ ही स्वयं को अनुकूल स्थितियों में पाकर अधिक समझदार होने का गुरूर पाले रहते हैं और निःसंदेह यह तरीका या ऐसा रवैया किसी भी सेवा प्रधान उद्योग के लिए हित कारक नहीं है.

हमें इस बात का सदैव ध्यान व अहसास होना चाहिए कि हम जो पारिश्रमिक पाते हैं, वह किस योग्यता व कौशल के लिए है. बहस, झगड़ा और चेलैन्ज / चेतावनी की भाषा के लिए तो कतई नहीं. यह तो ऐसी सूझबूझ, दक्षता व चातुर्य के लिए है कि अनजान लोगों को आप संस्थान के विश्वसनीय, आत्मीय, सक्षम व चौकस प्रहरी के रूप में परिलक्षित हों. वे आपसे जुड़ सकें, जुड़े रहें. ऐसे ही गुणों से संस्था के प्रति लोगों का लगाव बढ़ेगा.इसकी छवि लोकप्रिय बनेगी तथा लोगों के बीच इसके प्रति साख बढ़ेगी. यह ट्रस्ट बढ़ेगा कि उनका इस संस्था के साथ जुड़ना अधिक सुरक्षित, विश्वसनीय व गौरवपूर्ण है.

कर्मचारियों में मौन का प्रभावकारी गुण नैसर्गिक स्वभाव के रूप में विद्यमान होना चाहिए. यह उस संस्था के अच्छे संस्कारों, संस्कृति का प्रतिबिम्ब है. संस्था अमूर्त है, हम उसे अपने क्रिया कलापों की शैली-स्वभाव से जीवंत और संवेदनशील बनाते हैं और संस्था की जनमानस में यही पहचान अच्छी गुडविल का काम करती है. अतः मौन हर स्थिति में कारगर व विषम परिस्थितियों में संवाद का एक सशक्त माध्यम है.

ज्ञान प्रकाश, क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, कोलकाता में सहायक महाप्रबंधक हैं.

अनुपम मेहरोत्रा

तूफानों में जलती शमा - सकारात्मक सोच

सकारात्मक सोच वह दृष्टिकोण है, जिसमें किसी भी व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति, घटना या परिवेश के उजले पक्ष से जुड़ने की प्रवृत्ति होती है. इस दृष्टिकोण को धारण करने वाला व्यक्ति विकास, उन्नति, सफलता, अनुकूलता और प्रसन्नता की भाषा बोलते हुए हर परिस्थिति व कार्य के सुखद परिणामों की अपेक्षा करता है. सकारात्मक सोच ज़िन्दगी जीने का वह नवोन्वेषी ढंग है, जो निराशा को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता और मुश्किलों के हर घने, काले, डरावने बादल में भी उम्मीद की चमकीली रेखा तलाश लेता है. वह जिन्दगी के सबसे दुःखदायी एवं निराशापूर्ण लम्हे का स्वागत भी यह कह कर करता है कि अब इससे बुरा कुछ नहीं हो सकता, अगला जो भी होगा इससे बेहतर ही होगा..... और ज़िन्दगी की राह पर फिर चल पड़ता है.

सकारात्मक सोच - एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण :

इंसान की सोच से उसकी मानसिकता तैयार होती है, मानसिकता उसके कर्मों को प्रभावित करती है और कर्म ही परिणामों का आधार है. सकारात्मक परिणामों की पृष्ठभूमि सकारात्मक सोच से ही तैयार होती है. शायद यही कारण है कि हमारे अनुभवी पूर्वजों को हमने कहते सुना है कि ''इंसान जैसा सोचता है, वैसा ही हो जाता है'', अर्थात् शुभ एवं सकारात्मक परिणामों के लिए सकारात्मक सोच अत्यंत आवश्यक है.

इस दृष्टिकोण को कुछ उदाहरणों से और स्पष्ट किया जा सकता है.

मान लीजिये, किसी व्यक्ति को नौकरी के लिए साक्षात्कार में उपस्थित होना है. यदि यह व्यक्ति अपनी सफलता के प्रति आशावान नहीं है और उसका मानना है

कि वह उस पद के लिए न सिर्फ अनुपयुक्त है, बल्कि दूसरे आवेदक उससे बेहतर, उससे ज्यादा पढ़े लिखे और उससे ज्यादा उपयुक्त हैं तो ऐसे व्यक्ति का मनोबल शुरुआत से ही कमज़ोर हो जायेगा. साक्षात्कार के लिए उसकी तैयारी धीमी पड़ जायेगी और वास्तविक साक्षात्कार के समय वह स्थिति का सामना गिरे हुए मनोबल के साथ, बिना पर्याप्त योजना एवं तैयारी से करेगा. परिणामस्वरूप उसके चुनाव की संभावना भी अत्यंत क्षीण होगी.

दूसरी ओर जो व्यक्ति स्वयं को योग्य, कुशल एवं प्रस्तावित पद के लिए उपयुक्त मानता है, वह साक्षात्कार में सफलता के प्रति आरंभ से ही आशावान होगा और अपनी इस अपेक्षा को वास्तविकता में बदलने के लिए प्रयासरत हो जायेगा. ऊँचे मनोबल, पर्याप्त योजना एवं तैयारी के साथ वह साक्षात्कार में उपस्थित होगा और अपने व्यक्तित्व से दूसरों को प्रभावित करते हुए वह सफलता को प्राप्त करेगा.

उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में परिणाम वैसे ही थे, जैसी कि व्यक्ति की अपेक्षा एवं सोच.

प्रसिद्ध विद्वान एवं उद्योगपति हेनरी फोर्ड का कहना था, ''जब तुम सोचते हो कि तुम सफल हो सकते हो और जब तुम सोचते हो कि सफल नहीं हो सकते हो, दोनों ही परिस्थितियों में तुम ठीक सोचते हो''. कहने का अर्थ यह है कि सफल होना या न होना, हमारी सकारात्मक या नकारात्मक सोच पर निर्भर है.

एक नया - नया साइकल चलाना सीखा हुआ व्यक्ति खाली सड़क के बीचों-बीच रखे हुए पत्थर को देख भयभीत हो जाता है. उसे डर है कि उसकी साइकल कहीं उस पत्थर से टकरा न जाये. वास्तविकता में वह साइकल को थोड़ा सा बायें या दायें मोड़ कर उस पत्थर से बच सकता है, किंतु पत्थर से टकराने का भय उसकी सारी सकारात्मक शक्तियों को सोख लेता है और वह साइकल को बायें या दायें मोड़ने के विकल्प को भूलकर यंत्रवत, अपनी नकारात्मक सोच के वशीभूत, पत्थर की ओर ही खिंचा चला जाता है और अंततः वही होता है, जिसका उसे डर था, अर्थात् वह पत्थर से जा टकराता है.

एक अत्यंत व्यावहारिक उदाहरण वर्तमान वैश्विक आर्थिक मंदी का दिया जा सकता है, जिसके संबंध में अर्थशास्त्रियों का अविवादित मत है कि वर्तमान मंदी की तीव्रता एवं उसकी अवधि निर्भर करेगी, बाजार एवं आर्थिक विकास के प्रति व्यवसायियों की धारणा पर! जैसे-जैसे भविष्य के प्रति बाजार की धारणा सुदृढ़ होती जायेगी, मंदी का दौर समाप्त होता जायेगा, किन्तु जब तक भविष्य के प्रति बाजार

की धारणा कमजोर है, तब तक केन्द्रीय बैंकों द्वारा उठाये गये कोई भी मौद्रिक उपाय कारगर साबित नहीं होंगे. ऐसी स्थिति में भविष्य के प्रति बाजार की धारणा को सुदृढ़ करने के लिए सरकार को ही वित्तीय उपाय प्रयोग में लाने पड़ते हैं. कहने का तात्पर्य यह है कि आर्थिक बाजारों एवं अर्थव्यवस्थाओं का उतार-चढ़ाव भी आम जनता की सकारात्मक या नकारात्मक धारणाओं एवं अपेक्षाओं पर निर्भर होता है. जैसी धारणा वैसा बाजार का रुख.

सकारात्मक सोच के प्रकार :

सकारात्मक सोच भी दो प्रकार की हो सकती हैः

1 सक्रिय [ACTIVE]
2 निष्क्रिय [PASSIVE]

सकारात्मक सोच के संबंध में आधे भरे एवं आधे खाली गिलास का उदाहरण अक्सर दिया जाता है. गिलास के आधे भरे हिस्से को देखने वाला व्यक्ति सकारात्मक सोच वाला एवं आधे खाली हिस्से को देखने वाला व्यक्ति नकारात्मक सोच वाला कहलाता है.

आज के प्रगतिवादी परिवेश में इस उदाहरण को कुछ अलग ढंग से समझने की आवश्यकता है.

किसी व्यक्ति के पास जो कुछ भी उपलब्ध है, उस प्रारब्ध से यदि वह संतुष्ट है तो उसे सकारात्मक सोच वाला व्यक्ति कहा जायेगा. यह वह व्यक्ति है, जो गिलास के आधे भरे हिस्से को देख रहा है और उतने से ही संतुष्ट है. इस प्रकार की सकारात्मक सोच को निष्क्रिय सकारात्मक सोच की श्रेणी में रखा जाना चाहिए. इस सोच में सकारात्मक भाव तो है, किन्तु अपनी स्थिति को और बेहतर बनाने के प्रयास की पूर्ण अनुपस्थिति है. इस सोच में विकास एवं प्रगति के अवयवों का अभाव है. सोच सकारात्मक होते हुए भी निष्क्रिय है.

दूसरी ओर गिलास के खाली हिस्से को देखने वाला व्यक्ति, *यदि उसके खालीपन से निराश नहीं है* तो उसे सकारात्मकता की उच्चतर श्रेणी अर्थात् सक्रिय सकारात्मक की श्रेणी में रखा जाना चाहिए. ऐसा व्यक्ति अपनी वर्तमान उपलब्धियों (आधे भरे हुए गिलास) को आधार बना कर जगत को और बेहतर स्थान बनाने के प्रयास करता एवं उसके लिए योजनाओं को बनाता प्रतीत होता है. गिलास के आधे खाली हिस्से पर उसकी नजर जाने के पीछे श्रेय है, उसकी सक्रिय रूप से सकारात्मक

मानसिकता को, क्योंकि वह उस रिक्त स्थान को भी भरना चाहता है. उसकी यह सोच उसे सक्रिय सकारात्मक सोच की श्रेणी में ले आती है, जो कि एक उच्चतर श्रेणी की सकारात्मकता है.

विश्वास और अंधविश्वास - सोच का फर्क :

विश्वास और अंधविश्वास दोनों का ही आधार कोरी मान्यता है, जो कि तर्क के यथार्थ से परे है. तार्किक रूप से दोनों को भी साबित नहीं किया जा सकता. तथापि, दोनों में जमीन - आसमान का फर्क है और यह फर्क उनसे जनित भावनाओं पर आधारित है. एक सकारात्मक दृष्टिकोण, जो साहस दे, मनोबल को ऊँचा उठाये और आत्म विश्वास से भर दे, वह विश्वास की श्रेणी में रखा जाता है. दूसरी ओर एक नकारात्मक सोच जो शंका, भय और गतिहीनता को जन्म दे, अंध-विश्वास कहलाती है. 'बिल्ली का रास्ता काटना' किसी अशुभ घटना का संकेत मान, आगे न बढ़ना अंध-विश्वास है, किन्तु इसी परिस्थिति में यह सोच कि ईश्वर का नाम लेकर आगे बढ़ने से कोई भी संकट दूर हो जायेगा, एक विश्वास है.

सकारात्मक सोच और प्रार्थना :

अपनी दिनचर्या के दौरान हम अनेक बार जाने-अनजाने में प्रार्थना भी करते हैं. ध्यान लगा कर सच्चे मन से की गई प्रार्थना सकारात्मक सोच को एक विशेष बल देती है. विश्वास की शक्ति से सभी परिचित हैं. कहा जाता है कि आत्मविश्वास के बल पर इंसान कुछ भी कर सकता है. आत्मविश्वास जागृत करने में समस्या यह है कि इंसान, जो स्वयं की शारीरिक और मानसिक दुर्बलताओं से परिचित है, स्वयं पर एक सीमा से अधिक विश्वास नहीं कर पाता. ऐसे लोग बहुत कम हैं, जो स्वयं पर असीमित विश्वास रखते हैं.स्वयं पर एक सीमा से अधिक विश्वास करना अगर कठिन हो जाए, या अतार्किक लगे, तो इंसान को ईश्वर पर विश्वास करना चाहिए.

हमारी कल्पनाओं में ईश्वर वह सर्वशक्तिमान सत्ता है, जिसके लिए कुछ भी असंभव नहीं है. ऐसी सर्वशक्तिमान सत्ता के प्रति असीमित विश्वास जागृत करना अपेक्षाकृत आसान है. इस प्रकार के अटूट एवं गहरे विश्वास से सकारात्मक ऊर्जा का प्रचंड असीमित संचार पैदा किया जा सकता है. इस प्रकार की सकारात्मक ऊर्जा हमारे उस असीमित विश्वास से उपजती है, जो हम स्वयं पर कदाचित न कर सकें, किन्तु ईश्वर पर अवश्य कर सकते हैं. इस ऊर्जा का आधार एक सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ एवं सर्वव्यापी सत्ता के प्रति अटूट निष्ठा है, जिसकी भूमि में प्रार्थना के बीज निश्चित

रूप से अंकुरित होंगे. इतने गहन विश्वास के साथ की गई प्रार्थना उच्च शक्ति की सकारात्मक ऊर्जा को जन्म देती है और असंभव भी संभव हो जाता है.

कहा जाता है कि जब दवा काम करना बंद कर दे तो दुआ का सहारा लेना चाहिए. किसी पहुँचे हुए संत, फकीर या महात्मा द्वारा अपने स्पर्श मात्र से असाध्य रोगों को भी समाप्त कर देना कोई चमत्कार नहीं है.ऊपर से चमत्कारिक दिखने वाली इस प्रक्रिया का वैज्ञानिक आधार सकारात्मक ऊर्जा का एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में प्रवाह है. नार्मन विन्सेंट पॉल जैसे विद्वान का कहना है कि असंभव को संभव बनाने के लिए इंसान को प्रार्थना का सहारा लेना चाहिए.मन में बार-बार यह कहना चाहिए कि ईश्वर की मदद से मैं कुछ भी कर सकता हूँ, क्योंकि वह सर्वशक्तिमान है और वही मुझे मेरे गंतव्य को प्राप्त करने की शक्ति देता है.

प्रार्थना और कर्म :

यहां यह स्पष्ट करना अति आवश्यक है कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रार्थना के साथ कर्म का सम्मिलित होना आवश्यक है. प्रार्थना की शक्ति कर्म के माध्यम से परिलक्षित होती है. वास्तव में प्रार्थना हमारे कर्मों को अतुलनीय शक्ति एवं उपयुक्त दिशा प्रदान करके हमारे लक्ष्य की प्राप्ति में हमारी मदद करती है.

इसे एक उदाहरण से समझ सकते हैं. दो बच्चों को स्कूल पहुंचने में देर हो गई. 10 मिनट का रास्ता तय करना था और 5 मिनट शेष बचे थे. एक बच्चे ने दूसरे से कहा ''सुना है प्रार्थना से असंभव कार्य भी संभव हो जाता है, अतः चलो प्रार्थना करें, शायद इस तरह हम स्कूल समय से पहुँच जायें''. दूसरे बच्चे ने पहले बच्चे की विचारधारा में सुधार करते हुए कहा, ''सिर्फ प्रार्थना नहीं, चलो हम दौड़ना शुरू करते हैं और साथ साथ प्रार्थना करते हैं कि हे ईश्वर! हमें स्कूल समय से पहुँचने में मदद करो''.

यह छोटी सी घटना प्रार्थना और कर्म के अद्‌भुत मिलन और उससे संभव चमत्कारों का दर्पण है.

समस्याएं और सकारात्मक सोच :

इंसान के होश संभालने से लेकर इस दुनिया को उसके अंतिम प्रणाम तक, समस्याएं घेरे रहती हैं. कहा जाता है कि समस्याएं कभी समाप्त नहीं होतीं, सिर्फ रूप बदलती हैं. बचपन से युवावस्था, युवावस्था से प्रौढ़ावस्था और प्रौढ़ावस्था से वृद्धावस्था तक एक के बाद एक नयी-नयी समस्याएं जन्म लेती रहती हैं. इस प्रक्रिया

में यद्यपि पुरानी समस्याएं समाप्त होती रहती हैं, किन्तु नयी समस्याओं की नकारात्मकता में उलझ कर हम सुलझनेवाली समस्याओं का जश्न मनाना भूल जाते हैं.

बचपन में पढ़ाई और स्कूल जाना एक समस्या होती थी और हम जल्दी बड़े होना चाहते थे. वयस्क होने और नौकरी लगने पर व्यावसायिक जीवन के तनाव एक समस्या बन जाते हैं. इस समस्या के आगे हम अपने बचपन की समस्याओं के खत्म होने की खुशी कभी नहीं मनाते.

अकेले रहने का तनाव और समस्याएं गृहस्थ जीवन के आरंभ होते ही समाप्त हो जाती हैं, किंतु गृहस्थ जीवन की समस्याओं के आगे हम उन पिछली समस्याओं की समाप्ति का हर्ष कभी अनुभव नहीं करते. बचपन में हम बड़े होना चाहते हैं और बड़ा होने पर चाहते हैं कि फिर से बचपन लौट आये. जो आज है, उसकी खुशी न मना कर जो नहीं है, उसके गम में डूबे रहना इंसान की फितरत है. अपने सक्रिय कार्यकाल के दौरान इंसान की सबसे बड़ी समस्या अक्सर कार्य का बोझ और व्यस्तता होती है. सक्रिय कार्यकाल से रिटायर होने पर कार्य न होना और अकेलापन एक समस्या बन जाता है. और तब रहता है अपने सक्रिय कार्यकाल का पूरी तरह आनन्द न ले पाने का मात्र पछतावा.

सारी जिन्दगी हम किसी बड़ी खुशी की तलाश में छोटी-छोटी खुशियों को अनदेखा करते चलते हैं और जब वह बड़ी खुशी हासिल होती है तो कई बार हम उसका आनन्द लेने के लायक नहीं रहते. सच तो यह है कि हर समस्या में कोई न कोई रस छिपा है, जिसे पहचानने, स्वीकार करने और उसका जश्न मनाने की आवश्यकता है.

समस्याओं का अंत मृत्यु का दूसरा नाम है. मृत व्यक्ति को कोई समस्या नहीं है. तो क्या हम मृत होना पसंद करेंगे? हर समस्या के सर उठाने पर हमें खुश होना चाहिए कि हम जीवित हैं, इसीलिए हमारे पास समस्याएं हैं. प्रत्येक समस्या न सिर्फ हमारे जीवित होने की पुष्टि है, बल्कि हमको हमारी श्रेष्ठता साबित करने का अवसर भी देती है.

जिन्दगी की खुशियों और उपलब्धियों का आनन्द अगर हमें मिला है तो उसकी समस्याओं से दो-चार होने का साहस भी हममें होना चाहिए. मशहूर टेनिस खिलाड़ी आर्थर ऐशे कैंसर जैसे गंभीर रोग से पीड़ित था, जिससे बाद में उसकी मृत्यु भी हुई. उसके मित्रों के पत्र उसके पास आते थे, जिनमें से एक ने उसको लिखा

था, ''इतनी खराब बीमारी के लिए पता नहीं भगवान ने तुमको ही क्यों चुना?''. आर्थर ऐशे ने उस पत्र का जवाब कुछ इस प्रकार से दिया: ''समूचे विश्व में लगभग 5 करोड़ बच्चे टेनिस खेलने की शुरुआत करते हैं, जिसमें से केवल 50 लाख टेनिस खेलना सीख पाते हैं, उसमें से लगभग 5 लाख खिलाड़ी टेनिस का चुनाव पेशे के रूप में करते हैं, उनमें से 50 हजार अपनी कुछ पहचान बना पाते हैं. उनमें से 5 हजार ग्रैंड स्लैम प्रतियोगिता तक पहुँच पाते हैं, 50 विम्बलडन तक पहुँचते हैं, 4 सेमी फाईनल तक, 2 फाईनल तक और एक चैम्पियन बनता है. इस प्रक्रिया से गुजरते हुए जब मैं विम्बलडन चैम्पियन बना, और जब विम्बलडन कप मेरे हाथ में था, तब मैंने भगवान से नहीं पूछा था कि 'हे ईश्वर! इस सम्मान के लिए तुमने मुझे ही क्यों चुना'. आज इस दर्द और बीमारी में मैं ईश्वर से कैसे पूछ सकता हूँ कि तुमने इसके लिए मुझे ही क्यों चुना''.

सकारात्मक सोच - एक संक्रामक शक्ति :

वैज्ञानिक तौर पर यह साबित हो चुका है कि हर व्यक्ति के शरीर के चारों तरफ एक और सूक्ष्म ऊर्जा शरीर होता है, जिसे उस व्यक्ति का आभामंडल कहा जाता है. एक सकारात्मक सोच वाले व्यक्ति का आभामंडल भी सकारात्मक ऊर्जा से भरा होता है और वह वातावरण में अन्यत्र बिखरी सकारात्मक ऊर्जा को भी आकृष्ट कर लेता है, जिसका गुणात्मक प्रभाव होता है. परिणामस्वरूप व्यक्ति की सकारात्मक सोच उसके इर्द-गिर्द भी सकारात्मक माहौल का निर्माण करती है; उसके सान्निध्य में आया कोई भी व्यक्ति उसकी सकारात्मकता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता और उसकी स्वयं की सोच भी सकारात्मक होने लगती है. ऐसे लोग मानव संसाधन का कुशल प्रबंधन करते हुए एक प्रभावशाली नेतृत्व प्रदान कर सकते हैं. इसके ठीक विपरीत एक नकारात्मक आभामण्डल वाला व्यक्ति सिर्फ निराशा, समस्या, शोक और असफलता का जीवन जीते हुए अपने सान्निध्य में आये लोगों को भी यही प्रसाद बांटता चलता है.

कुछ भाग्यशाली व्यक्तियों को सकारात्मक सोच कुदरत से सौगात के रूप में मिलती है. किन्तु जिन लोगों को कुदरत का यह उपहार नहीं मिला है, वे भी सतत प्रयासों से धीरे-धीरे सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास कर सकते हैं. ऐसे प्रयास धीरे-धीरे प्रयासरत व्यक्ति के व्यक्तित्व का हिस्सा बन जाते हैं.

ऐसे कुछ प्रयास निम्नलिखित हैं -

1 हर परिस्थिति, व्यक्ति या घटना के सकारात्मक एवं उजले पहलू पर दृष्टि एवं ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास करें.

2 दिन में अधिक से अधिक बार मुस्कुराने के अवसरों को खोज कर उनका इस्तेमाल करें.

3 सदैव आशावादी रहें. 'आशा रास्ते के समान है; लोग चलना शुरू करते हैं और रास्ते बन जाते हैं'.

4 नकारात्मक सोच की व्यर्थता को जानें.

5 यह विश्वास पैदा करें कि सकारात्मक सोच ही सकारात्मक परिणामों को जन्म देती है.

6 स्वयं पर विश्वास रखें.

7 प्रेरणादायक एवं सफल व्यक्तियों की जीवनियां पढ़ें.

8 विचारों को नियंत्रित रखते हुए ध्यान योग का अभ्यास करें.

9 हर स्थिति में प्रसन्नचित रहने का प्रयास करें.

10 ईश्वर पर भरोसा रखें. इंसानी दिमाग की सीमितता ईश्वरीय योजनाओं के रहस्य का अनुमान नहीं लगा सकती. इसीलिए कहा जाता है कि अन्ततः जो कुछ होता है, वही ईश्वर की इच्छा है और उसी में हमारी भलाई छिपी है.

सकारात्मक सोच की दुनिया ही निराली है. निराशा, भय, अंधकार, असफलता आदि इस दुनिया की वह अनजान शख्सियतें है, जिनको सकारात्मक सोच वाला व्यक्ति पहचानता ही नहीं है. आश्चर्य की बात है कि चारों ओर से दुश्मनों से घिरे सैनिक को अपनी अद्‌भुत सकारात्मक सोच के कारण इस परिस्थिति में भी अपनी मृत्यु के बजाये यह सुअवसर नजर आता है कि वह किसी भी दिशा में बिना निशाना साधे भी गोली चलाए तो दुश्मन को मार गिरायेगा!!

सकारात्मक सोच वाले कांटे भी फूलों के आगे सीना तान कर कहते हैं कि देखो हमारी शान, हमें मुरझाने का ख़ौफ़ नहीं! सकारात्मक सोच वाला व्यक्ति आश्वस्त रहता है कि रात का सबसे काला पहर आने वाली सुबह का संकेत है. हर डूबते सूरज में आने वाले सूर्योदय का संदेश पढ़ने वाला यह हठधर्मी जुगनुओं की पोटली बांध, मन में आशा की मशाल जलाये, निराशा की राहों को रौंदता, घनघोर अंधेरे का सामना करने निकल पड़ता है. वह मृत्यु तक से नहीं घबराता, क्योंकि वह पुनर्जन्म की कल्पना से उत्साहित व रोमांचित है और उसका मानना है कि मृत्यु पुनर्जन्म की सबसे आवश्यक शर्त है.

अनुपम मेहरोत्रा, स्टाफ प्रशिक्षण केन्द्र, भोपाल के प्रभारी मुख्य प्रबन्धक हैं.

रमेश केलकर

मानव संसाधन विकास में प्रशिक्षण - एक निवेश

संस्थागत प्रशिक्षण के बारे में दो अति भिन्न मतप्रवाह देखने को मिलते हैं. एक प्रवाह है, प्रशिक्षण को संगठनीय आवश्यकता के रूप में मानने वाला और दूसरा है, इसे बिल्कुल फिजूल माननेवाला. हमने उस चरम विचार प्रणाली को देखा है जिसने हमेशा प्रशिक्षण की गतिविधियों का तात्विक रूप में विरोध किया है और प्रशिक्षण पर किये जाने वाले खर्चों को बड़े पैमाने पर काटने के प्रयास किये हैं. उन्होंने प्रशिक्षण को न्यूनतम महत्व दिया है. ऐतिहासिक तौर पर हमने यह भी देखा है कि जब कभी खर्चों में बचत का सवाल उठा तो इन चरम विचारों के लोगों ने सबसे पहले प्रशिक्षण पर किये जाने वाले खर्चों में कटौती की. संस्थागत प्रशिक्षण की गतिविधियां पहले से चली आयी हैं और इसे संस्था की एक अविभेद्य प्रक्रिया के रूप में मान्यता भी मिली है. फिर भी सिर्फ कर्मचारियों को विषयात्मक ज्ञान प्रदान करने वाले एक प्रभाग के रूप में ही पाया गया है, अन्यथा उसे अच्छे कार्य-निष्पादन करने वाले कर्मचारियों को रिकार्ड करने का या उन्हें शासकीय विश्राम प्रदान करने के एक तरीके के रूप में ही देखा गया. ''जनबल विकास'' केवल कर्मचारियों के विषयात्मक ज्ञान बढ़ाने तक ही सीमित था, तथापि पिछले दो दशको में प्रशिक्षण की ओर देखने के दृष्टिकोण में आमूल बदलाव देखा जा सकता है. अब उसमें ''मानव संसाधन विकास'' की संज्ञा को अपनाया गया है, जो कि पहले से चली आयी 'जनबल विकास' की संज्ञा से बहुत ज्यादा व्यापक है.

एक बार मेरे एक जिज्ञासु मित्र ने मुझसे प्रशिक्षण के बारे में बहस छेड़ी थी. उनका कहना था कि बैंकों में सिर्फ अच्छे सुशिक्षित लोग स्पर्धात्मक चयन पद्धति द्वारा चुने जाते हैं. वे किसी न किसी संकाय के स्नातक होते हैं, जो उनके कार्यसाधक

ज्ञान के लिये काफी है. कार्यनिष्पादन तो कार्य करते-करते (on job) अपने आप ही हो जाता है. निःसंदेह, प्रशिक्षण द्वारा उनके शैक्षिक - ज्ञान में कुछ वृद्धि की जा सकती है. परंतु क्या बैंक को उनके शैक्षिक - ज्ञान बढ़ाने में कोई दिलचस्पी है? निश्चित रूप से नहीं! बैंक की दिलचस्पी तो कर्मचारियों के कार्यनिष्पादन से होनी चाहिये - न कि उनके ज्ञानार्जन से. मेरे विद्वान मित्र की सच्ची राय में तो कर्मचारी प्रशिक्षण पर किया जाने वाला विशाल खर्च एक अपव्यय ही है. मेरे मित्र का सुर बहुत ही विश्वासोत्पादक था, किंतु युक्तियुक्त नहीं था कि मुझे प्रभावित कर सके. मेरा मित्र 'संगठनात्मक प्रशिक्षण दृष्टिकोण' से बहुत परिचित नहीं था. परंतु उसकी बातों से मेरे विचार-चक्रों को जरूर ही प्रेरणा मिली.

मेरे मित्र ने एक बात बहुत ही सही कही थी कि आजकल प्रशिक्षण पर होने वाले खर्चों में अत्यधिक वृद्धि हो रही है. पिछले कुछ दशकों में प्रशिक्षण खर्च पर निरंतर वृद्धि होती रही है. ये खर्च प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में होते हैं. प्रत्यक्ष खर्चों में शामिल हैं :

1. प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने हेतु आवास का उपार्जित खर्च.
2. प्रशिक्षण केन्द्रों में विविध कार्यालयीन सुविधाएं उपलब्ध करवाने का खर्च.
3. प्रशिक्षण सेवा में कार्यरत कर्मचारियों के वेतन - भत्तों का खर्च.
4. प्रशिक्षणार्थियों के रहन-सहन एवं प्रवासादि का खर्च.
5. प्रशिक्षण से संबद्ध साधन सामग्री का खर्च और इसी तरह के अन्य खर्च.

ये प्रत्यक्ष खर्च हम संस्था के लाभ-हानि खाते में बता सकते हैं. परंतु जो अप्रत्यक्ष खर्च या लागत हैं, जिसे लाभ-हानि खाते में दर्शाया नहीं जा सकता, उसकी गणना हम नहीं कर सकते हैं. अप्रत्यक्ष खर्चों में गणना होती है - प्रत्यक्ष कार्य से लुप्त जनबल या मनुष्य-समय की कीमत की - जो दोहरी होती है. एक, प्रशिक्षण हेतु स्थायी रूप से आहरित जनबल की कीमत और दूसरी, प्रशिक्षण सुविधा प्रदान करने हेतु रोके गए जनबल की कीमत. इसके अलावा और भी एक लागत की गणना अप्रत्यक्ष खर्चों में की जानी चाहिये. वह है कार्यशक्ति का उत्पादक स्रोत से अनुत्पादक स्रोत में अपवर्तन होने के परिणामस्वरूप सामान्य कामकाज में प्रतिरोध या उसमें आई रुकावट से होने वाली हानि की कीमत. जब सामान्य कामकाज में प्रतिरोध उत्पन्न होता है या रुकावट आती है, तब विशेषतः ग्राहक-सेवा पर प्रतिकूल असर होता है और उसके

परिणाम भी बहुत दूरगामी एवं गहरे होते हैं. उपर्युक्त प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष खर्च मिलकर संस्था के बजट का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाते हैं.

अब हम इस तस्वीर का दूसरा रुख भी देखें - अर्थात् फायदे की बात. प्रशिक्षण पर होने वाले खर्च, जिसकी पर्याप्त चर्चा हमने ऊपर की है और उससे होने वाले लाभ का मेल-जोल होना अत्यावश्यक है. प्रशिक्षण को केवल एक परिलब्धि (Perquisite) के रूप में नहीं देखना चाहिए. प्रशिक्षण हेतु प्रतिनियुक्ति का मतलब कर्मचारियों को केवल प्रदत्त छुट्टियाँ देना नहीं है, अपितु उससे मिलने वाले लाभ स्पष्ट होने चाहिये. प्रशिक्षण पर किये जाने वाले वर्तमान खर्चों से प्राप्त लाभ भविष्य में ही नज़र आते हैं. वित्तीय प्रबंधन के तत्वों के अनुसार पूँजीगत व्यय का यही मूलस्वभाव है. इसी कारण प्रशिक्षण पर किये गये खर्चों को पूँजी - निवेश ही समझना चाहिये और संस्था के कुल लाभ पर केवल एक प्रभार की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए. दूसरा, बैंकिंग मूलतः एक सेवा - उद्योग है और अच्छी ग्राहक सेवा ही उसकी गुणात्मक पैदावार होती है. अपनी उपज के गुणसंवर्धन के लिये किये गये उपायों पर व्यय अर्थात् ''विकासात्मक खर्च'' हैं, जो संस्था के कुल लाभ पर केवल प्रभार नहीं होते हैं. प्रबंधन लेखांकन जो अंतरराष्ट्रीय लेखांकन के मानदण्डों पर आधारित है, के अनुसार अनुसंधान एवं विकास पर किये गये खर्च को पूँजी में परिणत कर सकते हैं, जब उससे होनेवाला लाभ सुनिश्चित हो. इसके लिये हमें 'प्रशिक्षण संकल्पना' को ही सही रूप से समझना चाहिये.

बुनियादी तौर पर प्रशिक्षण किसी भी मनुष्य को किसी चीज को अपने आप ही सीखने की एक सुविधा मात्र है. सीखना एक सतत् एवं अनन्त प्रक्रिया है, जो मनुष्य को हर एक चीज की अनुभूति / बोध प्रदान करती है और उसकी विचार प्रणाली / बरताव को ही बदल देती है. बरताव में परिवर्तन का ही दूसरा नाम 'आत्म - विकास' है. किसी भी मनुष्य के स्वभाव - परिवर्तन अर्थात् आत्म - विकास के लिये हमेशा अवसर हुआ करता है. प्रकृति ने समस्त मानवजाति को ही पूर्णत्व से वंचित रखा है. किसी भी उन्नति के लिये निरंतर परिवर्तन / विकास अपेक्षित है.

अगर इसे हम समीकरण के रूप में प्रस्तुत करें तो संक्षेप में हम इस भाव को सही -सही समझ पाएंगे.

विषय - ज्ञान + प्रशिक्षण = ज्ञान की अनुभूति (Realising the things)
(Subjective knowledge) (Training) = अधिगम (Learning)
= बरताव में परिवर्तन (Change in behaviour)

= आत्म - विकास (Self-development)
= मनोवियोग (Better application)
= बेहतर फल (Better results)
= समग्र उन्नति (Phenomenal growth)

अर्थात् हम यह कह सकते हैं कि अधिगम एक ''पूर्ण कल्याण व्रत'' है और प्रशिक्षण उस व्रत को निभाने का एक साधन है. आखिरकार सर्व - सम्पन्नता ही तो हर एक संस्था का अन्तिम लक्ष्य होता है.

किसी भी संस्था के पास अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये विविध संसाधन होते हैं. उसमें 'वास्तविक पूँजी संसाधन' जैसे कि इमारतें, साधन - सामग्री, कम्प्यूटर आदि एवं 'मानव संसाधनों' का समावेश होता है. समय बीतने पर वास्तविक संसाधनों के मूल्य में छीजन - घिसन से ह्रास होता है, परंतु बराबर इसके विरुद्ध समय बीतने पर मानव संसाधनों के मूल्य में वृद्धि होती है. हम चाहे कितने भी कम्प्यूटर लगाएं, उनसे काम करवाने के लिये मानव की बुद्धि व मन लगाने की आवश्यकता तो होती ही है. अतः संस्था की कुल लागत में 'मानव संसाधन पूँजी' का महत्व अनन्य है. इसलिये तो यह कहा जा सकता है कि प्रशिक्षण पर किया जाने वाला खर्च 'मानव संसाधन विकास' हेतु एक निवेश है.

हमने इस बात को मान लिया है कि प्रशिक्षण की लागत मानव संसाधन विकास में एक निवेश है तो इस निवेश पर मिलने वाले लाभों की गणना करना भी उचित होगा. अर्थात् मानव संसाधन विकास के निवेश पर मिलने वाले लाभ का हिसाब हम परिमाणात्मक परिभाषा में नहीं कर सकते हैं, जैसे अन्य वित्तीय लागत / निवेश के बारे में इसका हिसाब हम आन्तरिक लाभ दर के जरिये कर सकते हैं. उसी तरह इस लागत की पुनरदायगी अवधि का भी अंदाज हम नहीं लगा सकते हैं. अल्पावधि में प्रशिक्षण से मिलने वाले लाभों को महसूस करना भी मुश्किल है. परंतु दीर्घावधि में इन लाभों का दृष्ट - स्वरूप प्राप्त हो ही जाता है, जो गुणात्मक होता है. ऐसे कई लाभों की सूची हम बना सकते हैं, जैसे कि :

1. बेहतर कार्यसाधक ज्ञान - बेहतर कार्यनिष्पादन
2. बेहतर ग्राहक-सेवा - ग्राहकों की आवश्यकताओं एवं कठिनाइयों की अनुभूति - संस्पर्श (Empathetic Touch)
3. बैंक की धोखाधड़ी / जालसाजी से सुरक्षा

4. कार्य पर मानव - बरताव में रचनात्मक बदलाव
5. स्वतः स्वामित्व की भावना (True Ownership) का सर्जन
6. अभिप्रेरणा - जनबल के हौसले बढ़ाना
7. गुणात्मक दरजे का संवर्धन
8. परिचालन लागत में बचत - ज्ञान एवं लगाव के अभाव के कारण उद्‌भावित फ़िज़ूल-खर्च टालना

प्रशिक्षण-व्यवस्था का एक अति महत्वपूर्ण पहलू है कि उसके द्वारा संगठन और कर्मचारियों के बीच की दरार मिटाने में अर्थपूर्ण योगदान मिलता है.

अतः हम यह दावा कर सकते हैं कि संगठन द्वारा प्रशिक्षण पर लगाई जानेवाली लागत एक अत्यंत लाभदायी निवेश है.आधुनिक कुशल प्रबंधन दृष्टिकोण से आजकल बहुत सारे संगठनों के प्रबंधक-वर्ग को कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के महत्व का उद्‌बोधन होता जा रहा है. विश्व में यह साबित हो चुका है कि प्रशिक्षित स्टाफ-सदस्य कार्यनिष्पादन का स्तर निःसंदेह बढ़ाते हैं.जापान की आर्थिक स्थिति की दूसरे विश्व युद्ध के बाद हुई प्रतीयमान उन्नति (Phenomenal Growth) का कारण उनकी न्यूनतम स्तर से सर्वोच्च स्तर तक मानव संसाधन विकास के प्रति आजीवन वचनबद्धता है.अमेरिका में किये गये एक सर्वेक्षण द्वारा भी यह निष्कर्ष निकाला गया था कि उनकी कम से कम 20 प्रतिशत असाधारण उन्नति की वजह सिर्फ मानव संसाधन विकास थी.

हमारे 28000 कर्मचारी हमारे बैंक के मानव संसाधनों का स्रोत हैं और वे हमारी अमूल्य आस्तियाँ हैं, जो हमारे तुलनपत्र में दर्शायी नहीं जाती हैं.किंतु वह हमारे तुलनपत्र को आकार देती हैं, उसका गुणात्मक दर्जा बढ़ाने के अथक प्रयास करती रहती हैं.हमारी यह आस्तियाँ उपजाऊ बनी रहें, उनके कार्य-निष्पादन के दर्जे में कोई क्षय न हो पाए, इसलिये कर्मचारियों को निरंतर प्रशिक्षण देना जरूरी है, जिससे वे सक्षम एवं निपुण बनें और हमारा संगठन अधिकाधिक मजबूत बन सके.

रमेश केलकर, लार्ज कार्पोरेट वर्टिकल, केन्द्रीय कार्यालय, मुम्बई में उप महाप्रबंधक हैं.

अतुल कुमार

अभिप्रेरणा - सिद्धांत व व्यवहार

आज के गतिशील कार्य वातावरण में किसी भी संस्था के लिये अभिप्रेरित कर्मचारी एक अनिवार्य आवश्यकता है. अभिप्रेरणा को निम्नलिखित रूप से परिभाषित कर सकते हैं, "**अभिप्रेरणा वह आंतरिक शक्ति है, जो व्यक्ति को वैयक्तिक और संस्थागत लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अग्रसर करती है**." अभिप्रेरित कर्मचारी न केवल उत्पादक होते हैं, बल्कि वे संस्था को उसके गाढ़े समय / कठिनाई के समय में सामना करने की शक्ति भी प्रदान करते हैं. उन परिस्थितियों में एक प्रबंधक का मुख्य कार्य होता है कि वह अपनी टीम के प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग तथा सामूहिक रूप से इस प्रकार अभिप्रेरित करे कि वे अपना सर्वोत्कृष्ट योगदान दे सकें तथा अपने इस योगदान से संतोष भी प्राप्त कर सकें. तथापि किसी कर्मचारी को अभिप्रेरित करना एक प्रबंधक के कठिनतम कार्यों में से एक है. ऐसा इसलिये है, क्योंकि विभिन्न कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने वाले कारक अलग अलग होते हैं और ये लगातार बदलते भी रहते हैं.

वास्तविक संसार में, अधिकतर लोग कामचलाऊ कार्य करते हैं, किंतु कई बार लोगों के द्वारा उत्कृष्ट कार्य भी किये जाते हैं.दोनों परिस्थितियों में मुख्य अंतर अभिप्रेरणा का होता है. अपनी दक्षता के अनुरूप कार्य करने हेतु अनुकूल परिस्थितियों का सृजन करना भी एक कला है. इस प्रकार की परिस्थितियों का सृजन करने वाले व्यक्ति, कंपनियां तथा देश अपने प्रतिस्पर्धियों की तुलना में लाभप्रद स्थिति में बने रहते हैं.

वर्तमान व्यावसायिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में, व्यक्तियों को उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन के लिये अभिप्रेरित करना पहले की तुलना में कहीं कठिन हो गया है. ऐसा इसलिये क्योंकि प्रतिस्पर्धा लगातार कड़ी होती जा रही है और लाभ का मार्जिन लगातार कम होता जा रहा है. आर्थिक अनिश्चितता ने लगभग सभी उद्योगों को पंगु

बना दिया है. कोई भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि यह कठिन समय कभी अच्छे समय में बदलेगा भी या नहीं. सर्वोत्कृष्ट गुणवत्ता, उत्पादकता और परिवर्तन के प्रति अनुकूल रुख आज के युग में सफलता की कुंजी हैं तथा इन सबके लिये पूर्णतया सूचित, प्रतिबद्ध और अभिप्रेरित जनबल चाहिये. केवल अभिप्रेरणा से प्रबंधक अपने कर्मचारियों को सर्वोत्कृष्ट कार्यनिष्पादन में सहायता कर सकते हैं. यह सर्वोत्कृष्ट कार्यनिष्पादन कंपनी/संस्था को कठिन समय में न केवल अस्तित्व में बने रहने में, बल्कि उस कठिन समय से जूझने में भी मदद करता है.

कॉरपोरेट जगत में कुछ संस्थाएँ समय की इस मांग को स्वीकार कर रही हैं और तदनुरूप अपनी कार्यशैली तथा कार्य संस्कृति में परिवर्तन कर रही हैं. अब कर्मचारी **मानव-पूंजी** (Human Capital) के रूप में जाने जाते हैं. चूंकि मानव संसाधन प्रबंधकों को संस्था की कुछ व्यवहारजनित / व्यावहारिक अपेक्षाओं का भी ध्यान रखना होता है.अतः अब वे कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के बारे में अधिक सोचते हैं.ये व्यवहारजनित अपेक्षाएं निम्नलिखित होती हैं:-

1. कर्मचारी न केवल संस्था की ओर आकर्षित होकर भर्ती हों, बल्कि वे संस्था में बने भी रहें.
2. जिस काम के लिये लोगों को भर्ती किया गया है, वे उस काम को इस प्रकार करें कि उनपर भरोसा किया जा सके / निर्भर रहा जा सके.
3. लोग इस प्रकार के भरोसे लायक कामों से भी ऊपर उठें और कार्य के दौरान तात्कालिक आवश्यकता के अनुसार कुछ सृजनात्मक व नवोन्मेषी कार्य करें.

प्रायः कर्मचारी जो अपेक्षाएं रखता है, उसे वह अपने नियोक्ताओं से प्राप्त नहीं होती हैं. नियोक्ता (Employer) कम से कम झंझट और यथासंभव अधिक से अधिक लाभ वाले उत्पाद या सेवा चाहते हैं. चूंकि नियोक्ता उत्पाद और लाभ पर ध्यान केंद्रित रखते हैं, वे कभी-कभी अपने कर्मचारियों की ज़रूरतों पर बहुत कम ध्यान देते हैं. कभी-कभी इसी माहौल में नियोक्ता अनजाने में ऐसा ऋणात्मक वातावरण बना देते हैं, जिससे कर्मचारी उत्साहहीन होता है और अंततः वह समस्यामूलक कर्मचारी (Problem Employee) में तबदील हो जाता है. प्रायः समस्यामूलक कर्मचारी योग्य और सृजनात्मक रुचि वाला व्यक्ति होता है, किंतु वह मनचाहे तरीके से अपनी योग्यता को अपने कार्य में परिलक्षित नहीं कर पाता है. यही कारण है कि अच्छी संस्थाएं हमेशा उन कारकों पर ध्यान देती हैं, जो कर्मचारियों की अभिप्रेरणा को

प्रभावित कर सकते हैं. ये कारक कर्मचारी की संस्था के प्रति प्रतिबद्धता की गंभीरता से सीधा संबंध रखते हैं.

एक बहुत पुरानी कहावत है कि आप घोड़े को तालाब तक तो ले जा सकते हैं, लेकिन उसे पानी पीने के लिये मजबूर नहीं कर सकते. वह तभी पानी पीयेगा, जब वह वाकई प्यासा होगा. ऐसा ही कर्मचारियों के साथ भी होता है. वे वही करेंगे, जो वे करना चाहते हैं या जो करने के लिये उन्हें प्रेरित किया गया हो. वे ऐसा करने के लिये या तो स्वयं या बाहरी उत्प्रेरकों (External Stimulus) द्वारा अग्रसर/अभिप्रेरित किये गये हों. किसी भी व्यक्ति का कार्यनिष्पादन उसकी योग्यता व अभिप्रेरणा दोनों पर निर्भर करता है. इनमें से योग्यता व्यक्ति की शिक्षा, अनुभव और प्रशिक्षण पर निर्भर करती है. योग्यता में सुधार एक लंबी व धीमी प्रक्रिया के बाद ही संभव हो सकता है. दूसरी ओर, अभिप्रेरणा से तेज़ी से सुधार आता है और अभिप्रेरणा के निम्नलिखित तत्वों के माध्यम से व्यक्ति अपना कार्य, कुशल रीति से निष्पादित करने में सफल हो सकते हैं :

1. सकारात्मक प्रभाव (Positive re-enforcement)
2. प्रभावी अनुशासन एवं दंड (Effective discipline & punishment)
3. कर्मचारियों से न्यायसंगत व्यवहार (Treating people fairly)
4. कर्मचारियों की आवश्यकताओं की पूर्ति (Satisfying employees' needs)
5. कार्य से संबंधित लक्ष्यों का निर्धारण (Setting work related goals)
6. कार्यों को नये तरीके से डिज़ाइन करना/पुनर्निर्माण करना (Redesigning/Restructuring jobs)
7. कार्यनिष्पादन से संबंधित प्रशंसा व पुरस्कार (Recognition & rewards on job performance)

इतिहास बताता है कि कुछ प्रबंधन वैज्ञानिकों ने मानव प्रबंधन पर कार्य किया और अभिप्रेरणा से संबंधित कुछ सिद्धांत प्रतिपादित किये. बिना विस्तृत ब्यौरों का उल्लेख किये, हम मोटे तौर से अभिप्रेरणा के कुछ सिद्धांतों पर गौर करेंगे :-

1. सिगमंड फ्रायड का 'कैरट एंड स्टिक' का सिद्धांत :

सिगमंड फ्रायड का मानना है कि व्यक्तियों से काम लेने के लिये उन्हें पुरस्कृत किया जाना चाहिये और आवश्यकता पड़ने पर धमकाना तथा दंडित भी किया जाना

चाहिये. यही प्रबंधन का तथाकथित 'कैरट एंड स्टिक' का सिद्धांत कहा जाता है, किन्तु यदि यह सिद्धांत पूर्णतया लागू होता तो प्रबंधकों को अपने उन कर्मचारियों की, जिनपर प्रबंधन भरोसा नहीं कर सकता अथवा जो प्रबंधन को सहयोग नहीं करते, लगातार निगरानी / अनुश्रवण करना पड़ता. ऐसी स्थिति से कर्मचारी तथा प्रबंधक दोनों के लिये दमनकारक और हतोत्साही वातावरण का निर्माण होता है तथा किसी भी सृजनात्मक कार्य या उपलब्धि की आशा नहीं की जा सकती.

2. मैकगरेगर डगलस का स्व-विकास का सिद्धांत :

यह सिद्धांत 'कैरट एंड स्टिक सिद्धांत' के ठीक विपरीत विचारों वाला है. मैकगरेगर का विश्वास था कि व्यक्तियों में सीखने की अदम्य इच्छा होती है तथा उनका कार्य उनके लिए एक स्वाभाविक और प्राकृतिक क्रिया है. अतः वे इस संबंध में स्व-अनुशासन (Self discipline) तथा स्व-विकास (Self development) की आदत विकसित कर लेते हैं. ऐसे व्यक्ति प्रोत्साहन को नकद पुरस्कारों के रूप में नहीं देखते, बल्कि कठिन और चुनौतीपूर्ण कार्यों को स्वतंत्र रूप से तथा अपने ही ढंग से निष्पादित करने की स्वतंत्रता पाकर प्रोत्साहित होते हैं. प्रबंधक का कार्य मानवीय इच्छाओं (Human wish) व अधिकतम उत्पादक कार्यक्षमता सम्बंधी संस्था की ज़रूरत (Organization's need for maximum productive efficiency) के बीच सामंजस्य बनाना होता है. इससे दोनों के उद्देश्यों की पूर्ति होती है तथा कल्पना व ईमानदारी के माध्यम से अनंत क्षमताओं का संदोहन किया जा सकता है.

3. अब्राहम मैसलो का 'आवश्यकता अनुक्रम' का सिद्धांत :

अब्राहम मैसलो आवश्यकता अनुक्रम (Need Hierarchy) का सिद्धांत इस बात पर आधारित है कि किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके कार्यों पर निर्भर होता है और व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसके कार्य ही जीवित रहते हैं. मैसलो के अनुसार व्यक्ति की पांच प्रकार की मूलभूत आवश्यकताएं होती हैं:-

1. शारीरिक आवश्यकताएं (निम्नतम आवश्यकता)
2. सुरक्षा संबंधी आवश्यकताएं
3. संबंधों या स्नेह की आवश्यकताएं
4. स्वाभिमान की आवश्यकताएं
5. आत्मानुभव और आत्म विवेचन की आवश्यकताएं (उच्चतम आवश्यकता)

व्यक्ति का व्यवहार उसकी अतृप्त इच्छाओं से प्रभावित होता रहता है. जब व्यक्ति की एक इच्छा पूरी हो जाती है तो वह अगली ऊंची इच्छा की पूर्ति की अपेक्षा करने लगता है. इस प्रकार यह एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया हो जाती है, जिसके दौरान व्यक्ति स्व-विकास के माध्यम से पूर्णतया प्राप्त करने में संलिप्त रहता है.

4. फ्रेडरिक हेज़बर्ग का "स्वास्थ्य/अभिप्रेरणा" का सिद्धांत :

इस सिद्धांत के अनुसार व्यक्ति सबसे पहले अपनी रुचि व अपने हित में ही कार्य करते हैं, क्योंकि वे इससे एवं इस कार्य के पूरा होने पर सच्ची प्रसन्नता पाते हैं और मानसिक रूप से खुद को सक्षम महसूस करते हैं. हेजबर्ग के अनुसार व्यक्तियों की आवश्यकताएं दो प्रकार की होती हैं:-

- **जैविक आवश्यकताएं** (स्वास्थ्य संबंधी तथ्य Hygiene factors)
  - पर्यवेक्षण
  - अतंर्वैयक्तिक संबंध
  - कार्य करने की स्थितियां
  - वेतन
- **मानवीय आवश्यकताएं** (अभिप्रेरक)
  - पहचान
  - कार्य
  - उत्तरदायित्व
  - उत्तरोत्तर विकास

जैविक आवश्यकताएं (Animal needs) यदि असंतुष्ट हों तो वे हतोत्साहक कारकों के रूप में कार्य कर सकती हैं, परन्तु यदि संतुष्ट हों तो भी इनका अभिप्रेरणा संबंधी प्रभाव सीमित होता है, जबकि संतुष्ट मानवीय आवश्यकताओं (Human needs) का प्रभाव आश्चर्यजनक रूप से प्रचुर मात्रा में होता है.

5. विक्टर व्रूम का 'अपेक्षा सबंधी' सिद्धांत :

विक्टर व्रूम के अनुसार नेतृत्व की शैली परिस्थिति तथा समूह विशेष के हिसाब से तैयार होनी चाहिये. कुछ मामलों में नियंत्रक अधिकारी द्वारा निर्णय लिया जाना ठीक होता है और कुछ मामलों में समूह किसी नतीजे पर पहुंचता है. किसी भी व्यक्ति को पुरस्कार उसकी नज़र में महत्वपूर्ण वस्तु के रूप में दिया जाना चाहिये,

न कि नियंत्रक अधिकारी की नज़र में महत्वपूर्ण वस्तु के रूप में. उदाहरण के लिये कुछ कर्मचारी वेतन वृद्धि से प्रोत्साहित होते हैं, जबकि कुछ अपनी प्रतिष्ठा में वृद्धि से प्रोत्साहित होते हैं. यह सिद्धांत कर्मचारी अभिप्रेरणा के अध्ययन में इस बात को स्पष्ट करता है कि किस प्रकार वैयक्तिक लक्ष्य वैयक्तिक कार्यनिष्पादन को प्रभावित करते हैं.

6. डेविड मैकलैंड का 'संबद्धता और शक्ति' का सिद्धांत :

मैकलैंड का विश्वास था कि व्यक्तियों की उपलब्धि, संबद्धता तथा शक्ति नामक तीन बौद्धिक आवश्यकताएं होती हैं. ये तीनों किसी भी समाज की संस्कृति में रच बस जाती हैं. यह सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि व्यक्ति उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन या प्रतिस्पर्धात्मक परिस्थितियों में कार्य निष्पादित करने की इच्छा की शक्ति और तीव्रता से अभिप्रेरित होता है. मैकलैंड के अनुसार उद्देश्य मनुष्य के अवचेतन मन में, जो कि चेतन मन के ठीक पहले स्थित होता है, सन्निहित रहते हैं. वे चेतन तथा अचेतन के बीच में अवस्थित रहते हैं, जो दिवास्वप्न से संबंधित क्षेत्र होता है. ऐसे में व्यक्ति चैतन्य होकर खुद से बातचीत करते हैं. इस सिद्धांत की विशेषता यह है कि इन दिवास्वप्नों को परखा जा सकता है और अभिप्रेरणा से इन दिवास्वप्नों में भी परिवर्तन किया जा सकता है.

सिद्धांत तो कई हैं, किंतु वास्तविक चुनौती उन्हें कार्यरूप में परिणत करने तथा कर्मचारियों में संस्था के प्रति प्रतिबद्धता का सृजन करने की है, ताकि वे संस्था को उत्कृष्ट परिणाम दे सकें.

समस्याओं को सुलझाने के परंपरागत तरीकों में दंड के द्वारा अनुशासन कायम करना तथा प्रोत्साहन या प्रशिक्षण के माध्यम से अभिप्रेरित करना शामिल हैं.ये तरीके इस तथ्य पर आधारित हैं कि कर्मचारी या तो प्रबंधन के द्वारा सृजित किये गये दबाव में कार्य करते हैं अथवा अपेक्षाकृत अधिक वेतन के लिये काम करते हैं या तब काम करते हैं, जब उन्होंने उस कार्य का ज्ञान/कौशल हासिल कर लिया हो. तथापि, संस्थाओं और समाज की बढ़ती जटिलताओं और कड़े प्रतिस्पर्धी व्यावसायिक वातावरण के साथ ये तथ्य धीरे-धीरे अप्रासंगिक होते जा रहे हैं. अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि आंतरिक दबाव अर्थात अभिप्रेरणा, बाह्य दबाव की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण हैं. अब कर्मचारी धन से भी अधिक कुछ चाहते हैं. आजकल कार्य का संघटन (Job structure), कार्य करने की परिस्थितियां (Working conditions), संस्थागत संस्कृति (Organisation culture) आदि भी महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं.

जैसा कि उपर्युक्त से स्पष्ट है, विभिन्न विद्वानों ने अभिप्रेरणा के विभिन्न सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है, जैसे अब्राहम मैसलो का "आवश्यकता अनुक्रम" का सिद्धांत, जो कि मानव की पांच मौलिक आवश्यकताओं पर बल देता है, फ्रेडरिक हेज़बर्ग का कार्य को बेहतर बनाने का "द्विताथ्यिक सिद्धांत", जो कि व्यक्तियों के विकास का मुख्य कारक उनके कार्य को ही मानता है, मैक क्लेलैंड का तीन मौलिक तथ्यों की उपलब्धि, संबद्धता और शक्ति का सिद्धांत तथा विक्टर व्रूम का "अपेक्षा संबंधी" सिद्धांत आदि. संस्था के प्रति कर्मचारी की प्रतिबद्धता को बढ़ाने की दृष्टि से, जहां एक ओर प्रत्येक सिद्धांत का अपना महत्व है, वहीं दूसरी ओर सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि संस्थागत लक्ष्यों के साथ मानवीय लक्ष्यों का सामंजस्य कैसे बिठाया जाये.

आज व्यावहारिक दृष्टि से कर्मचारियों की कार्य के प्रति प्रतिबद्धता को बढ़ाने के उद्देश्य से विश्व भर में निम्नलिखित प्रथाएं अपनायी जा रही हैं:-

- **कर्मचारियों को महत्व देना** (Value to People)

  इसका अर्थ यह है कि हर योजना तथा हर कारोबारी प्रक्रिया में सबसे पहले कर्मचारी के हितों का ध्यान रखा जाना. परन्तु इस प्रक्रिया में संस्था तथा कर्मचारी के मध्य आपसी विश्वास, सौहार्द और आदर की अपेक्षा होती है. इस प्रक्रिया को अपनाने वाली संस्थाओं में से मैसर्स टोयोटा यू एस ए महत्वपूर्ण उदाहरण है. भारतीय परिवेश में भी आज यह आवश्यक होती जा रही है.

- **संस्था के कर्मचारियों व उसके वरिष्ठ प्रबंधन के मध्य संप्रेषण का होना**

  यह इस बात पर आधारित है कि प्रतिबद्धता, विश्वास से आती है और विश्वास के लिये दोनों पक्षों में पर्याप्त संप्रेषण होना चाहिये. शिकायत और असंतोष की संभावना तो हर संस्था में होती है, किंतु हम इसका निस्तारण ईमानदारी के साथ किये गये संप्रेषण के द्वारा कर सकते हैं.

- **महत्व पर आधारित भर्ती** (Value-based) भी संस्था के प्रति प्रतिबद्धता को अप्रत्यक्ष रूप से प्रेरित करती है. किसी भी संस्था के लिये यह परम आवश्यक है कि वह सर्वोत्कृष्ट जनबल पाने हेतु साक्षात्कार और स्क्रीनिंग पर अत्यधिक बल दे एवं वैल्यू बेस्ड भर्ती पर बल दें.

- कर्मचारियों के कैरियर संबंधी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने की संस्था की क्षमता भी प्रतिबद्धता के सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है. स्थायी नौकरी तथा कर्मचारियों का कल्याण बहुत महत्वपूर्ण है.
- हालांकि यह सच है कि प्रतिबद्धता खरीदी नहीं जा सकती, किंतु यह भी सच है कि प्रोत्साहक प्राप्तियों सहित औसत से बेहतर वेतन पैकेज और अत्यधिक लाभ प्रतिबद्धता को बढ़ाने में सक्रिय व महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं.
- अपने सपनों को पूरा करने की भावना जैसी ही आत्म-विवेचन की आवश्यकता भी उतनी ही बलवती होती है. इसे प्रतिभागिता पूर्ण निर्णय, कार्य की बेहतरी, हिस्सेदारी और संगठित होने के एहसास, कार्य की स्वायत्तता, शक्तिसंपन्नता के रूप में जाना जाता है तथा इन्हीं के माध्यम से कर्मचारियों को आत्म-विवेचन में संस्था द्वारा मदद की जा सकती है.

इस प्रकार हम पाते हैं कि संस्था के प्रति प्रतिबद्धता का आरंभ कर्मचारी की भर्ती के साथ शुरू हो जाता है और उसके बाद कर्मचारियों के एक ऐसे वातावरण में पालन पोषण और विकास के साथ बढ़ता जाता है, जिसमें वे यह विश्वास कर सकें कि संस्था के लिये सबसे पहले कर्मचारी हैं और संस्था अपने कर्मचारियों के कल्याण और विकास का ध्यान रखती है. यद्यपि कर्मचारियों की आधारभूत आवश्यकताएं वैयक्तिक आधार पर भिन्न होती हैं, तथापि हम मोटे तौर पर निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत कर सकते हैं :

I. सक्षम प्रबंधक के साथ कार्य करना.

II. कार्य का अंतिम परिणाम - उपलब्धि व्यक्ति को प्रेरित करती है.

III. रुचिकर कार्य - पसंद का कार्य बेहतर परिणाम देता है.

IV. सूचना की उपलब्धि - सूचना व्यक्तियों को निर्णय लेने में सक्षम बनाती है और बेहतर परिणाम देती है.

V. कर्मचारी की बात की सुनवाई होना - इससे व्यक्तियों के विचारों, तरीकों और प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त होने का अवसर मिलता है.

VI. आदर मिलना - इससे वैयक्तिक प्रतिष्ठा का संदेश जाता है.

VII. प्रयासों को स्वीकारा जाना - इससे कर्मचारी को सकारात्मक बल मिलता है.

VIII. चुनौती मिलना - इससे सृजनात्मकता तथा नवोन्मेष को प्रोत्साहन मिलता है.

IX. कौशल के विकास के लिये अवसर - इनसे नये कौशल सीखने को प्रोत्साहन मिलता है.

X. स्वकेंद्रण - इससे वैयक्तिक विकास और उन्नयन होता है.

इन बातों का ध्यान रखकर प्रबंधक अधिक से अधिक कर्मचारियों को प्रोत्साहित/अभिप्रेरित कर सकता है.

संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि यदि कोई प्रबंधक कर्मचारियों की आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा कर सके तो अभिप्रेरणा की उपलब्धि अवश्य की जा सकती है एवं अभिप्रेरित कर्मचारियों के माध्यम से वह संस्था के लक्ष्यों को तथा विकास को सुगमता से प्राप्त कर सकता है.

अतुल कुमार, क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, लखनऊ में मुख्य प्रबंधक हैं.

डॉ. अजित मराठे एवं संजय प्रकाश श्रीवास्तव

संप्रेषण - कला या विज्ञान

संप्रेषण कला है या विज्ञान, यह बहस प्रारम्भ करने से पूर्व संप्रेषण के सार पर मंथन करना आवश्यक होगा. हांलाकि कुछ आजमाए हुए कौशल व तकनीकों के उपयोग के परिणामस्वरूप संप्रेषण की प्रभावशीलता में वृद्धि का पूर्वानुमान कर संप्रेषण का व्यवस्थित अध्ययन टालना एवं संप्रेषण को एक कला के रूप में वर्गीकृत करना ज्यादा सरल होता.

हम अपने सम्पूर्ण जीवन में जाने अनजाने लगातार संप्रेषण करते रहते हैं. संप्रेषण हमारे जन्म लेते ही शुरू हो जाता है. शैशव काल में पेट बिगड़ने पर, नैपी गीली करने अथवा भूख लगने पर हम रोकर अपनी आवश्यकता बताते थे. मुझे अभी भी अचंभा होता है कि कैसे, दूसरे कमरे में हमारे बच्चे के रोने पर मेरी पत्नी को पता चल जाता था, परंतु मुझे नहीं! मेरे लिये तो बच्चे का रोना सिर्फ रोना था, परंतु मेरी पत्नी सदैव पूर्ण आत्मविश्वास के साथ समस्या का निराकरण करते हुए बच्चे को शांत कराने में सफल रहती थी. मेरी समझ से यह संप्रेषण का सबसे प्रभावशाली रूप था.

ऐसा माना जाता है कि किसी व्यावसायिक संस्थान में प्रभावी संप्रेषण की स्थापना करना एक दुष्कर कार्य है. संप्रेषण वास्तव में एक द्विमार्गीय प्रक्रिया है. अतः प्रभावी संप्रेषण न केवल अपने संदेश को पूर्ण स्पष्टता व असंदिग्ध रूप से कहना - प्रस्तुत करना है, वरन् न्यूनतम संभाव्य विकृति के साथ सूचना का ग्रहण करना भी है. **जब प्रेषक और प्राप्तकर्ता समान अर्थ में सूचना को समझते हैं, तभी संप्रेषण सफल माना जायेगा.**

सफल संगठन व सफल कैरियर के निर्माण के लिये हमें प्रभावी संप्रेषण की कला आनी चाहिए. हम अनेक प्रभावी संप्रेषण करने वाले प्रतिभासंपन्न व्यक्तियों को

जानते हैं, पर निम्न परीक्षित उपायों को अपना कर सामान्य व्यक्ति भी संप्रेषण क्षमता में विकास कर सकते हैं.

संप्रेषण का विज्ञान :

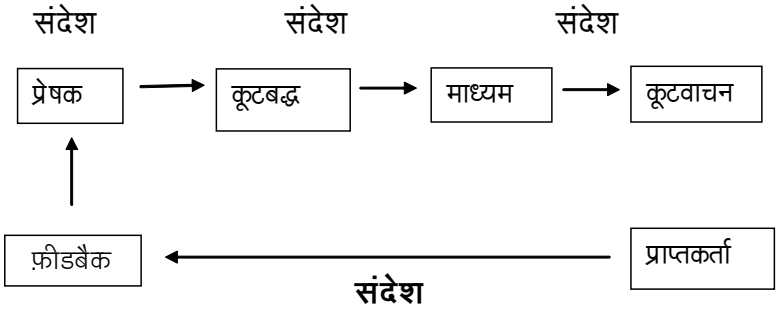

प्रेषक या संदेश स्रोत सबसे पहले प्रेषित किये जाने वाले संदेश का चयन करता है और संदेश को शब्दों, चित्रों, ग्राफ, चार्ट के रूप में कूटबद्ध कर इसका प्रेषण समुचित माध्यम के द्वारा करता है. प्रेषण हेतु प्रेषक एक या अनेक विधियों का उपयोग, जैसेकि आमने सामने के सम्पर्क में बोलकर संप्रेषण, दूरभाष संप्रेषण, ई-मेल, वीडियो कान्फ्रेन्सिंग, परिपत्र, नोटिस, कार्यालय आदेश, ज्ञापन आदि कर सकता है. प्राप्तकर्ता संदेश प्राप्त होने पर उसे समझने के लिये संदेश का कूटवाचन (डिकोड) करता है तथा इस प्रक्रिया के पूर्ण होने पर संदेश के बारे में अपनी समझ को बताने के लिये प्राप्तकर्ता संदेश प्रेषक को फ़ीडबैक देता है.

जिस प्रकार से संदेश की अभिकल्पना, कूटबद्धीकरण और वितरण के लिये विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार से उसके कूटवाचन तथा समझने के लिये, अगर ज्यादा नहीं तो कम से कम उसी स्तर के विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता होती है. प्रत्येक स्तर पर संदेश की विकृति का जोखिम होने के कारण गलतफहमी और/या संदेह बना रहता है.

संप्रेषण के 5 क (The five W's of Communication)

1) ***संप्रेषण का क्या What of communication*** : रुकिये, सोचिये आप क्या कहना/संप्रेषित करना चाहते हैं, क्या यह एक सूचना, एक निर्देश, एक बधाई, एक शोक संदेश या एक प्रार्थना है.

2) ***संप्रेषण का क्यों Why of communication*** : आप संप्रेषण क्यों करना चाहते

हैं, इसका उद्देश्य क्या है, यह संप्रेषण आपके संगठन, आपके लिये या आपके प्राप्तकर्ता के कितने महत्व का है.

3) ***संप्रेषण का कौन Whom of communication*** : आप किसे संदेश देना चाहते हैं, जिन्हें संदेश दे रहे हैं, उनकी शैक्षणिक व्यावसायिक पृष्ठभूमि क्या है. क्या संदेश प्राप्त होने पर उसे प्राप्त करने, समझने और स्वीकार करने के लिये वे मानसिक रूप से सक्षम होंगे.

4) ***संप्रेषण का कैसे How of communication*** : आपको संप्रेषण के लिये उचित माध्यम का चुनाव करना होगा. छोटे संदेश के लिये SMS किफायती और उद्देश्य को पूर्ण करने वाला विकल्प है. लंबे संदेश को ईमेल, पत्र, परिपत्र इत्यादि के रूप में प्रेषित कर जा सकता है. जटिल प्रक्रियाओं को दूरभाष या प्रत्यक्ष संवाद द्वारा बताना उचित होगा, क्योंकि इसके द्वारा उठने वाली शंकाओं का त्वरित समाधान भी कराया जा सकेगा. जहां प्राप्तकर्ता अधिक या विभिन्न स्थानों पर हों, वहां वीडियो कान्फ्रेन्सिंग उचित माध्यम होगा.

5) ***संप्रेषण का कब When of communication*** : प्रेषक को संदेश वितरण हेतु उपयुक्त समय का चुनाव भी करना होगा. यह स्मरण रखना उचित होगा कि बात कहने और चुप रहने का भी उपयुक्त समय होता है. प्राप्तकर्ता के पास आपका संदेश प्राप्त करने, उस पर मनन करने का समय उपलब्ध होना चाहिये. असुविधाजनक समय पर संदेश वितरण से बचना चाहिये. चिंतन मनन वाले जटिल विषयों के लिये प्रातःकालीन, इंटरऐक्टिव संदेश को दोपहर में प्रेषित करना ठीक होगा. चिंतन उपरांत क्रियान्वयन में लाए जाने वाले विषयों से संबंधित संदेश को शाम को भेजना उचित होगा.

प्रभावी संप्रेषण के नुस्खे

- अच्छे संप्रेषण की प्रकृति KISS - Keep it simple & straightforward होनी चाहिये. बहुत लंबे, व्याकरण की त्रुटियाँ और अव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण संप्रेषण की प्रभावशीलता को कम करते हैं. यह कहावत है कि कम अक्सर बहुत से भी ज्यादा होता है.
- जहां सम्भव हो चित्रों, रेखाचित्रों, चार्ट का उपयोग आपके संप्रेषण की गुणवत्ता में वृद्धि करेगा. यहां पर मुझे अपने एक मामाजी की याद आती है जो कि किसी पते के पूछे जाने पर मुझे सुव्यवस्थित नक्शा बना कर बताते थे और उस स्थान को ढूंढने में मुझे कभी असुविधा नहीं होती थी.

- अपने संप्रेषण के साथ जहां आवश्यक हो सांख्यिकीय आंकड़ों को उपयोग में लाइये. यदि आप कहना चाहते हैं कि भारत की प्रगति प्रभावोत्पादक है, किंतु यह सभी को सम्मिलित नहीं (not inclusive) करती है तो आप अपने संप्रेषण की विश्वसनीयता बढ़ाने के लिये सकल राष्ट्रीय उत्पाद के सेवा क्षेत्र तथा कृषि क्षेत्र के आंकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन दिखा सकते हैं.
- प्रश्नों को पूछना भी संप्रेषण का आवश्यक अंग है. उचित अवसर पर उचित प्रश्न पूछना भी हमें आना चाहिये. प्रश्नों के उत्तर आपके संप्रेषण की गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक होने चाहिये. प्रश्नों को मुख्यतः दो वर्गों में बांट सकते हैं खुले और बंद. बंद प्रश्नों का उत्तर संक्षिप्त हां ! या न ! हो सकता है, जैसे कि क्या यह विषय आपके लिये उपयोगी है? आप कितने दिनों से इस शाखा में नियुक्त हैं? बंद प्रश्न तथ्यात्मक सूचना प्राप्त करने, चर्चा का परिसमापन करने जैसी स्थितियों में सहायक होते हैं. जबकि इसके विपरीत खुले प्रश्न के उत्तर दीर्घ और विस्तृत होंगे. जैसे हमारे द्वारा प्रारम्भ किये गये संगठनात्मक सुधार कार्यक्रम के बारे में आपके क्या विचार हैं? इस प्रकार के प्रश्न वार्ताकार को संवाद की शुरुआत करने, उसका विस्तार करने और साथ ही साथ विषय पर प्रतिक्रियाओं के अनुमान में सहायक होते हैं. प्रश्नों की एक अन्य श्रेणी प्रेरक होती है जो श्रोताओं को वार्ताकार के चिंतन की दिशा में जाने को प्रेरित करती है. जैसे क्या हम अपने बैंक को प्रथम स्थान का बैंक बनाएंगे? क्या हम सर्वोत्कृष्ट ग्राहक सेवा प्रदान करनेवाला बैंक बना सकते हैं? फिर भी हमें यहां दिशाहीन निरुद्देश्य प्रश्नों से सतर्क रहना होगा क्योंकि यह संवाद को पूर्णतया नष्ट कर सकते हैं.
- कहानी सुनाने की कला में दक्षता बढ़ाइये. आप ऐसे उच्च प्रबंधन के सदस्यों को जानते होंगे, जो अपनी बात की रोचकता व प्रभावशीलता बढ़ाने के लिये किस्से कहानियों का बुद्धिमतापूर्ण उपयोग करते हैं. कहानी श्रोताओं की भावनाओं को जगाते हुए उन्हें किसी अन्य की सफलता में अपनी सफलता की राह दिखाकर संवाद से जोड़ने में प्रेरित करती है. फिर भी हमें यह ध्यान रखना होगा कि कहानी छोटी और संवाद के विषय के इर्दगिर्द हो. कहानी सुनाते समय वक्ता की भावनात्मक लयात्मकता श्रोताओं की अनुभूति बढ़ाएगी, जैसे कि आप कह सकते हैं कि वह एक ठंड भरी रात थी या रात का विवरण आप इतनी प्रबलता से दें कि श्रोताओं को ही ठंड और सिहरन का अनुभव होने लगे. इसके लिये बहुत अभ्यास की आवश्यकता होगी, जिससे कि आप श्रोताओं की सुप्त अनुभूतियों को जागृत कर सकें. कहानी या प्रसंग ऐसा हो

कि उसमें से कोई सुस्पष्ट विचारधारा निकल कर सामने आ सके. एक सफल वक्ता भिन्न भिन्न स्थितियों के अनुकूल कहानियों, घटनाओं और किस्सों का संग्रह बना सकता है. जरूरत सिर्फ यह होगी कि समय-समय पर इन कहानियों, किस्सों और घटनाओं को नवीनता से परिपूर्ण रखा जाये.

- श्रोताओं के बारे में पूर्व जानकारी बहुत आवश्यक है. उनके मूल्यों, अनुभवों, शिक्षा, पृष्ठभूमि, कार्यप्रकृति और रुचियों की जानकारी आपके संवाद को उनकी भाषा के अनुसार अभिकल्पित करने में सहायक होगी.
- समय की उपलब्धता कम होने पर भी संवाद की गति बहुत तेज न होने पाए. संवाद के बीच-बीच में ठहराव का उपयोग संवाद स्वीकार्यता के आकलन में करें. इस ठहराव में अपने विचारों को संजो कर, परिमार्जित करते हुए संवाद के अगले स्तर पर जाएं.
- औपचारिक वार्तालाप को परिचय, विस्तार और समापन के रूप में व्यवस्थित करें. विचारों का क्रम ऐसा हो कि एक के बाद एक विचार निकलता जाए और श्रोताओं की उत्सुकता, स्वीकार्यता निर्बाध रहे. बड़े विचारों को छोटे छोटे उप शीर्षकों के साथ सामने लाना प्रभावी रहेगा. यह ध्यान रखें कि लंबे वक्तव्यों में श्रोताओं की अरुचि होने का जोखिम भी ज्यादा होता है.
- किसी भी संवाद में फीडबैक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक होता है. श्रोताओं की बॉडीलैंग्वेज का अध्ययन कीजिये. श्रोताओं के चेहरे के भाव, उनकी मुद्राएं, शैलियों को देखकर आप उनके समझने के स्तर का आकलन कर सकते हैं तथा यदि आवश्यकता हो तो संवाद में किंचित परिवर्तन करके उसे श्रोताओं के लिये अधिक युक्तिसंगत, रोचक और स्वीकार्य बना सकते हैं. यदि कुछ रह गया हो तो उसे शामिल करके श्रोताओं को सम्पूर्णता और संतुष्टि से सराबोर कर सकते हैं.

बॉडी लैंग्वेज के बारे में :

आमने सामने के पारस्परिक संवाद में तीन प्रमुख अंग होते हैं, जो कि बॉडी लैंग्वेज, आवाज की गुणवत्ता तथा विषयवस्तु हैं. एक शोध के अनुसार :

- 55% प्रभाव का सृजन बॉडी लैंग्वेज यथा मुद्राओं, भावभंगिमाओं तथा दृष्टि सम्पर्क द्वारा होता है,
- 38% प्रभाव का सृजन वाणी की प्रभावशीलता द्वारा होता है तथा
- शेष 7% प्रभाव का सृजन संवाद में चयनित शब्दों का होता है.

ऐसा देखा गया है कि अधिकांश वक्ता बॉडी लैंग्वेज पर कम ध्यान देते हैं, जबकि यह समग्र प्रभाव का 55% होता है.

शब्दकोष तथा उच्चारण का अभ्यास :

पढ़ने की आदत का विकास करें, राष्ट्रीय समाचार पत्र तथा उत्तम पुस्तकें पढ़ें. जो खंड या शब्द प्रथम प्रयास में न समझ पाएं उसे शब्दकोष की सहायता से समझें. 5 नए शब्द रोज सीखिये. शब्दों को सही प्रकार से उच्चारित करें. इस कार्य में सहायक उच्चारण को सही ध्वनि प्रभाव द्वारा सिखाने वाली सीडी युक्त शब्दकोष आजकल उपलब्ध हैं.

अच्छे श्रोता बनें :

बहुत सरल लगता है कि हम ऐसी बहुत सी बातें कह सकते हैं, जो हमें लगता है कि दूसरों को सुननी चाहिये, परंतु अच्छे वक्ता बनने के लिये अच्छा श्रोता बनना भी कम महत्वपूर्ण नहीं. सक्रिय श्रोता बनने के लिये अभ्यास करना होगा. वक्ता का वक्तव्य अखंडित ध्यान, पूर्ण मनोयोग से भलीभाँति समझते हुए, सीधे उसी की ओर देखते हुए, ध्यान बंटाने वाले मन में आने वाले विचारों को रोककर सुनिये. वक्ता को अपनी बात कहने दें, कोई बाधा न पहुँचाएं, उसकी बात पूर्ण होने तक अपना पूर्वानुमान रोके रहें, सहमति की ध्वनि करते हुए सकारात्मक मुद्रा अपनाएं. दूरभाष वार्तालाप में आप अपने इन गुणों का भलीभाँति परीक्षण कर सकते हैं. जो आपने समझा है, उसकी सविस्तार व्याख्या करते हुए वक्ता को समुचित फीडबैक प्रदान करें, जिससे यदि किसी तरह के सुधार या संशोधन की आवश्यकता हो तो उसे किया जा सके.

उपसंहार :

प्रभावी संप्रेषण के विज्ञान के बारे में सभी बातों की चर्चा करने के बाद यह प्रयास अधूरा रहेगा, यदि प्रभावी संप्रेषण की कला की बात न की जाये. कुछ दिन पूर्व हमें एक उच्च पदाधिकारी का उद्‌बोधन सुनने का अवसर मिला. उनकी भाषा ऐसी नहीं थी, जो उल्लेखनीय कही जा सके, उनका उच्चारण भी दोषपूर्ण था, जो उन्होंने कहा, उससे भी पूर्णरूपेण सहमत नहीं हुआ जा सकता था. फिर भी उन्होंने सभी श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया. उनके अंदर प्रभावी संप्रेषण की कला थी, जो उन्होंने कहा, पूर्ण विश्वास से कहा, अपनी भावनाओं को पूरी तरह से एकरूप करते हुए कहा. कहना नहीं पड़ेगा कि वक्तव्य की समाप्ति पर सम्पूर्ण दर्शकदीर्घा तालियों की गड़गड़ाहट से गुंजायमान थी.

डॉ. अजित मराठे एवं संजय प्रकाश श्रीवास्तव, स्टाफ प्रशिक्षण केन्द्र, भोपाल में क्रमशः मुख्य प्रबंधक एवं वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

एच.एन. सक्सेना

अध्यात्म और कार्यक्षेत्र

हमारे काम करने का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है. यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी. प्रत्यक्षतः तो हम रोटी, कपड़ा और मकान के लिये कार्य करते हैं. किंतु यदि थोड़ा-सा आगे सोचा जाये तो फिर से प्रश्न पैदा होता है कि हम रोटी, कपड़ा और मकान भी किस लिये कमाना चाहते हैं? यही तथ्य सामने आता है कि हर व्यक्ति सुख और आनंद की कामना से चलायमान होता है. यही सुख और आनंद की कामना उसे भौतिक और आध्यात्मिक दोनों क्रियाओं को करने के लिये प्रेरित करती है.

वास्तविक बात तो यह है कि व्यक्ति आम तौर पर भौतिक सुखों के लिये भौतिक साधन ही अपनाते हैं. इस प्रकार के व्यक्तियों का यह सोचना होता है कि पारलौकिक विश्व, आस्था, ईश्वर, उदात्त मूल्य तथा मानवीय सद्‌गुण केवल आध्यात्मिक उत्थान के लिये होते हैं, इनका भौतिक संसार और भौतिक जीवन से कोई लेना देना नहीं होता. जबकि सत्य इसके विपरीत है, जो आम तौर पर दिखायी नहीं देता. सुख और आनंद तो चाहिये ही. इसमें कोई दो-राय नहीं है. लेकिन यह सुख भौतिक संसार में भौतिक उपायों से प्राप्त किया जा सकता है, यह गलत है. सुख और आनंद सत्य और कल्याण में ही है. जो सत्य है, वही कल्याणकारी है अर्थात् शिव है. और जो शिव है वही कल्याणकारी है, अर्थात् सत्यम् शिवम् सुंदरम्. सुख की शुरुआत सत्य से ही होती है, जो कठिनता से व्यवहार्य लगता है. सत्य के अलावा और भी सद्गुण हैं, जो उसी के फलस्वरूप जन्म लेते हैं, लेकिन हम उसे अलग-थलग करके व्यवहार में लाते हैं. यही कारण है कि वे व्यवहार्य ही नहीं लगते. चाहे हम यह व्यवहार घर में करें, पूजन में करें, दान पुण्य में करें या कार्यस्थल पर करें, बात सर्वत्र एक ही है. कोई अंतर नहीं. हमारा व्यक्तित्व केवल एक होता है. एकोऽहं द्वितीयोनास्ति. यह बात अलग है कि घर-बाहर, दफ्तर-समाज में अलग-अलग

जगहों पर अलग-अलग छद्म व्यक्तित्व ओढ़कर कार्यशील होते हैं. इसीलिये तो सब कुछ बनावटी लगता है.

मौलिक तो सदा एक-सा ही रहता है और हमारा व्यक्तित्व सामाजिक प्राणी का है, जो समाज के लिये और समाज से ही बना रहता है. अर्थ यह कि मानव जीवन ही समाज के सभी घटकों के परस्पर कल्याण की कामना और कल्याणकारी कार्यों का पर्याय है. समाज का कल्याण नहीं तो मानव का अस्तित्व नहीं. हमें अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिये अपने सामाजिक व्यक्तित्व, उसमें भी कल्याणकारी व्यक्तित्व को ही संवारना होगा, पाशविक व्यक्तित्व को नहीं. कल्याणकारी व्यक्तित्व केवल आध्यात्मिक सद्‌गुणों से ही संवर सकता है, विकसित हो सकता है और अपने सुख और आनंद के लक्ष्य को पा सकता है. जब हम किसी संस्था में काम करते हैं तो भी यही व्यक्तित्व क्रियाशील होता है. जब नहीं होता तो मानव, मानव न होकर दानव हो जाता है. तब हम दूसरों से छीनकर खाना और पाना सीखने लगते हैं, दूसरे को गिराकर खुद आगे बढ़ना सीखने लगते हैं. अपने मानवीय लक्ष्य को प्राप्त करने के दौरान, दैनिक रोज़ी-रोटी के दौरान भी हमारा जीवन, कार्यप्रणाली तभी तक सुचारू और आनंददायी हो सकते हैं, जब उनमें दूसरों को आनंद और सुख देने की भावना काम करें. जबतक हमारा कार्य और कार्यशैली दूसरों के लिये लाभकारी नहीं होगी, आनंदकारी नहीं होगी, तबतक हमारा कार्य पाशविक शक्ति से उत्प्रेरित ही माना जायेगा और इस शर्त को पूरा करने के लिये हमें आध्यात्मिकता की ओर झुकना ही पड़ेगा. अधि + आत्मन् - अर्थात् जो आत्मा - खुद से परे हो. परब्रह्म से संबंधित हो, पराशक्तियों से सुसज्जित हो, वही है अध्यात्म. यही है कार्यक्षेत्र और अध्यात्म का जोड़. यही है आज के एच.आर. का सार. इसमें "मैं" खो जाता है और "हम" जीवित हो जाता है. मेरा विलीन हो जाता है और तेरा-तुझको अर्पण प्रकाशमान और प्रभावी हो जाता है. हम जो भी करते हैं, वह दूसरों के लिये आनंददायी होता है, फलदायी होता है और हमारे लिये सुखकारक हो जाता है. एच.आर. की भाषा में कहें तो "विन-विन" स्थिति होती है.

कोई भी कार्यस्थली तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक वहां के कार्मिक आध्यात्मिक गुणों से सुशोभित न हों. वस्तुतः संस्था की पहचान/छवि वहां के कार्मिकों पर ही निर्भर करती है. किसी भी संगठन की सफलता उसके कार्मिकों/ प्रबंधकों की कार्यशैली पर निर्भर करती है.

येषां न विद्या न तपो न दानं ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः,
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता मनुष्यरूपे मृगाश्चरन्ति।

अर्थात् जिन पुरुषों में विद्या, तप, दान, ज्ञान, सौजन्य, गुण और धर्म इनमें से कुछ भी नहीं हैं, वे मृत्युलोक में पृथ्वी के भारस्वरूप होकर मनुष्य रूप में साक्षात् पशुओं की तरह विचरते हैं.

कार्मिकों की कार्यशैली वस्तुतः उनके व्यक्तित्व का प्रतिबिंब होती है. व्यक्तित्व का विकास उनके मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर निर्भर करता है. हम सभी इस बात से सहमत होंगे कि मानवों के तीन स्तर होते हैं - भौतिक स्तर, मानसिक स्तर और आध्यात्मिक स्तर.

भौतिक स्तर पर मानव और पशु लगभग एक समान होते हैं. पशु भी वृत्तियों से प्रेरित होकर कार्य करते हैं और भौतिकता में अंधे मनुष्य भी वृत्ति (लोभ, मोह, क्रोध, वासना इत्यादि) से प्रेरित होते हैं. इस स्तर पर मनुष्य न खुद और न संस्था को कुछ अच्छा योगदान दे सकते हैं. मनुष्य ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है. मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर ही मनुष्य का गुणात्मक विकास होता है. मनुष्य के गुणात्मक स्व-विकास से संस्था का भी विकास होगा.

कल्पना कीजिए, आप एक चार सिलिंडर वाली कार में यात्रा कर रहे हैं और वह कार तीन सिलिंडर पर ही काम कर रही है और उसके ईंधन में पानी मिला हुआ है. कार को चलने में काफी दिक्कत होगी और उसकी उत्पादकता व गुणवत्ता बेहद असंतोषजनक होगी, क्योंकि वह अपनी समस्त ऊर्जा का उपयोग नहीं कर पा रही है. कार आपको गंतव्य तक पहुंचा सकती है, परन्तु बहुत दिक्कत से (पहाड़ी पर शायद चढ़ भी न पाये).

कार्यस्थल पर भी यदि हम केवल दिमागी शक्ति, शरीर और भावना से कार्य कर रहे हैं तो हम केवल तीन सिलिंडर पर चल रहे हैं.यदि हम उत्कंठा, क्रोध और अशांत चित्त से काम करते हैं और सोचते हैं कि "हमारे पास सर्वोत्तम ढंग से काम करने का समय नहीं है" तो हम लोग मिलावटी ईंधन से काम कर रहे हैं. एक मुख्य अवयव जो छूट रहा है, वह है हमारी बुद्धि / विवेक - आध्यात्मिक बुद्धि.

जब तक यह गुण हमारे दैनिक कार्य-कलाप का अंश नहीं बनता है, हम अपनी पूरी क्षमता का उपयोग नहीं कर रहे होते हैं. यदि हमारे साथ आध्यात्मिक बुद्धि रहती है, तभी हम अपनी पूरी शक्ति लक्ष्य प्राप्ति की ओर लगा सकते हैं. आध्यात्मिक बुद्धि मानवीय गुणों को बढ़ावा देती है जैसे कि सत्य, सदाचारिता, शांति, प्रेम और अहिंसा. ये गुण हमारे आध्यात्मिक स्वभाव के अभिन्न अंग हैं और ये गुण यदि हमारी कार्यप्रणाली के अभिन्न अंग होते हैं तो कार्यक्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हो सकते हैं, क्योंकि :

सत्य : कार्यक्षेत्र में विश्वास और ईमानदारी को बढ़ावा देता है.

सदाचारिता : उत्तम गुणवत्ता वाले कार्य को बढ़ावा देती है.

शांति : सृजनात्मक और बुद्धिमत्तापूर्वक निर्णय लेने में मदद करती है.

प्रेम : निःस्वार्थ सेवा, दूसरों का ध्यान रखने जैसे गुण को बढ़ावा देता है.

अहिंसा : सर्वमान्य, सबों के लिये हितकारी समाधान देती है.

मजे की बात यह है कि इन गुणों की शिक्षा या प्रशिक्षण देने की आवश्यकता नहीं है. यह हमारे अंदर खुद विद्यमान हैं. इसे केवल जगाने की जरूरत है.

इन्हें कैसे जगाया जाए-

1. कार्य के दौरान या उसके बाद एक शांत जगह और शांत समय खोज लें और अपने चित्त को हर समय शांत रखने का प्रयास करें.
2. अपनी अंतरात्मा से वार्तालाप करें.
3. जो भी जवाब अंतरात्मा से आये, उसे लिख डालें.
4. अपने शरीर, भावना और दिमागी संकेतों पर गौर करें.
5. इस प्रक्रिया को जारी रखें, जब तक जरूरी हो और जब तक आपकी अंतरात्मा से उसका जवाब न मिल जाये.
6. अपनी अंतरात्मा के निर्देशानुसार कार्य करें और गौर करें कि यह आपकी कार्यप्रणाली पर कितना अच्छा प्रभाव डालता है.

अपने आप से प्रश्न करें कि "आप अपनी काबिलियत को अपने अंतर्मन से अपने कार्यस्थल में कैसे जोड़ पाते हैं."

यदि कार्यस्थल पर इन आध्यात्मिक मानवीय गुणों का समावेश हो जाये तो **कार्यस्थल इस प्रकार का दिखेगा :**

1. एक पेशेवर व्यक्ति किसी भी गलती या विलंब के बारे में सत्य बतायेगा, इससे ग्राहकों में विश्वास और जुड़ाव पैदा होगा.
2. हर कार्मिक वर्ग, यहां तक कि अधीनस्थ वर्ग भी खूब जिम्मेवारी से अपना कार्य करेंगे, चाहे कोई उन्हें सुपरवाइज कर रहा हो या नहीं.

3. कार्यपालक नये-नये सृजनात्मक तरीके खोजेंगे, जिससे ग्राहकों को अच्छी सेवा दी जा सके.

4. विक्रय से जुड़े व्यक्ति, सेवा भाव से कार्य करेंगे.

5. प्रबंधक कार्यस्थल के वातावरण को प्रदूषण मुक्त रखेंगे.

हम इन मानवीय गुणों को कार्यस्थल पर व्यवहार में किस तरह लायें :

1. **सत्यता**ः साथी कार्मिकों और ग्राहकों से ईमानदारीपूर्ण व्यवहार.

2. **सदाचारिता**ः प्रबंधन, साथी कर्मचारी और ग्राहकों से किये हुए वादे को निभाना.

3. **आंतरिक शांति**ः इससे संकटकाल, मुनाफे के समय या नुकसान के समय समभाव रहने की क्षमता आयेगी.

4. **प्रेम**ः सामनेवालों की बातें आदरपूर्वक सुनेंगे और फिर उचित निर्णय लेंगे.

5. **अहिंसा**ः दूसरों को कष्ट देकर विजयी बनने की जगह सर्वमान्य, सर्वहितकारी हल निकाला जायेगा.

इन आध्यात्मिक गुणों का विकास किया जा सकता हैः

"जल्दी शुरुआत", "धीमा चलें", पर "निश्चित व सुरक्षित पहुंचें"

जल्दी शुरुआत : आंतरिक विकास पर गौर करें, अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण करें और अपने अंदर की जागरूकता और आत्मविश्वास को मजबूत करें. अपने अंदर के आध्यात्मिक मानवीय गुणों को जगाकर उन्हें कार्यक्षेत्र से जोड़ें.

धीमा चलें : अपने आसपास विश्वास का माहौल बनायें. अपने आसपास समान विचार वाले व्यक्ति के साथ अपनी आध्यात्मिक भावना के बारे में चर्चा करें, जो कि आपकी भावना को समझ सके. इससे आपका आत्मविश्वास बढ़ेगा और अपने अन्य सहकर्मियों, रिश्तेदारों को भी इस दायरे में भविष्य में शामिल कर सकेंगे. इस प्रक्रिया से भले ही धीमी गति से, परन्तु आप अपने लिये सहयोगपूर्ण माहौल अवश्य बना लेंगे.

सुरक्षित पहुंचें : आप अपने कार्य में गुणात्मक सुधार देखेंगे. इस प्रयास को जारी रखें और अपने आत्मविश्वास में निरंतर हो रही बढ़ोत्तरी को महसूस करें.

शुरुआत में आध्यात्मिक उन्नति थोड़ी धीमी हो सकती है, परन्तु जब यह बढ़ेगी तो माहौल में क्रांतिकारी बदलाव आयेगा.

इस जगह एक बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि धार्मिक होना और आध्यात्मिक होना दोनों पूर्णतया अलग-अलग बातें हैं. धार्मिक होने का मतलब है - एक निश्चित तरीके से कर्मकांड करना. एक व्यक्ति धार्मिक हो सकता है - एक विशेष तरह से पूजा-पाठ अनुष्ठान करे, परन्तु आध्यात्मिक स्तर बहुत ही व्यापक है. यह किसी भी धर्म या संप्रदाय से बिल्कुल अलग है.

धर्म या संप्रदाय लोगों में विभेद पैदा कर सकते हैं, परन्तु अध्यात्म हमेशा लोगों को जोड़ना सिखाता है. अध्यात्म लोगों के अंदर विद्यमान मानवीय गुणों को बढ़ाता है. साथ ही संपूर्ण मानवता को एक सूत्र में पिरोने का संदेश देता है. कोई भी संस्था, संगठन, देश या व्यक्ति तब तक अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता है, जब तक कि सभी समभाव से अपनी पूरी क्षमता का उपयोग लक्ष्य प्राप्ति के लिये न करें.

हमने देखा कि बिना आध्यात्मिक मानवीय गुणों के सच्ची सफलता पाना संभव नहीं है. अतः हमें अध्यात्म को सही अर्थों में अपने जीवन में उतारने की जरूरत है, तभी सही अर्थों में कार्यक्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन आ सकता है और सही अर्थों में लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है. यह लक्ष्य वही लक्ष्य है, जिसकी बात हमने इस लेख के शुरू में की है- **सत् चित् आनंद** और **सत्यम् शिवम् सुंदरम्**.

एच.एन. सक्सेना, स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, लखनऊ में प्रभारी मुख्य प्रबंधक हैं.

पी.के. मोहन्ती

संवेगात्मक प्रतिभा : उद्देश्यपूर्ण, समृद्ध एवं शांतिपूर्ण जीवन का रहस्य

प्रतिभा के बिना जीवन अर्थहीन है. दिन प्रतिदिन, हम सभी प्रतिभा के सहारे अपने वांछित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत रहते हैं. किन्तु सबसे बड़ी समस्या, जिसे हम प्रतिभा समझते हैं, दूसरे लोग इसे मूर्खता कहते हैं. कई बार लोग अपनी तथाकथित प्रतिभा के कारण, हंसी, मजाक एवं अपमान के पात्र बनते हैं. अन्ततः वे इस स्थिति से उबरने के लिए क्रोधित होकर, प्रतिशोध की भावना से ग्रस्त हो कर तनावग्रस्त हो जाते हैं, जिससे उनका मूड खराब हो जाता है तथा वे हताशा के अन्धकार में डूब जाते हैं.

फिर, प्रतिभा क्या है?

मेरे लिए, प्रतिभा गरिमापूर्ण ढंग से जीवित रहने, जीवन में बाधाओं पर विजय पाने तथा अपने मनोवांछित लक्ष्यों की सफलतापूर्वक प्राप्ति के लिए उद्यमशील रहने के लिए सर्वशक्तिमान द्वारा हम सब को प्रदान की गई विशेषता है. अतएव, आवश्यक नहीं है कि वांछित प्रतिभा उच्चकोटि की बौद्धिक/मेधावी गतिविधि हो. यह सिर्फ सामान्य बुद्धि है, जो हमारे शरीर, मन एवं आत्मा को एकसूत्र में पिरोती है! एकनिष्ठ जागरूकता के इस क्षण को संवेगात्मक प्रतिभा कहा जाता है.

संवेगात्मक प्रतिभा की पहचान के बाद, आइये हम दिन प्रतिदिन की विशेषता की प्रक्रिया को वर्णमाला के क्रमानुसार जानें.

1. **विश्लेषण (ANALYSIS)** : तनावपूर्ण स्थितियों के बिना जीवन परिपूर्ण नहीं होता है. एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति में ऐसी स्थितियों को परिवर्तित करने तथा उन्हें निष्प्रभावी करने की क्षमता तथा इच्छा होती है.

इस विश्लेषणात्मक क्षमता से व्यक्ति को प्रत्येक अवरोध को एक उपलब्धि के भाग के रूप में पहचानने में मदद मिलती है.

2. **परोपकारिता (BENEVOLENCE)** : कई नामचीन विद्वान व्यक्ति संकीर्ण उद्देश्यों के प्रति अभी भी सनकी तथा काल्पनिक होते हैं. उनके निर्णयों से प्राकृतिक न्याय संकट में पड़ जाता है. एक संवेगात्मक प्रतिभापूर्ण व्यक्ति में इतनी बहादुरी होती है कि वह परोपकारी, समानता तथा कल्याणकारी व्यवहार करे. वास्तविक परोपकारी व्यक्ति एक न्यासी की तरह व्यवहार करता है तथा वह 'डर' अथवा 'पक्षपात' तत्व से प्रभावित नहीं होता.

3. **स्थितप्रज्ञ (COMPOSURE)** : हमारे आसपास के व्यक्ति कोई निर्जीव वस्तु नहीं हैं. वे हाड़ मांस के बने हुए हैं तथा क्रोधी, आक्रामक, असभ्य एवं उत्पाती होने का उनका अपना संवेगात्मक स्तर है.एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति में नकारात्मक रूप से आवेशग्रस्त लोगों वाली असहज स्थिति का शांतिपूर्ण ढंग से सामना करने की क्षमता होती है. यह महाभारत के युधिष्ठिर के 'स्थितप्रज्ञ' दशा की तरह है.

4. **निर्भरतायोग्यता (DEPENDABILITY)** : महत्वपूर्ण एवं स्थायी संबंधों की चरम स्थिति निर्भरता है. यह पारदर्शिता एवं विश्वास पर आधारित होती है. एक संवेगात्मक प्रतिभा वाला व्यक्ति अपने किये गये वादों को पूरा करके स्वाभाविक रूप से निर्भरता-योग्य होता है. निर्भरता से सीख मिलती है कि प्रत्येक जीवित प्राणी एक अद्भुत रचना है तथा जियो और दूसरे को उसकी अपनी इच्छानुसार जीने दो, के विश्वास के साथ जी रहा है.

5. **समानुभूति (EMPATHY)** : आमतौर पर दुनिया सार्वजनिक रूप से पर्याप्त सहानुभूति व्यक्त करके सहायता करने का भरोसा दिलाती है. इसके विपरीत, संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति समानुभूति के माध्यम से प्राथमिक कार्य के रूप में दूसरों की समस्या को अपनी समस्या मानकर इसका सामना करता है. प्रारंभिक दौर में, बहुधा यह मातृत्व की भावना होती है, जिसमें बच्चे की स्थिति की कल्पना की जाती है तथा कठिनाइयों को दूर करने के लिए समुचित उपाय किये जाते हैं.

6. **क्षमाशीलता (FORGIVENESS)** : कई स्वयंभू महान लोग प्रगति एवं समृद्धि के लिए प्रतिशोध को अस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं. इस क्रम में वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेते हैं तथा इसके माध्यम को भूल जाते हैं. एक संवेगात्मक

प्रतिभायुक्त व्यक्ति स्वेच्छा से देना तथा शालीनतापूर्वक भूल जाना पसंद करेगा. उसके लिए क्षमाशीलता सर्वशक्तिमान द्वारा दिया गया एक गुण है, न कि व्यक्तिगत कमजोरी.

7. **कृतज्ञता (GRATITUDE)** : तकनीकी विशेषज्ञ प्रायः अपने व्यक्तिगत कौशल पर अहंकार करते हैं तथा बिना इसके आधार को समझे, स्वयं को एक संस्था के रूप में सोचने लगते हैं. वे हमेशा बिना किसी के योगदान के स्वयं को अपना भाग्यविधाता होने का दावा करते हैं. एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति अपनी सर्वोत्तम उपलब्धियों के लिए सदाशयतापूर्वक दूसरों के योगदान को स्वीकार करता है.

8. **विनम्रता (HUMILITY)** : संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति का विशेष गुण [USP] विनम्रता है. अपने दृष्टिकोण/निर्णयों पर दृढ़ रहते हुए भी वह स्वाभाविक रूप से विनम्र होता है. धर्मपुस्तक की प्रसिद्ध पंक्ति में कहा गया है, "नम्रोति फलिनो वृक्षयाः नम्रोति गुणिनो जनाः", अर्थात् मीठे फलों से लदे हुए वृक्ष अपनी लम्बी-लम्बी डालों के माध्यम से नीचे झुक जाते हैं. इसी प्रकार अच्छे गुणों से युक्त व्यक्ति अपनी विनयशीलता से और अधिक विनम्र हो जाते हैं.

9. **आत्मावलोकन (INTROSPECTION)** : कई बार भ्रम एवं अनिर्णय के कारण विचारों का मुक्त प्रवाह एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया ठप्प हो जाती है. निर्णय लेने वाले कई बार स्वयं को चक्रव्यूह में घिरे अभिमन्यु की तरह असहाय महसूस करते हैं. केवल, संवेगात्मक प्रतिभा वाला व्यक्ति ही आत्मावलोकन के द्वारा भ्रम एवं अनिर्णय के इस चक्रव्यूह से बाहर निकल कर सर्वश्रेष्ठ निर्णय ले पाता है. उसके लिए, खुद एवं खुदा चेतन, अवचेतन तथा अचेतन व्यवहार के सभी स्तरों पर अविभाज्य अस्तित्व हैं.

10. **विवेकदृष्टि (JUDICIOUSNESS)** : आमतौर पर दुनिया के मेधावी लोग व्यक्तियों का आकलन तीखी टिप्पणियों के द्वारा करते हैं; संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति उस व्यक्ति के प्रति बिना किसी दुर्भावना के उद्देश्य का आकलन करता है. वह जोर से स्वयं से पूछता है - क्या मेरे विचार/ भाषण/ कार्य/निर्णय अधिकांश साथी मनुष्यों के दुखों को कम करके उनकी प्रसन्नता को बढ़ा सकते हैं?

11. **उत्कंठा (KEENNESS)** : एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति कभी भी जल्दबाजी में निर्णय नहीं लेता है. वह सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी के लिए

भी अपनी उत्कंठा का स्तर संतुलित रखता है. वह उत्सुकता की प्रक्रिया को प्यार करता है तथा सर्वश्रेष्ठ संभव समाधान के सूक्ष्म से सूक्ष्म ब्यौरे को जानने का प्रयास करता है.

12. **अध्ययन (LEARNING)** : संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति के लिए अध्ययन एक अनवरत प्रक्रिया तथा जीवन का भाग है. वह अध्ययन करने के लिए जीवित रहता है तथा जीवित रहने के लिए अध्ययन करता है !! उसके लिए सर्वश्रेष्ठ सबक गलतियों से सीखना है. वह प्रायः स्वयं की समीक्षा करता है - "मैं ईमानदारीपूर्वक अपने प्रयास में हजारों गलतियां कर सकता हूं तथा इस क्रम में नुकसान भी उठा सकता हूं, किन्तु न तो मैं अपने प्रयासों से पीछे हटूंगा और न ही पुरानी गलतियों को दोहराऊंगा."

13. **ध्यान (MEDITATION)** : मस्तिष्क में यह प्रक्रिया चलती रहनी चाहिए कि यह व्यक्ति का सम्पूर्ण अस्तित्व नहीं है. संवेगात्मक प्रतिभा वाला व्यक्ति मन के व्यापक उतार-चढ़ावों को स्वीकार करता है तथा विद्यमान क्षण के द्वारा इस पर विजय प्राप्त करता है. उसके लिए यह सबसे लाभदायक गतिविधि है, जहां वह अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा के लिए अपने अन्दर एवं बाहर के सम्पूर्ण ब्रह्मांड को एकाकार करता है.

14. **प्रभावहीन करना (NEUTRALIZING)** : आमतौर पर दुनिया भय, पक्षपात एवं पूर्वाग्रह से ग्रस्त होकर किसी बात के एक पक्ष को ही देखती है; संवेगात्मक प्रतिभा वाला व्यक्ति बिना किसी दबाव के आगे झुके समुचित रूप से दोनों पक्षों पर ध्यान देता है.

15. **उद्देश्य (OBJECTIVITY)** : एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति का मानना है कि सम्पूर्ण विश्व वैसा ही है, जैसा इसे होना चाहिए. कैसा भी कठिन क्षण हो, वह जिम्मेदारीपूर्वक उस पर विजय प्राप्त करता है. अधिकांश लोग साधन और साध्य में अन्तर को लेकर भ्रमित रहते हैं, किन्तु प्रतिभा साधन और साध्य में अन्तर को समझती है.

16. **धैर्य (PATIENCE)** : संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति धैर्य तथा संरक्षा को जीवन के एक भाग की विशेषता के रूप में स्वीकार करता है और विश्वास करता है कि जीवन का अंत कभी नहीं होता है तथा समस्याओं से ही संभावनाएं जन्म लेती हैं. वह दृढ़तापूर्वक मानता है कि चिलचिलाती धूप, अस्त होता हुआ सूर्य तथा उगता हुआ सूर्य विभिन्न स्थितियां हैं, जो लगातार परिवर्तित होती रहती हैं.

17. **शांति (QUENCHING)** : एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति का सदा प्रयास रहता है कि वह ऐसी किसी समस्या का समाधान कर दे, जो आगे चल कर विकराल हो सकती है. स्पष्ट रूप से व्यक्तिगत मतभेदों को समाप्त कराके टीम को एक साथ बनाये रखना एक गुण है.

18. **विवेकीकरण (RATIONALIZING)** : यह तुलन पत्र की तरह का विवेकीकरण है, जिसमें सभी सकारात्मक (आस्तियों) एवं नकारात्मक (देयताओं) की अन्ततः नेटिंग करके उन्हें शून्य किया जाता है. इस प्रकार मूल्यों को स्थापित करके उन्हें कायम रखना एक कला है. संवेगात्मक प्रतिभायुक्त की यह सचेत गतिविधि उसका विश्वास एवं साख बढ़ाने में सहायक होगी.

19. **सहक्रिया (SYNERGY)** : संवेगात्मक प्रतिभा के व्यक्ति का गुण है कि वह अधिकतम परिणाम के लिए आन्तरिक एवं बाहरी एकता का विधिवत निर्माण करे! यह ऊर्जा का द्विगुणीकरण, शक्ति में वृद्धि, बाधाओं का खंडन तथा नकारात्मक भावनाओं में कमी की प्रक्रिया है.

20. **विश्वास (TRUST)** : एक संवेगात्मक व्यक्ति मानता है कि यह कभी व्यर्थ नहीं जाता है. वह एक आर्किटेक्ट की तरह कदम दर कदम मूल्यों को जोड़ते हुए सीधी प्रगति के लिए संबंधों के स्तंभ को मजबूती प्रदान करता है. विश्वास वह स्तंभ है, जिस पर समय का प्रभाव नहीं पड़ता है, बल्कि पुरावस्तु की तरह इसके मूल्य में वृद्धि होती है.

21. **अपठन (UNLEARNING)** : एक संवेगात्मक प्रतिभावाला व्यक्ति जब जब नया कार्य करता है, प्रत्येक बार पुराने विचारों को त्याग कर स्वयं की खोज दोबारा करता है. यह कभी समाप्त न होने वाली सृजनात्मकता में वृद्धि करने की प्रक्रिया है.

22. **चित्रण (VISUALIZING)** : संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति की विशेषता है कि वह तृतीय एवं छठी इन्द्रिय से आगे एवं पीछे स्पष्ट रूप से देखता है. यह आगे दूर तक तथा स्पष्टतया देखने का विशेष गुण है.

23. **कार्ययोग्यता (WORKABILITY)** : संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति का स्वाभाविक गुण है कि वह बहु संस्कृति वाले बड़े संगठन में दीर्घावधि संभाव्य कार्ययोग्यता के लिए समय, गति एवं दिशा में तादात्म्य स्थापित कर लेता है. यह लोगों के वैविध्यपूर्ण, बहु सांस्कृतिक संगठन के निकट जाने की प्राकृतिक कला है.

24. **शौर्यप्रदर्शन (EXEMPLIFYING)** : आगे बढ़ कर इस प्रदर्शन के साथ नेतृत्व करना कि मानव भावनाओं को बड़े कार्यों के लिए नियंत्रित, नियमित एवं उपयोग किया जा सकता है. इसमें प्यारपूर्वक सुरक्षा की द्वितीय पंक्ति को आगे बढ़ाने के लिए उदारतापूर्वक त्याग करना भी शामिल है.

25. **यौगिक (YOGIC)** : एक संवेगात्मक प्रतिभायुक्त व्यक्ति भलीभांति जानता है कि यद्यपि उसे एक राजा जैसी शक्ति प्राप्त है, किन्तु अन्त में भोग-विलास से दूर रह कर वह आन्तरिक रूप से सच्चा योगी है. बाहरी दुनिया के लिए सिंहासन पर विराजमान उसका शरीर आकर्षक है, फिर भी वह दिल में अलगाव के भाव के साथ आध्यात्मिक मुद्रा में है.

26. **उत्कंठा (ZEAL)** : अत्यधिक परीक्षा की घड़ी में नियंत्रित हो कर उत्कंठा प्रदर्शित करना एक संवेगात्मक प्रतिभावाले व्यक्ति की सबसे मूल्यवान संपत्ति है. वह दृढ़तापूर्वक यह भावना व्यक्त करता है कि दुनिया में कुछ भी समाप्त नहीं होता है.

अन्त में, एक संवेगात्मक प्रतिभावाला व्यक्ति न तो भगवान है और न ही व्यक्तियों को धोखा देनेवाला है. इस ब्रह्मांड की प्रत्येक रचना के पास दैवी शक्ति उपलब्ध है, जिसमें जनकल्याण के परोपकार की भावना है. अतः न तो वह स्वयं का अथवा किसी अन्य का अवांछित/अनचाहे तत्व के रूप में तिरस्कार करता है. उसकी प्रार्थना है:

सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चित् दुःख भाग भवेत् !

संवेगात्मक प्रतिभावान के लिए **जीवन एक बोझ नहीं, बल्कि अनंत उत्सव है** !

पी.के. मोहन्ती, स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में मुख्य प्रबंधक (प्रशिक्षण) हैं.

के.आर. जयप्रकाश

जिंदगी में पल बनाम पलों में जिंदगी

आप देख पायेंगे मुझे जंग हारते हुए कभी
लेकिन मुझे नहीं देख सकेंगे कभी नापसंदगी या
अति आत्मविश्वास के कारण समय गंवाते हुए.

- नेपोलियन बोनापार्ट, मशहूर फ्रेंच सम्राट

इंसान की औसतन आयु सीमा लगभग 70 वर्ष की होती है. हम में से कई लोगों को यह अवधि बड़ी लंबी लगती होगी. इस अवधि का एक प्रमुख गुण होता है, जिसे हम **अनिश्चितता** कह सकते हैं, जैसे संवेदनाओं से भरा नाटक हो. मैं अपनी विचारधारा को आपके सम्मुख रखने से पहले अपनी सुविधा के लिए इंसान की जिंदगी की अनिश्चितता की घटनाओं को नजरअंदाज करते हुए आगे बढ़ना चाहता हूं. अब आप स्वयं अपनी जिंदगी को ही देखें. कई साल पहले मुझे एक सह कर्मचारी की एक कार्यालयीन दौरे में बतायी एक विचित्र धारणा याद है. मुझसे पूछा था कि क्या आपने कभी ''टाइम बैंक इंटरनेशनल'' के बारे में सुना है. मेरे जवाब की प्रतीक्षा किये बिना ही आगे कहने लगे कि ''मैं जानता हूं आपने कभी ऐसी संस्था के बारे में सुना नहीं होगा, चूंकि इस नाम का कोई बैंक है ही नहीं''. दरअसल ''समय प्रबंधन'' पर किसी विद्वान द्वारा अनुभव की गयी यह एक अवधारणा है. उस अवधारणा को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है : कल्पना करें कि आपका एक कार्यदिवस एक बैंक खाता है, उस खाते में समयरूपी जमा है, लेकिन इस खाते की कुछ शर्तें ऐसी हैं, एक दिन में आपके पास 86400 सेकंड शेष जरूर हैं, पर इन सारे सेकंड को उसी दिन खर्च करना होगा. चूंकि इस जमा में बचे सेकंड को न तो आगे उपयोग में ला सकते हैं, न ही एक अतिरिक्त सेकंड उपलब्ध होगा. इस अवधारणा को समझना और समझाना आसान जरूर है, पर जब अमल करने की कोशिश करेंगे, तभी पता चलेगा कितना कठिन है. अपने विचार से जीवन को हमेशा अनुकरणीय बनायें, लेकिन इस

प्रयास में हम कहां तक सफल हो पाते हैं, दावा नहीं कर पाते हैं. हम दिन में सोते हैं, यात्रा करते हैं, मित्रों से बात करते हैं, टी वी देखते हैं, लेकिन दिन के अंत में बैठकर जब हम उस दिन का तुलनपत्र बनाते हैं तो हम स्वयं यह बात जानकर दुखी होंगे कि नकदी प्रबंधन की तुलना में समय प्रबंधन में हम सक्षम नहीं हैं और समय प्रबंधन में अपने आपको मानक श्रेणी में नहीं रख पाते. लेकिन हमें इस बात को लेकर चिंतित होने की जरूरत नहीं है, चूंकि इस दुनिया में कोई भी पूर्णतः सही और स्थायी नहीं है. इन दोनों में जिस व्यक्ति में स्थायीपन है, उसे पूर्णतः सही होने वाले व्यक्ति की तुलना में अधिक सम्माननीय माना जाता है. पूर्णतः सही होने वाले व्यक्ति में स्थायीपन का अभाव होता है.

किसी महानुभाव ने कहा है कि जीवन एक पियानो की तरह होता है. पियानो में सफेद रंग की कीज़ जीवन के सक्रिय पलों के समान हैं और काले रंग की कीज़ जीवन के निष्क्रिय पलों के समान मान सकते हैं. कुल मिलाकर सारी कीज़ मिलकर बहुत सुंदर संगीत जनित कर सकती हैं, ठीक उसी प्रकार सक्रिय पल यादगार संस्मरण लेकर जीवन की चिरस्मरणीय यादें बन जाती हैं तो दूसरी ओर निष्क्रिय पल जीवन के सुस्त एवं भूलने योग्य पल बन जाते हैं. सक्रिय पलों में मानवीय संबंध बनते हैं या बिगड़ते हैं. दरअसल ये संबंध किसी एक प्रसंग में बनते हैं, कुछ दूर जाकर समाप्त हो जाते हैं. कुछेक बड़ी तेजी से और जीवन भर के संबंध बन जाते हैं या उसी समय भी टूट जाते हैं. कुछ संबंध पीढ़ी दर पीढ़ी के बन जाते हैं. ''पहली नजर में प्यार होना'' जैसे वाक्यांश मुझे अच्छे लगते हैं. इसलिए नहीं है कि मुझे मेरी पत्नी से इसी प्रकार प्यार हुआ. चूंकि यह एक ऐसी भावना है, जिसमें ऐसा महसूस होता है कि उस एक सुंदर पल में ही सब कुछ हो जाने की भावना जागृत होती है. यह भावना उस पल तक अपने अंदर थी ही नहीं, बल्कि कहीं बाहर से आयी. ऐसे पलों को हर व्यक्ति जीवन-भर याद रखना चाहेगा.

आपको मैं एक घटना के बारे में बताना चाहूंगा. इसमें निहित धारणा आपको उक्त सिद्धांत से एक कदम आगे ले जा सकती है. यह घटना एक वर्ष पहले की है. एक पेंशनभोगी ने शाखा में आकर प्रबंधक से कहा कि उसे रु.3.00 लाख की जमाराशि आहरित करनी है. शाखा प्रबंधक ने आदतन उससे आहरण का कारण पूछा. उस सेवा निवृत्त प्रोफेसर ने स्पष्ट किया कि बैंक उन्हें केवल 9% ब्याज दे रहा है, जबकि एक सहकारी बैंक उन्हें 11% ब्याज देने का वायदा कर रहा है. ग्राहक का कारण उचित था. शाखा प्रबंधक ने उनका खाता बंद कर उनकी जमाराशि लौटा दी. ग्राहक सहर्ष दूसरे बैंक में खाता खोलने चला गया. जैसे ही, वह दूसरे बैंक में खाता

खोलने गया, तभी पहले बैंक से दूसरे बैंक के शाखा प्रबंधक को यह पता लगाने के लिए फोन आया कि ग्राहक नकदी के साथ सकुशल शाखा पहुंचा है कि नहीं. यह बात सुनते ही ग्राहक दूसरे बैंक में खाता खोलने का विचार बदल कर, पहले बैंक में वापस जाते हुए, शाखा प्रबंधक के कानों में धीमी आवाज में कह गया कि जो आदर पहले बैंक ने दर्शाया है, उसके आगे 2% ब्याज को छोड़ना बड़ी बात नहीं है.

मैं यहां कुछ ''सच्चे पलों'' की सूची दे रहा हूं, जो औसतन सभी के लिए लागू होती है :

- जब घर में बच्चा होता है
- पेट में दर्द होने तक हंसना
- मन पसंद गाना सुनते हुए
- बिस्तर में सोते हुए बारिश की आवाज सुनते हुए
- अंतिम परीक्षा को उत्तीर्ण करने पर
- ऐसे व्यक्ति से फोन आने पर, जिनसे कई दिनों से मिले नहीं, पर मिलना चाहते हों
- कोई आपके बारे में अच्छा कहते हुए संयोगवश सुनने में आना
- अचानक नींद से जाग गए और पता चले कि सोने के लिए और 2 घंटे बचे हैं
- नये मित्र बनने पर
- किसी से यह कहते हुए कि ''मुझे तुम से प्यार हो गया''.

हर मानवीय संबंध की सफलता या असफलता उसके आरंभ होने के हालात पर निर्भर करती है न कि उस पल पर. यही कारण किसी कारोबारी संस्था के लिए भी समान रूप से महत्वपूर्ण है. ''सच्चे पल'' के सिद्धांत के प्रवर्तक श्री जॉन कार्लसन हैं. पूरी दुनिया इस तथ्य से परिचित है कि इसी सिद्धांत के माध्यम से उन्होंने स्कैन्डेनेवियन एअरलाइन सिस्टम को बरबाद होने से बचाया है, जिस एअरलाइन ने पूरी तरह से मिट जाने की स्थिति से उबर कर एक वर्ष की छोटी अवधि में ''बेस्ट एअरलाइन ऑफ द इयर'' का अवार्ड प्राप्त किया.

ऐसा माना जाता है कि हमें हर दिन 50000 सच्चे पल मिलते हैं, जो कभी अच्छे या बुरे हो सकते हैं. यानी कुछेक समस्याओं के पलों को भी सच्चे पलों में

शामिल कर सकते हैं. जहां तक समस्याओं का सामना करना है, उसके लिए कुछ बुनियादी सिद्धांत इस प्रकार हैं :

- ❖ समस्या को ध्यान में रखते हुए पहले कोई निर्णय लें, फिर उसका सामना करना बेहतर होता है, न कि बिना कोई निर्णय लिये ही समस्या का सामना करें.
- ❖ जब भी आप किसी समस्या को महसूस करते हैं, तभी उसका समाधान ढूंढ कर उसे हल करें, न कि उस समस्या की ओर किसी और द्वारा आपका ध्यान आकर्षित कराने तक या समस्या और गंभीर होने की प्रतीक्षा करें.

हर कारोबारी संस्था को दिन में हजारों बार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपने ग्राहकों का सामना करना पड़ता है. ऐसे पलों में जाने या अनजाने उनके व्यवहार से यह पता चल जाता है कि कौन ग्राहक आपके लिए विश्वसनीय है और कौन से नहीं हैं. आपको ऐसे ग्राहक पर ज्यादा निर्भर नहीं रहना होगा, जो अल्प समय के लिए बहुत बड़ी मात्रा में कारोबार लाया है. सही ग्राहक वही होगा, जो लंबी अवधि के लिए निरंतर आपके कारोबार में थोड़ी ही सही, पर वृद्धि होने में जरूर सहयोग देता है. ग्राहक संबंध प्रबंधन और ग्राहक व्यवहार में उन्नति के लिए कुछेक सच्चे पलों को नीचे दिया गया है :

- विद्यमान ग्राहक की तुलना में नये ग्राहक को उत्पाद की बिक्री करने में 6 गुना ज्यादा समय व्यय होता है.
- एक संतुष्ट ग्राहक 8 - 10 लोगों से कहेगा.
- 5% ग्राहकों को यदि हम अपने बैंक में रोक सके तो हमारा लाभ 85% तक बढ़ेगा.
- विद्यमान ग्राहकों को उत्पाद की बिक्री करने में 50% सफलता और नये ग्राहकों को उत्पाद की बिक्री करने में 15% सफलता संभव है.
- 70% ग्राहक जो हमेशा शिकायत करते हैं, उनकी शिकायतों को दूर करने से वे बैंक नहीं छोड़ेंगे.
- 80% लाभ केवल 20% ग्राहकों से अर्जित किया जाता है. अतः इस विशेष समूह को पहचान कर विशेष ध्यान दिया जाए.

इस बात पर दो राय नहीं है कि किसी भी संस्था की वृद्धि और विकास उसके ग्राहक आधार पर निर्भर होता है और यही आधार हम तब महसूस कर सकते हैं,

जब वे संस्था के विकास में प्रतिभागी होते हैं. ऐसा ग्राहक समूह तभी मिलेगा, जब हमारे ग्राहक हमसे संतुष्ट होते हैं.

सभी को चीज की गुणवत्ता पसंद है. उसके बाद चीज को खरीदने में मूल्य पर ध्यान जाता है. अंतिम निर्णय लेने के लिए यही 2 मूल कारक आधार बनते हैं. उसके बाद उसी वस्तु को दुबारा खरीदने या नये ग्राहक को उस वस्तु की सिफारिश करने के लिए बाध्य करना है. तदुपरांत उत्पादक या विक्रेता द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा महत्वपूर्ण होती है.

हमें जिंदगी में घटने वाले सभी पलों को पूर्णतः अनुभव करना चाहिए और अपने अनुभव से दूसरों को भी अवगत कराना चाहिए. हमारे अनुभव को दूसरे भी हमेशा के लिए याद रख सकें और खुले मन से उसका आनंद उठा सकें, तभी हम अपने जीवन को मूल्यवान बना सकेंगे और हमारे कारोबार की आयु भी लंबी होगी.

के.आर. जयप्रकाश, क्षे का, एर्णाकुलम के अग्रणी जिला विभाग में मुख्य प्रबंधक हैं.

कंवर भान चावला

प्रभावशाली व्यक्तित्व के लक्षण

प्रभावशाली व्यक्तित्व के लक्षणों पर चर्चा करने से पूर्व यह जानना अत्यधिक आवश्यक है कि व्यक्तित्व क्या है? व्यक्तित्व के संबंध में सामान्य व्यक्ति भिन्न-भिन्न राय रखते हैं. सामान्य व्यक्ति किसी के शारीरिक सौन्दर्य से, किसी के पहरावे से, किसी की सम्पन्नता से, किसी की प्रतिष्ठा से, किसी के ज्ञान से, किसी के बातचीत करने के तरीके से प्रभावित होकर उसके व्यक्तित्व को अच्छा मानते हैं. सामान्यतः व्यक्तित्व को वेशभूषा, सौन्दर्य, लम्बाई, वर्ण, जाति या समाज की विभिन्न मान्यताओं तथा व्यवहार के आधार पर मूल्यांकित किया जाता है.

व्यक्तित्व मनोविज्ञान का एक विषय है, जिसे विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है. मनोवैज्ञानिकों द्वारा परिभाषित सामान्य अर्थ में व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक, आर्थिक, यौनिक एवं व्यावहारिक रूप में समाज में अपनी जो छवि निर्मित करता है, वही उसका व्यक्तित्व है. दूसरे अर्थों में व्यक्ति के विभिन्न गुणों एवं विशेषताओं से उसकी छवि का निर्माण होता है, जिसे उसका व्यक्तित्व कहा जाता है. व्यक्ति के गुण एवं विशेषताएं विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार बदलते रहते हैं. एक वातावरण से दूसरे वातावरण में व्यक्ति का केवल व्यवहार ही नहीं बदलता, अपितु उसकी सामाजिक, मानसिक दशाएं भी बदल जाती हैं. इसप्रकार व्यक्ति का व्यक्तित्व भी बदलता रहता है. व्यक्तित्व के संबंध में एक मनोवैज्ञानिक आलपोर्ट ने बहुत अच्छी परिभाषा दी है - "Personality is a dynamic organisation of psycho physical system of the individual which determines his unique adjustment within the environment".

इस परिभाषा में व्यक्तित्व के संबंध में 4 बातें स्पष्ट होती हैं :

1. मन-शरीर की व्यवस्था : मन और शरीर परस्पर सम्बद्ध हैं और इनकी व्यवस्था व्यक्तित्व का निर्माण करती है. यहां मन को सभी मानसिक/आत्मिक/संवेगात्मक/बौद्धिक क्रियाओं के साथ व्यापक अर्थ में लिया गया है.

2. गतिशीलता : मन और शरीर की व्यवस्था का गतिशील संगठन अर्थात् मन और शरीर निरंतर परिवर्तनशील हैं, जिसके कारण हमारा व्यक्तित्व भी गतिशील या परिवर्तनशील है.

3. वातावरण : व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण वातावरण के अनुसार होता है. वातावरण ही उसमें विभिन्न संस्कारों, विचारों, भावनाओं, मतों, आग्रहों एवं पूर्वाग्रहों का सृजन करता है. वातावरण में परिवर्तन से व्यक्तित्व में भी परिवर्तन आता है.

4. अद्वितीय समायोजन : प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय है अर्थात् एक व्यक्ति के समान कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है, इसलिए वातावरण में उसका समायोजन भी अद्वितीय है.

प्रभावशाली व्यक्तित्व के लक्षण

व्यक्तित्व के लक्षण असंख्य हैं. सामान्यतः व्यक्ति में जितने भी गुण-दोष हैं, सभी उसके लक्षण हैं. जिस व्यक्ति में जो गुण-दोष अधिक होता है, उसके आधार पर ही हम उसकी प्रभावशीलता मानते हैं. प्रभावशीलता अर्थात् व्यक्तित्व का प्रभाव अच्छा या बुरा हो सकता है. सामान्यतः प्रभावशाली व्यक्तित्व का अर्थ सकारात्मक व्यक्तित्व के रूप में लिया जाता है. प्रभावशाली व्यक्तित्व के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं :

➢ शारीरिक स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य

अच्छा लम्बा-चौड़ा शरीर किसे प्रभावित नहीं करता है. किसी के व्यक्तित्व का पहला प्रभाव उसके शरीर की लम्बाई-चौड़ाई, स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य से ही पड़ता है. वस्तुतः व्यक्ति का शारीरिक सौन्दर्य मन में खुशी का संचार करता है. धर्मेन्द्र, हेमामालिनी, मधुबाला, अमिताभ, दारा सिंह, मधुबाला, ऐश्वर्या राय आदि के शारीरिक सौन्दर्य ने उनके व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. उचित खान-पान की आदतें, व्यायाम एवं शरीर की देखभाल से ही शरीर आकर्षक, सुन्दर एवं स्वस्थ बनता है. यदि हमारा शरीर स्वस्थ है तो हमें दुनिया भी अच्छी लगती है. शरीर का स्वास्थ्य बिगड़ जाने पर जीने का मजा कम हो जाता है तथा व्यक्ति अपना प्रभाव गंवा बैठता है. हमारा शरीर पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश इन पंचतत्वों से बना है. शरीर को स्वस्थ, सुन्दर एवं प्रभावशाली बनाने के लिए इन पदार्थों का शुद्ध एवं सही उपभोग करना चाहिए.

➢ बौद्धिक विकास

व्यक्ति का शरीर कितना ही बलशाली एवं आकर्षक हो, लेकिन बुद्धिहीन होने पर महत्वहीन एवं प्रभावहीन हो जाता है. मंदबुद्धि लम्बा-चौड़ा सुन्दर व्यक्ति बुद्धि की कमी के कारण प्रभावशाली नहीं होता. सामान्यतः लोग किसी व्यक्ति की गणित एवं विज्ञान में रुचि के कारण उसकी बुद्धि को कुशाग्र मान लेते हैं. यह एक गलत धारणा है. ज्ञान का भण्डार विपुल है और ज्ञान के विषय भी अनेक हैं. प्रकृति ने सभी व्यक्तियों को प्रत्येक विषय को समझने की प्रतिभा नहीं दी है. इसलिए अन्य विषयों का ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों को हमें कम बुद्धिमान नहीं मानना चाहिए. बुद्धि का विकास केवल गणित एवं विज्ञान के विषयों से नहीं होता, अपितु जीवन की समस्याओं को विवेकपूर्ण ढंग से सुलझाते हुए, वातावरण के साथ प्रभावशाली रूप से समायोजन करते हुए तथा उद्देश्यपूर्ण कार्य करते हुए जीवन-यापन करने से होता है. बुद्धि को हमें सम्पूर्ण क्षमता के साथ ही आंकना चाहिए. वस्तुतः बुद्धि को वातावरण के अनुसार व्यक्ति की युक्तियुक्त सोच, उद्देश्यपूर्ण कार्य और प्रभावशाली व्यवहार की व्यापक क्षमता कहा जा सकता है.

हमें, विशेषकर मां-बाप को, यह नहीं समझना चाहिए कि यदि उनका बच्चा गणित एवं विज्ञान में अच्छा नहीं है तो वह जीवन में उन्नति नहीं कर सकता. वैज्ञानिक, लेखक, नेता, अभिनेता, नीति-निर्माता, अर्थशास्त्री, योजनाकार अपनी बुद्धि का लोहा मनाकर लोगों के दिलों पर राज करते हैं. अब्राहिम लिंकन, बिल गेट्स, नारायण मूर्ति, धीरूभाई अंबानी, अटल बिहारी वाजपेयी, जवाहर लाल नेहरु, महात्मा गांधी, अमिताभ बच्चन, शाहरुख तथा उन सरीखे अन्य नेताओं, अभिनेताओं एवं व्यवसायियों ने बुद्धि की सम्पूर्ण क्षमता के आधार पर ही सफलता को प्राप्त किया. एक अध्ययन के अनुसार अधिकांश व्यक्ति अपनी बौद्धिक क्षमता का 15% ही उपयोग करते हैं. जो व्यक्ति अपनी बौद्धिक क्षमता का जितना अधिक प्रयोग करता है, उसकी बुद्धि का विकास उतना ही अधिक होता है और उसका व्यक्तित्व भी उतना ही अधिक प्रभावशाली बनता है.

वस्तुतः हमारी शिक्षा-प्रणाली दोषपूर्ण है, जो बच्चों की वास्तविक एवं प्राकृतिक मानसिक शक्तियों का विकास न करके उनमें रटने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती

है. केवल सूचनाओं को ग्रहण करने से मानसिक शक्तियों का उचित विकास संभव नहीं है. मानसिक शक्तियों का विकास बच्चों की कल्पनाशीलता, रचनात्मकता, समस्या-समाधान, विवेक-बुद्धि, स्मरण-शक्ति, चिंतन-मनन आदि की सम्पूर्ण क्षमता पर निर्भर करता है. शिक्षा वही है, जो बच्चे को जीवन के लिए तैयार करे, न कि किसी एक-दो विषय में अच्छा न होने पर उसमें हीनता की भावना भर दे.

➢ सम्प्रेषणीयता

सम्प्रेषणीयता किसी भी व्यक्ति को प्रभावशाली बना देती है. अच्छा वक्ता अपनी वक्तृत्व क्षमता के कारण ही लोगों को प्रेरित करता है. साधु-संत, नेता-अभिनेता, शिक्षक-प्रचारक, सेल्ज़मैन, वकील अपने इसी गुण के कारण अपना अच्छा विपणन करने में सफल हो जाते हैं. जो व्यक्ति अपने ज्ञान, इच्छाओं, अधिकारों एवं आवश्यकताओं को उचित ढंग से प्रस्तुत नहीं कर पाता, उसे जीवन में अधिक सफलता नहीं मिलती है.

प्रभावशाली सम्प्रेषणीयता के लिए भाषा का ज्ञान अत्यधिक आवश्यक है. व्यक्ति जितनी अधिक भाषाओं का ज्ञान रखता है, उसका सामाजिक दायरा भी उतना ही व्यापक बन जाता है. व्यक्ति के सामाजिक दायरे का व्यास ही उसकी सफलता को निश्चित करता है. नेता, अभिनेता, व्यवसायी अपना सामाजिक दायरा बढ़ाकर ही सफलता प्राप्त करते हैं. भाषा मौखिक (verbal) या अमौखिक (non-verbal) हो सकती है, लेकिन उसमें सम्प्रेषणीयता होनी चाहिए.

व्यक्ति अपने उत्पाद या चीज को नहीं, अपितु अपने गुणों को बेचता है. व्यक्ति के गुण सम्प्रेषणीयता से ही प्रभाव छोड़ते हैं. उदाहरण के तौर पर आपको अपने कॉलेज के वे प्रोफेसर आज भी स्मरण होंगे, जो अपने विचारों एवं ज्ञान की अभिव्यक्ति बड़े अच्छे ढंग से करते थे और उनकी बात सीधे आपके दिल-ओ-दिमाग तक पहुंच जाती थी. बैंकर और ग्राहक, विक्रेता और क्रेता के संबंध सम्प्रेषणीयता के कारण ही अच्छे बनते हैं. जो दुकानदार या विक्रेता (सेल्ज़मैन) अच्छी एवं प्रभावशाली भाषा का प्रयोग करते हैं, वे ग्राहकों को अपना उत्पाद या चीज बेचने में सफल होते हैं. इस संबंध में समान कंपनी के टीवी/फ्रिज तथा ऑडियो-वीडियो उपकरणों का कारोबार करने वाले दो भाइयों का उदाहरण दिया जा सकता है, जिनकी दुकानें एक ही बाजार में आमने-सामने हैं. पहला भाई, अपनी चीज को बेचने के लिए अच्छी भाषा का प्रयोग करता है तथा संबंधित चीज के संबंध में अनेक विशेषताएं बता देता है और विनम्रतापूर्वक मुस्कुराकर अपनी चीज का उचित दाम प्राप्त करके उचित लाभ कमा लेता है. वह एक दिन में 10-15 टीवी/फ्रिज बेच लेता है और ग्राहक को सन्तुष्ट भी

कर देता है. दूसरा भाई, ग्राहक से बहुत कम बात करता है तथा उसे अपनी चीज की ज्यादा विशेषताएं नहीं बता पाता. दिनभर 1-2 चीजें ही बेच पाता है तथा ग्राहक को भी सन्तुष्ट नहीं कर पाता. अगर कोई ग्राहक उससे कोई चीज खरीदकर ले जाता है तो उसे चीज की गुणवत्ता के संबंध में संदेह बना रहता है. छोटे भाई का ग्राहक से संबंध विन-विन (हम खुश-तुम खुश) का है और बड़े भाई का ग्राहक से संबंध लूज़-लूज़ (हम नाखुश-तुम नाखुश) का है. ऐसा विशेषकर मौखिक सम्प्रेषणीयता की कमी के कारण है.

अमौखिक सम्प्रेषणीयता या शारीरिक भाषा (बॉडी लैंग्वेज) भी व्यक्तित्व को प्रभावित करती है. शरीर के विभिन्न अंगों के जरिये प्रदर्शित होने वाले हाव-भाव, भंगिमाएं भी हमारे व्यक्तित्व को सम्प्रेषणीय बनाते हैं. बिना बोले सम्प्रेषणीयता का कार्य हमारी आंखें करती हैं. आंखें प्रेम, घृणा, ईर्ष्या-द्वेष, स्वीकृति-अस्वीकृति, भय-निडरता, आश्चर्य, सरीखे असंख्य विचारों एवं भावनाओं का सम्प्रेषण करती हैं. इसी तरह, हमारी चाल, सिर के बाल, मूछें, दाढ़ी, उठने-बैठने की अदा, परोसने एवं खाने-पीने का सलीका सभी सम्प्रेषणीय हैं. उदाहरण के लिए एक व्यक्ति सदैव दाढ़ी बढ़ाकर, तरतीब से मूछें काटकर, साफ-सुथरे कपड़े पहनकर कार्यालय में आता है तो वह उत्साह का सम्प्रेषण करने के साथ-साथ अन्य व्यक्तियों को भी उत्साहित करने की प्रेरणा देता है. दूसरा व्यक्ति जो मैले-कुचैले कपड़े पहनकर, एक-दो दिन की दाढ़ी बढ़ाकर कार्यालय में आता है तो वह यही सम्प्रेषित करता है कि बस अब उससे और कुछ नहीं हो सकता, दूसरों पर भी उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है.

यदि हमारी भाषा में मर्यादित रूप में कला का समावेश हो जाए तो सम्प्रेषणीयता और अधिक आकर्षक एवं प्रभावशाली बन जाती है तथा व्यक्तित्व को चार चांद लग जाते हैं. शायर, कवि और लेखक अपनी कलात्मक भाषा के दम पर ही छाये रहते हैं. शायरों, कवियों के शेर-दोहे, उक्तियां, चुटकुले, श्लोक तथा मुहावरे एवं कहावतें यदि उचित समय पर बोले जाएं तो सामने वाले व्यक्ति में प्रसन्नता का संचार करते हैं. सम्प्रेषणीयता व्यक्तित्व में आकर्षण लाती है.

➢ कर्मशीलता

कार्यशील व्यक्ति अच्छे-बुरे प्रत्येक व्यक्ति पर अपनी छाप छोड़ता है. कार्य व्यक्ति को महान बनाता है, इसलिए विद्वानों ने कार्य को वरदान एवं भगवान कहकर विवेचित किया है. कार्य स्वार्थ-निःस्वार्थ किसी भी भावना से किया जाए, लेकिन उसके पीछे कोई प्रयोजन अवश्य होना चाहिए. निष्प्रयोजन या निरुद्देश्य किया गया कार्य निष्फल जाता है. वस्तुतः कार्य का उद्देश्य ही कार्य को प्रभावशाली बनाता है.

कोई भी कार्य छोटा या बड़ा नहीं होता, उसका उद्देश्य ही उसे छोटा या बड़ा बनाता है.

बच्चों को शैशवावस्था से ही कार्य का सम्मान करने की सीख देनी चाहिए. प्रारंभ में उन्हें घर-परिवार के छोटे-छोटे कार्य एवं जिम्मेवारियां सौंपनी चाहिए, ताकि बड़े होकर वे बड़ी-बड़ी जिम्मेवारियों एवं कार्यों को सम्भाल सकें. उन्हें किसी कार्य की जिम्मेवारी न देकर मां-बाप स्वयं उनके शत्रु बन जाते हैं. कार्य से ही व्यक्तित्व में निखार आता है. कार्य से व्यक्ति का आत्म-विश्वास एवं आत्म-सम्मान बढ़ता है. आत्म-सम्मान एवं आत्म-विश्वास के निरंतर बढ़ने से व्यक्तित्व प्रभावशाली बनता है.

हम अपने कार्यालय में भी देख सकते हैं, जो कर्मचारी अपने रोजमर्रा के कार्यों का सुचारु रूप से निष्पादन करते हैं और नये-नये कार्य करने के लिए तत्पर रहते हैं, उनके आत्म-विश्वास एवं आत्म-सम्मान का स्तर अन्य कर्मचारियों से अधिक होता है. नयी-नयी जिम्मेवारियों को उठाने वाले कर्मचारियों का व्यक्तित्व प्रभावशाली बन जाता है और सभी उन्हें सम्मान भी देते हैं.

➢ आध्यात्मिक विकास

किसी भी व्यक्तित्व का सबसे अधिक प्रभावशाली लक्षण है - आध्यात्मिक विकास. व्यक्तित्व के दो रूप हैं - 1. भौतिक या सामाजिक 2. आध्यात्मिक या सूक्ष्म.

हमारे व्यक्तित्व का शारीरिक या भौतिक या सामाजिक रूप खुली आंखों से देखा जा सकता है. इस रूप में हम किसी के पुत्र, पिता, भाई, बहन, मां, बेटी, पत्नी, पति के रूप में अथवा व्यवसायी, अध्यापक, बैंकर, डॉक्टर, इंजीनियर, क्लर्क, अधिकारी, मैनेजर तथा इसी तरह की अन्य संज्ञाओं के साथ अच्छा-बुरा, परिश्रमी, निठल्ला, बुद्धिमान्, मूर्ख, तेज-तर्रार, शौकीन, मिलनसार आदि विशेषणों के रूप में जाने जाते हैं. हमारा यह रूप शाश्वत नहीं है. शरीर, रूप, पद के समाप्त होते ही हमारा यह रूप भी नष्ट हो जाता है.

व्यक्ति का दूसरा रूप आध्यात्मिक या सूक्ष्म रूप है. इस रूप का ज्ञान होते ही व्यक्ति में परिवर्तन आते हैं. व्यक्ति सूक्ष्म रूप में एक आत्मा है और आत्मा परमात्मा का एक अंश है. परमात्मा सर्वशक्तिमान् है और आत्मा के रूप में हमारे भीतर विद्यमान है. परमात्मा की सन्तान होने के कारण सभी प्राणी परस्पर भाई-भाई हैं. सर्वशक्तिमान् केवल प्राणियों में ही नहीं, अपितु इस जगत् के कण-कण में विद्यमान है, लेकिन निराकार है. वस्तुतः आत्मा अनश्वर, निरोगी और आनन्दमय है, उसे कोई कष्ट एवं समस्या नहीं है. सभी दुःख-दर्द, समस्याएं और कठिनाइयां हमारे

भौतिक रूप की भूल-भुलैया से जुड़े हुए हैं. सन्त कबीर ने सर्वशक्तिमान् को सम्पूर्ण सृष्टि में देखकर स्वयं उसके नूर से सराबोर होकर इस प्रकार कहा है :

"लाली मेरे लाल की जित देखूं तित लाल,
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल".

आत्मा का परमात्मा से मिलन होने पर सब आवरण हटने लगते हैं और व्यक्ति "सोऽहम्" हो जाता है. व्यक्तित्व के इस अद्भुत लक्षण के कारण ही कबीर, नानक, चैतन्य जैसे सन्तों से प्रभावित होकर दुनिया ने उन्हें पलकों पर बिठाया.

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि सर्वशक्तिमान् अपने असंख्य गुणों के रूप में हमारे अंदर विद्यमान है :

"रसोऽहमप्सु कौन्तेय, प्रभास्मि शशिसूर्ययोः,
प्रणवः सर्ववेदेषुः, शब्दः खे, पौरुषं नृषुः".

(जल में स्वाद, शशि एवं सूर्य की रोशनी, वेदों का सार ओम्, आकाश की ध्वनि और पौरुष के असंख्य गुण परमात्मा सभी रूपों में विद्यमान है.)

इस सृष्टि को परमपिता की रचना मानकर सभी प्राणियों में उसका या अपना रूप देखने वाला व्यक्ति ही आध्यात्मिक व्यक्तित्व कहलाता है. इस ज्ञान की जितनी अधिक गहराई व्यक्ति में होती है और उसके अनुसार जितना अधिक उसका व्यवहार होता है तो उस व्यक्ति का प्रभाव उतना ही बढ़ता चला जाता है. आध्यात्मिक विकास से व्यक्ति में जीने की कला विकसित होती है. जिसके पास जीने की कला होती है, उससे हर व्यक्ति प्रभावित होता है. आध्यात्मिक विकास व्यक्ति के अहंकार को कम करके उसे सादगीपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा देता है. सादगी से आनन्द एवं शांति का विकास होता है, जो व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाते हैं.

➢ स्वाग्रह (Assertiveness)

स्वाग्रहता किसी भी व्यक्तित्व का प्रभावशाली लक्षण है. जीवन में सफल होने और प्रसन्न रहने के लिए यह अत्यधिक आवश्यक है. स्वाग्रही व्यक्ति स्वयं प्रसन्न रहता है तथा अपने वातावरण को भी प्रफुल्लित रखता है. स्वाग्रह एक प्रकार का व्यवहार है. स्वाग्रहपूर्ण व्यवहार दो व्यक्तियों या पक्षों के बीच होने वाले लेनदेन एवं बनने वाले संबंधों को मजबूत करता है. इसे न्यायपूर्ण व्यवहार भी कहा जा सकता है. दूसरे पक्ष या व्यक्ति की इच्छाओं, भावनाओं, सम्मान एवं न्यायोचित अधिकारों का ध्यान रखते हुए अपनी इच्छाओं, भावनाओं, सम्मान एवं न्यायोचित अधिकारों को

सुरक्षित रखकर व्यवहार करना, लेनदेन करना एवं संबंध बनाना ही स्वाग्रह है. स्वाग्रही व्यवहार किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावशाली बना देता है. इस व्यवहार को "विन-विन" व्यवहार के रूप में भी जाना जा सकता है.

बैंकर और ग्राहक, विक्रेता और क्रेता, प्रबंधन और कर्मचारी, पति और पत्नी तथा इसी तरह किन्हीं दो पक्षों में स्थापित स्वाग्रही संबंधों से दोनों पक्षों को लाभ होता है और संतोष प्राप्त होता है. यदि दोनों पक्ष स्वाग्रही व्यवहार करते हैं तो उनके संबंध दीर्घकाल तक सुख व शांति से चलते हैं. उदाहरणार्थ किसी भी व्यक्ति या संस्था को आगे बढ़ने के लिए अपनी नीतियां स्वाग्रह के आधार पर ही तैयार करनी चाहिए. जो मालिक या संस्था अपने कर्मचारियों के साथ स्वाग्रही व्यवहार रखते हैं, उनमें कर्मचारी सदैव प्रसन्नचित्, प्रफुल्लित एवं उत्साहित रहकर संस्था के लिए कार्य करते हैं. सीधी-सी बात है - कर्मचारियों से खूब काम लो, लेकिन उसके बदले में उनकी सुख-सुविधाओं का बराबर ध्यान रखो.

प्रत्येक व्यक्ति अपने हित की रक्षा करना चाहता है, इसलिए स्वाग्रह कमोबेश प्रत्येक व्यक्ति में होता है. स्वाग्रह की दृष्टि से व्यक्तित्व को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता हैः 1.आक्रामक या अत्यधिक चालाक (Aggressive or Manipulative) 2. स्वाग्रही (Assertive) 3. दब्बू या निष्क्रिय (Submissive or Passive).

सबसे पहले, आक्रामक या अत्यधिक चालाक व्यक्ति अपनी धूर्तता, दुर्बुद्धि, शक्ति या आतंक, ब्लैकमेलिंग आदि का सहारा लेकर अपने अधिकारों को प्राप्त करने के साथ-साथ दूसरों के अधिकारों का भी हनन करते हैं. ठग, धूर्त, जालसाज, गुंडे-बदमाश, आतंकवादी, अत्यधिक स्वार्थी एवं आत्म-केन्द्रित व्यक्ति इसी श्रेणी में आते हैं. ये लोग अत्यधिक मीठा बोलने वाले या आतंकी भी हो सकते हैं. ऐसे लोग हमारे आसपास काम करने वाले, रिश्तेदार या अन्य कोई भी हो सकते हैं. इन लोगों के व्यक्तित्व का प्रभाव अल्प समय के लिए या क्षणिक ही होता है. जब दूसरों को इनकी होशियारी का पता चलता है तो वे इनसे अपने व्यवहार या संबंध को सीमित कर देते हैं. इनसे दूरी बेहतर होती है.

दूसरे प्रकार के स्वाग्रही व्यक्तियों के बारे में हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं. दूसरों के न्यायोचित अधिकार का ध्यान रखने के साथ-साथ ये व्यक्ति अपने अधिकार का आग्रह कभी नहीं छोड़ते हैं. ये व्यक्ति किसी भी वातावरण, व्यवहार में अपना प्रभाव जमा लेते हैं और इनका व्यवहार लम्बे समय तक बना रहता है. अधिकांशतः इन्हें हर स्थान पर सम्मान दिया जाता है. व्यक्तित्व की दृढ़ता, ईमानदारी, न्यायप्रियता, सच्चाई एवं व्यवहार की उत्कृष्टता के कारण ये हरेक व्यक्ति पर अपनी

छाप छोड़ते हैं. सफल व्यवसायी, उच्च कार्यपालक, नेता-अभिनेता, जिनका कार्यकाल लम्बा चलता है, इसी श्रेणी में आते हैं. इनकी बात हर जगह सुनी जाती है.

तीसरे प्रकार के दब्बू या निष्क्रिय व्यक्ति अत्यधिक आलसी, अकर्मठ एवं निराशावादी होते हैं. कार्य के प्रति लगाव न होने के कारण ये अपनी प्रतिभा का विकास भी नहीं कर पाते हैं. आत्म-सम्मान एवं आत्मविश्वास की कमी के कारण ये अप्रसन्न रहते हैं और अपने न्यायपूर्ण अधिकारों की रक्षा भी नहीं कर पाते हैं. अपनी निष्क्रिय आदतों के कारण इन्हें अधिक सफलता भी नहीं मिलती है. इनकी बात कोई नहीं सुनता है और न ही इनका व्यक्तित्व किसी को प्रभावित कर पाता है.

ऊपर बताए गए लक्षण किसी भी प्रभावशाली व्यक्तित्व के व्यक्तिगत आंतरिक लक्षण हैं, जिन्हें किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में किसी व्यक्ति से छीना नहीं जा सकता. इनके साथ ही किसी व्यक्ति में सहयोग, समन्वय, सहिष्णुता, सन्तोष, सहानुभूति, दया, प्रेम, धैर्य, वीरता, गंभीरता आदि लक्षण भी व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाते हैं, परंतु ये सभी लक्षण ऊपर दिए गए विस्तृत लक्षणों में ही समाहित हो जाते हैं. प्रभावशाली व्यक्तित्व का एक और भौतिक एवं बाह्य लक्षण है - आर्थिक सम्पन्नता/ऐश्वर्य और ऊंचा पद. समाज में साधन-सम्पन्न, धनी, ऐश्वर्यपूर्ण एवं ऊंचे पद वाले व्यक्तित्व का प्रभाव भी अत्यधिक पड़ता है. धन एवं ऊंचा पद समाज में हमारी जीवन-शैली का निर्धारण करते हैं, जो अन्य लोगों को प्रभावित करती है.

कंवर भान चावला, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई के एमएसएमई विभाग में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

डॉ. चेतना पांडेय

सकारात्मक सोच - एक आवेग

मानव जीवन ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है और मनुष्य की जीवन शैली उसकी सोच पर निर्भर करती है. हर मनुष्य अपनी दैनिक क्रिया का निर्धारण अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं की संपुष्टि करने हेतु करता है. परंतु ऐसा क्यों है कि हर प्राणी एक दूसरे से भिन्न है? हम यहाँ शारीरिक भिन्नता की चर्चा नहीं कर रहे, पर इस बिंदु पर प्रकाश डालना चाहते हैं कि यदि हम सभी का उद्देश्य दिनचर्या का निर्वाह करते हुए अर्थोपार्जन करना है तो फिर क्या हमें एक दूसरे से भिन्न बनाता है?

बचपन में हम सबने तीन मित्रों की कहानी सुनी होगी, फिर भी मैं यहां इसका उल्लेख करना चाहूंगी. एक बार तीन बालक एक गुरू के गुरूकुल में शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् अपने गुरू के पास अंतिम विदाई हेतु पहुँचे. गुरू ने कहा, "पुत्रो! वर्षा ऋतु निकट है और मैं तो अब बूढ़ा हो चला हूं. तुम सभी गुरूकुल छोड़ कर जा रहे हो. क्या तुम तीनों जंगल से लकड़ियां काट कर जमा कर दोगे, ताकि वर्षा ऋतु बीत जाए. याद रहे, जो सर्वप्रथम मुझ तक पहुंचेगा उसे मैं पुरस्कार दूंगा. यही मेरी गुरू दक्षिणा है". तीनों मित्र निकल पड़े. बड़ी मेहनत करके तीनों ने लकड़ियों के तीन गट्ठर बनाए और चल पड़े.

रास्ते में एक पुल था जो कि घाटी के दोनों छोरों को जोड़ता था. स्खलन के कारण एक बहुत बड़ा पत्थर पुल के बीचों - बीच गिर पड़ा और पुल पर जाना दूभर हो गया. एक शिष्य उस पत्थर पर चढ़ा और उसके लकड़ियों के गट्ठर में से आधी से ज्यादा लकड़ियां खाई में गिर गईं. फिर उसे तो प्रथम होना था, वह लड़खड़ाता हुआ आगे बढ़ने लगा. दूसरे मित्र ने किसी तरह किनारे से लटकते हुए पत्थर को पार किया. इस प्रयास में उसकी भी लकड़ियां गिर कर कम हो गईं. तीसरा मित्र लंगड़ा था, अतः तेज दौड़ भी नहीं पाता था. उसने देखा कि इस पत्थर से जब हमें

इतनी परेशानी हो रही है तो निर्बल और असहाय लोगों को कितनी तकलीफ होती होगी. उसने अपने लकड़ियों के गट्ठर को किनारे रख कर अपने मित्रों को आवाज दी कि इस पत्थर को हम खाई में गिरा देते हैं, पर दोनों मित्रों ने कहा, "अरे! अब हमने तो रास्ता पार कर लिया, अब तुम जानो", इतना कहकर पुरस्कार हेतु उत्सुक वे तेजी से आगे बढ़ गए.

तीसरे शिष्य ने हिम्मत नहीं हारी. उसने निकट के गांव से कुछ लोगों को बुलाया और उन सब की सहायता से उस पत्थर को खाई में गिरा कर रास्ता साफ किया. गांव के लोगों ने उसे आशीर्वाद दिया. वह जानता था कि उसे पुरस्कार नहीं मिलेगा, क्योंकि वह सबसे अंत में पहुंचेगा, पर फिर भी उसका चेहरा खुशी से चमक रहा था कि आज उसने सबकी मदद की.

गुरूकुल पहुंचने पर उसने देखा कि उसके दोनों मित्र पहले पहुंच चुके थे. क्या वास्तव में यह उनकी जीत थी. एक पल के लिए आप सोचें कि कौन जीता और कौन हारा.क्या ऐसी घटना हम सभी के जीवन में नहीं होती. महत्वाकांक्षा की अंधी दौड़ में क्या हम सब-कुछ पीछे नहीं छोड़ देते. गुरू चूंकि अन्तर्यामी थे, सारी बातें वे जान चुके थे. उन्होंने तीनों शिष्यों को बुलाया और बोलेः "तुम तीनों शिष्य आज्ञाकारी हो, फिर भी तुम तीनों में भिन्नता है. वह भिन्नता तुम्हारी सोच की है. सकारात्मक सोच की यही शक्ति मेरे तीसरे शिष्य को तुम दोनों से भिन्न बनाती है".

सकारात्मक सोच क्या मात्र आवेग है या व्यावहारिक मनोदशा? सामान्यतः आवेग यदि संवेदनाओं से परिपूर्ण हो तो संवेग हो जाता है और विभिन्न अवस्थाओं में प्रतिलक्षित संवेग ही हमारी सोच का प्रतिबिंब है.संवेग के अनुभव और व्यवहार के बीच किस प्रकार का संबंध है, संवेग में मस्तिष्क का क्या महत्व है आदि.मूलभूत समस्याओं के संबंध में मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों के आधार पर, संवेग के विभिन्न सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है. कुछ मुख्य सिद्धांत इस प्रकार हैंः

1. संवेग के संबंध में सामान्य विचार सिद्धांत :

साधारणतया ऐसा माना जाता है कि आवेग में संवेगात्मक (emotional) अनुभव की प्रधानता रहती है. संवेगात्मक व्यवहार, संवेगात्मक अनुभव के बाद होता है. अतः सामान्य लोगों के विचार के अनुसार हमें जब किसी प्रकार की निराशा या क्षति होती है, तब दुःख का अनुभव होता है और हम रोने की क्रिया करते हैं, अपने प्रतिद्वंदी द्वारा अनादर या तिरस्कृत किए जाने पर क्रोध का अनुभव होता है और हम

उसपर प्रहार करने की क्रिया करते हैं. इस प्रकार संवेग के संबंध में साधारण विचार यही है कि किसी भी संवेगात्मक उत्तेजना या परिस्थिति के प्रत्यक्षीकरण के फलस्वरूप हमें पहले संवेग की अनुभूति होती है और उसके बाद हम संवेगात्मक व्यवहार करते हैं. अतः यदि हम इस सिद्धांत का प्रतिपादन करें तो सकारात्मक सोच भी संवेगात्मक उत्तेजना का संवेगात्मक व्यवहार में परिवर्तन है. पर क्या हमारी सोच आवेग के रूप में प्रस्फुटित होती है और व्यवहार में परिवर्तित होने हेतु पहले संवेग की अनुभूति होती है, यह जानना कठिन है और कई मनोवैज्ञानिक इस सिद्धान्त का खंडन भी करते हैं, जिनमें जेम्स तथा लांजे सर्वोपरि हैं.

2. जेम्स एवं लांजे सिद्धांत :

जेम्स लांजे सिद्धान्त के अनुसार संवेगात्मक परिस्थिति के प्रत्यक्षीकरण और संवेग के अनुभव के बीच शारीरिक परिवर्तन होते हैं. अतः संवेग के संबंध में तार्किक रूप से यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि हमें दुःख या विषाद का संवेग रोने की क्रिया करने, क्रोध की उत्पत्ति, आक्रामक व्यवहार करने तथा भय का संवेग कांपने जैसे व्यवहार के फलस्वरूप होता है. अतः रोने की, आक्रमण करने या कांपने की क्रिया विषाद, क्रोध एवं भय का अनुभव करने के फलस्वरूप होती है. अगर हम इस सिद्धांत को मानें तो हमारी सोच हमारे व्यवहारों पर निर्भर करती है, अर्थात यदि हम सकारात्मक रूप से विषयों का चयन करें और इसी दिशा में कार्यरत रहें तो हमारी सोच सकारात्मक होती जाती है. जेम्स ने अपने इस विचार के समर्थन में अभिनेताओं एवं अभिनेत्रियों के अंतर्निरीक्षण प्रतिवेदन (introspective reports) को प्रस्तुत किया है. उनका कहना है कि किसी फिल्म का अभिनेता या अभिनेत्री किसी खास तरह के संवेग से संबद्ध शारीरिक व्यवहार को करते या करती हैं और उस व्यवहार को करते करते सचमुच उनमें आवेग का अनुभव होने लगता है. अतः यदि हम यह मानते हैं कि सकारात्मक सोच जन्मजात विशेषता या केवल वातावरण द्वारा प्रभावित होती है, तब हम पूर्णतया सत्य से मुख मोड़ लेते हैं. इस मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के अनुसार, यदि हम अपनी सोच को व्यवहार के रूप में परिवर्तित कर दें और निरन्तर अभ्यास करते रहें तो हमारी सोच स्वयं सकारात्मक हो जाएगी. परन्तु यह सिद्धांत भी आंशिक रूप से संवेग का ठीक सिद्धांत माना जा सकता है.

3. कैनन एवं बार्ड का हाइपोथैलेमिक सिद्धांत :

कैनन तथा बार्ड ने जेम्स लांजे सिद्धांत को गलत बताया तथा अपने अध्ययनों के आधार पर एक अलग सिद्धांत का प्रतिपादन किया. उनके सिद्धांत को हाइपोथैलेमिक सिद्धांत के नाम से पुकारा जाता है. कैनन तथा बार्ड का कहना है कि संवेगात्मक

व्यवहार को संवेगात्मक अनुभूति का कारण मानना गलत है. साथ ही जैसाकि जेम्स और लांजे ने माना है, संवेग में स्वतः संचालित स्नायुमंडल में सहानुभूतिक मंडल और वृहत् मस्तिष्क का ही प्रमुख स्थान नहीं है, बल्कि हाइपोथैलेमस का सर्वाधिक महत्व है. उनके अनुसार हाइपोथैलेमस ही संवेग का नियंत्रण करता है (Hypothalamus is the seat of emotion). अतः यदि हम कैनन तथा बार्ड के सिद्धांत को मानें तो आवेग की क्रिया का क्रम इस प्रकार है :-

सबसे पहले संवेगात्मक परिस्थिति का प्रत्यक्षीकरण होता है, जिसके फलस्वरूप हाइपोथैलेमस उत्तेजित होता है. इसके बाद हाइपोथैलेमस से स्नायुप्रवाह निकल कर एक ही समय में वृहत् मस्तिष्कीय वल्क (Cerebral cortex) तथा अंतरावयव (Visceral organ) एवं मांसपेशियों में जाता है. फलस्वरूप एक ही समय प्राणी में संवेगात्मक अनुभूति और संवेगात्मक व्यवहार दोनों होते हैं. अतः हमारी सोच का निर्धारण हमारे व्यवहारों द्वारा होता है. हम विभिन्न परिस्थितियों में किस प्रकार व्यवहार करते हैं या किस प्रकार की अनुभूति होती है, हमारी मानसिकता पर निर्भर करता है या शारीरिक निर्माण पर इस सिद्धांत द्वारा स्थापित नहीं हो पाता.

मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर यह निर्धारित करना कि सकारात्मक या नकारात्मक सोच क्या एक आवेग (Impulse) है या आवेग के रूप में प्रतिलक्षित होता है, संभवतः कठिन है, क्योंकि चिंतन एक अप्रकट उच्चस्तरीय जटिल मानसिक क्रिया है. प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने मनुष्य को परिभाषित करनेवाली सबसे प्रधान विशेषताओं में तर्कना अथवा चिंतन करने की शक्ति को ही स्थान दिया है.

चिन्तन का अर्थ विश्वास, मत या निर्णय अथवा कल्पना को प्रतिबिंबित करने अथवा उनकी मध्यस्थता से है. सामान्य तौर पर इसका तात्पर्य मन में होने वाली किसी प्रकार की क्रिया से लिया जाता है.

मनोविज्ञान के अनुसार, चिंतन के मुख्यतः दो प्रमुख वर्ग किए जाते हैं :

1. आत्म विमोही चिंतन (Autistic thinking)
2. वास्तविक या यथार्थ चिंतन (Realistic thinking)

आत्म विमोही चिंतन का संबंध मुख्य रूप से व्यक्तिगत आवश्यकताओं, इच्छाओं या भावों के साथ रहता है, न कि बाह्य जगत की वास्तविकताओं से. आत्म विमोही चिंतन व्यक्ति की निजी आवश्यकताओं, इच्छाओं, भावों आदि से प्रभावित होकर प्रेरित होता है. इस प्रकार के चिंतन में तल्लीन व्यक्ति केवल काल्पनिक विचारों

की दुनिया में विचरण करता है. स्वैर कल्पना (fantasies), इच्छापूर्ण चिंतन, दिवास्वप्न आदि आत्म विमोही चिंतन के ही विभिन्न रूप हैं.

वहीं वास्तविक चिंतन आत्म विमोही चिंतन के ठीक विपरीत है. इसका संबंध व्यक्ति के वास्तविक जीवन की समस्याओं से रहता है, अर्थात् व्यक्ति अपने अस्तित्व अथवा जीविकोपार्जन जैसी वास्तविक पक्षों से संबद्ध समस्याओं के समाधान की आवश्यकता से प्रेरित होकर जब सोचने की क्रिया करता है; तब उसे ही वास्तविक चिंतन अथवा तर्कना (reasoning) अथवा सप्रयोजन विचार कहते हैं. हमारी सोच भी वास्तविक चिंतन द्वारा निर्मित होती है. चूँकि वास्तविक चिंतन का उपयोग वातावरण के साथ व्यवहार करने अथवा व्यावहारिक जीवन के साथ अभियोजन करने हेतु किया जाता है, अतः यही चिंतन हमारी सोच की दिशा का भी निर्धारण करता है. उदाहरण के रूप में यदि हमारी कलम गायब हो जाती है तो हम संभवतः निम्नलिखित रूप से सोचते हैं :-

1. शायद मैंने अपनी कलम कार्यालय में छोड़ दी.
2. मेरी कलम जरुर किसी ने निकाल ली होगी. सभी चोर हैं.
3. कहीं मैंने अपनी कलम किसी को दे तो नहीं दी.
4. चलो छोड़ो कलम ही तो थी दूसरी आ जाएगी.
5. ओफ ! मुझे यह कलम कितनी पसंद थी.

हमारे मस्तिष्क में इसी प्रकार कई विचार जन्म लेते हैं, पर कौन सा विचार सर्वप्रथम हमें याद आता है, यही हमारे सोच की दिशा दर्शाता है. यदि हम सकारात्मक रूप से सोचें, तब पहला या तीसरा विचार सर्वप्रथम मन में आएगा और यदि हमारी सोच नकारात्मक है, तब सर्वप्रथम हमें सभी लोगों में कमी दिखाई देगी. यह उदाहरण बहुत ही सरल है, पर हमारी सोच ही आवेग बनकर प्रतिलक्षित होती है और संभवतः यही हमारे दृष्टिकोण को भी प्रभावित करती है. हमारे जीवन में घटित घटनाएं, अनुभूति, अनुभव इत्यादि स्मृति के रूप में संग्रहित होते हैं और जब पुनः वैसी परिस्थितियों का सामना होता है तो हमारा मस्तिष्क स्वतः हमारे व्यवहारों को स्वचालित करता है जो संवेग या आवेग के रूप में प्रस्फुटित होता है.

मनुष्य अभ्यास द्वारा अपनी सोच को अपनी आवश्यकताओं और संवेदनाओं के आधार पर निर्धारित करता है और अनेकानेक प्रतिक्रियाएं संग्रहित होकर हमारे क्रियाकलापों को तय करती हैं. आइए देखें कि सकारात्मक सोच किस प्रकार आवेग के रूप में जन्म लेती है. परन्तु सम्भवतः इस पर चर्चा करने से पूर्व हमें सकारात्मक सोच की शक्ति पर भी विचार करना चाहिए. बाल्यावस्था में हम सभी ने पंचतंत्र की

वह कथा जरुर पढ़ी होगी, जिसका शीर्षक था "एकता में बल है", जिसमें कबूतर बहेलिए के जाल को संयुक्त रूप से लेकर आकाश में उड़ चले और अपने मित्र चूहे से जाल को कटवाकर अपनी जान बचाई थी, अर्थात् प्रत्येक कबूतर की शक्ति कथित संयुक्त रूप से बड़ी शक्ति में परिवर्तित हो गयी.सामान्यतः मनुष्य को भी अपनी शक्ति का आभास विपदा के समय हो पाता है, परन्तु सकारात्मक सोच वाले व्यक्ति को स्वयं से परिचय निरन्तर होता रहता है और वे ज्ञानचक्षुओं को सदैव सजग रखते हैं और आत्मविश्वास को दृढ़ बनाए रखने हेतु प्रयत्नशील रहते हैं.

नॉर्मन विन्सेन्ट पील ने अपनी पुस्तक "द पावर ऑफ पॉजिटिव थिंकिंग" (सकारात्मक सोच की शक्ति) में निम्नलिखित बातों की ओर ध्यानाकर्षित किया है और उनके अनुसार यदि हम इन विचारों को अपनाते हैं तो हमें नया जीवन, नयी शक्ति, बेहतर कार्यकुशलता और ज्यादा सुख मिलेगा.

अपने आप में विश्वास रखें :

मनुष्य स्वयं पर विश्वास नहीं रख पाता, क्योंकि वह हीन भावना का शिकार हो जाता है और यह हमारे व्यक्तित्वों में शक्तिशाली अवरोध खड़े कर देती है. पील के अनुसार यह बचपन में हमारे साथ की गयी भावनात्मक हिंसा हो सकती है, किन्हीं निश्चित परिस्थितियों के परिणाम हो सकते हैं या ऐसी कोई चीज जो हमने खुद के साथ की हो. यह बीमारी हमारे धुँधले अतीत से उत्पन्न होती हैं और हमारे व्यक्तित्व के अँधेरे गलियारों में प्रकट होती है. उदाहरणस्वरूप हर मनुष्य को प्रायः बाल्यावस्था में अपनी तुलना किसी होनहार एवं प्रतिभावान बालक से सुनने को मिलती है और इसकी पीड़ा असहनीय होती जाती है. परिणामस्वरूप हम उस व्यक्ति से अनायास नफरत करने लगते हैं. धीरे-धीरे वह व्यक्ति बिना किसी अपराध के हमारे द्वारा दोषी घोषित हो जाता है. अतः यदि हमें हीन भावना या खुद पर शंका को मिटाने के लिए प्रयास करना है तो सर्वप्रथम हमें स्वयं को विश्वास की शक्ति से परिचित कराना होगा. इसका सरल माध्यम है, ईश्वर में प्रबल आस्था विकसित करना, जो हमें विनम्र तो बना देगी, लेकिन साथ ही साथ सशक्त व यथार्थवादी आस्था भी देगी. आत्मविश्वास की भावनाओं को बढ़ाने के लिए अपने मस्तिष्क को विश्वास का सुझाव देना बहुत असरदार होता है. अगर आपके मस्तिष्क में असुरक्षा और अयोग्यता के विचार प्रबलता से भरे हुए हों तो ऐसा इस वजह से है, क्योंकि इसी तरह के विचार लंबे समय से आपके चिंतन पर हावी रहे हैं. आपको अपने मस्तिष्क को विचारों का दूसरा और अधिक सकारात्मक पैटर्न देना चाहिए. ऐसा आस्था और विश्वास के लगातार सुझाव देकर किया जा सकता है.

आत्मसमर्पण ही आत्म विश्वास की वृद्धि का स्रोत है :

आत्म समर्पण अच्छे परिणामों की उम्मीद दिलाता है, जो अच्छे परिणामों में परिवर्तित होते हैं. महाभारत की कथा तो शायद सभी को याद होगी, परन्तु आत्मसमर्पण का उदाहरण वह प्रकरण है, जब द्रौपदी का चीरहरण हुआ था. दुःशासन जब द्रोपदी को कौरवों की सभा में चीरहरण हेतु लेकर आया तो द्रोपदी ने सभी गुरूजनों से गुहार लगाई, परन्तु किसी ने उसकी मदद नहीं की. तब अन्त में उसने श्री कृष्ण, जो उन सबके आराध्य देव थे, की वन्दना की और मदद के लिए पुकारा और उसके आत्म समर्पण ने ही उसकी रक्षा की. अतः यह अवधारणा इस विचार में निहित है कि ईश्वर सचमुच आपके साथ है और आपकी मदद कर रहा है. आत्म विश्वास भी ईश्वर के प्रति आत्म समर्पण से बढ़ता जाता है, जो सुरक्षा कवच बन कर हमारी सहायता करता है.

नई सोच को स्थान दें - मस्तिष्क को खाली करें :

जिस प्रकार हर नया सवेरा नए जीवन का संकेत देता है, उसी प्रकार मनुष्य को भी अपने मस्तिष्क को खाली कर नए विचारों का स्वागत करना चाहिए. मस्तिष्क को खाली कर तत्काल रचनात्मक और स्वस्थ विचार भर लें. फिर जब आपके पुराने डर, नफरत और चिंताएं, जो आपको लंबे समय से सताते आ रहे थे, आपके मस्तिष्क में प्रवेश करने की पुनः कोशिश करेंगे, परन्तु आपने जिन नए और स्वस्थ विचारों को वहाँ बिठाया है, वे आपके मस्तिष्क की रक्षा करेंगे और इन बाहरी नकारात्मक शत्रुओं को परास्त कर देंगे.

ऊर्जावान बनें :

सकारात्मक सोच हमें निरंतर ऊर्जावान बनाए रखती है, साथ ही सकारात्मक दृष्टिकोण हेतु हमें ऊर्जावान बने रहना चाहिए. हम कैसा अनुभव करते हैं - इस बारे में हम जो सोचते हैं, उसका इस बात पर निश्चित प्रभाव पड़ता है कि हम वास्तव में शारीरिक रूप से कैसा महसूस करेंगे. अगर आपका दिमाग आपको बताता है कि आप थके हुए हैं तो आपकी मांसपेशियां इस तथ्य को स्वीकार कर लेती हैं. परन्तु अगर आपका दिमाग किसी काम में गहरी रुचि ले रहा है तो उस काम को अनंत काल तक बिना थके जारी रख सकते हैं. धर्म ही ईश्वर से संपर्क हमारे भीतर स्थापित करता है, जो उसी तरह की ऊर्जा को प्रवाहित करता है, जिस तरह की ऊर्जा से दुनिया का नवीनीकरण होता है और जो हर समय हमें नवीनतम बनाता रहता है.

यदि हम बार-बार दोहरायें कि हमें अपना नजरिया बदल देना चाहिए, सकारात्मक सोच को अपनाना चाहिए तो क्या यह संभव है? कई मनोवैज्ञानिकों ने इसका सरल हल निकाला है और वह है चिन्तन. यदि हम अपने दैनिक क्रिया कलापों में चिन्तन को भी जोड़ लें तो हमारी सोच थोड़ा परिवर्तित हो सकती है. पर हर मनुष्य सारे क्रिया कलापों हेतु चिन्तन तो करता है, फिर हम किस चिन्तन की बात कह रहे हैं. मेरा आशय आत्म चिन्तन से है. अपने जीवन में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों का हल स्वयं खोजें, जैसे -

- आप क्या चाहते हैं?
- आपने अपनी चाहत को पाने के लिए क्या प्रयास किए हैं?
- आपका मन और आपका मस्तिष्क क्या आपके वश में है?
- आप कौन हैं?

यदि हम इन सभी प्रश्नों को कुछ मनुष्यों से पूछें तो उत्तर शायद एक सा होगा. वह उत्तर होगा कि हम संतोष, मानसिक शान्ति अथवा प्रसन्नता चाहते हैं. मानव जीवन में सामान्यतया तीन मुख्य प्राथमिकताएं होती हैं :

- रिश्तों की सफलता
- स्वास्थ्य की सफलता
- व्यापार - व्यवसाय की सफलता

कोई स्वास्थ्य की सफलता चाहेगा तो कोई व्यापार व्यवसाय की तो कोई अपने रिश्तों की सफलता. हमारी प्राथमिकताएं भले ही भिन्न हों, पर सफल जीवन के लिए इन तीनों में सफलता आवश्यक है. सफलता जहां हमारी सोच अथवा दृष्टिकोण को सकारात्मक बनाती है, वहीं इन सभी के पीछे सबसे बड़ा आधार हमारा मन और इससे जुड़ा चिंतन है.

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से हमने चिंतन के दो प्रकारों के बारे में चर्चा की है, परन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से चिंतन सार्थक (सकारात्मक) होता है तो हमारी खुशी को बढ़ाता है, पर जब चिंतन निरर्थक (नकारात्मक) होता है तो हमारे जीवन को अशांत किए बिना नहीं रहता. यहां हम सार्थक चिंतन की चर्चा कर रहे हैं. यह बात अत्यन्तावश्यक है कि सार्थक चिंतन या सकारात्मक सोच के आधार हम स्वयं तय करें. इसके अनेक आधार हो सकते हैं. हम महापुरुषों के जीवन, प्रेरणादायी कहानियों,

धर्मग्रंथों तथा गुरूओं के उपदेशों आदि को चिंतन का आधार बना सकते हैं. राम गिलड़ा ने अपनी कृति "आप क्या चाहते हैं" में चिंतन का आधार समुद्र को माना है. उनके अनुसार जब हम समुद्र का उदाहरण सामने रखकर चिंतन करते हैं तो पाते हैं कि समुद्र दोनों प्रकार (अर्थात् नदी का स्वच्छ जल एवं नालों का मलिन जल) के पानी को स्वीकार कर अपने में समाहित कर लेता है. ठीक इसी तरह हम सार्थक चिंतन द्वारा ही अच्छे और बुरे परिणामों, सुख और दुःख को समान रूप से स्वीकार कर विचलित नहीं होते और विपरीत परिस्थिति को सहज स्वीकार करने की आदत बना लेते हैं.

सकारात्मक सोच किसी बात को स्वीकार करने और सहन करने के अंतर करने में मदद करती है. जब हम किसी चीज को स्वीकार करते हैं तो हमारे मन की सहमति इसके साथ रहती है और उसको हम अपने जीवन का हिस्सा समझ लेते हैं. स्वीकार करने की प्रक्रिया के दौरान मन में तनाव, बेचैनी या अशांति नहीं रहती, परन्तु जब सहन करना होता है तो उसके साथ हमारे मन की सहमति नहीं रहती, बल्कि उस चीज को अपनाने या करने की मजबूरी होती है. फलस्वरूप ऐसी स्थिति में इसके प्रति हमारे मन में आक्रोश या प्रतिरोध रहता है. जब मन में आक्रोश या प्रतिरोध होता है तो एक तरफ यह हमारे ऊर्जा के बहाव में गतिरोध उत्पन्न करता है और दूसरी तरफ हमारा मन बड़ा बेचैन, तनावग्रस्त व अशांत होकर अपनी एकाग्रता खो देता है.

सकारात्मक सोच, अतः अभ्यास द्वारा सशक्त आधारों का चयन कर हमारे व्यवहारों में लक्षित होती है. हर व्यक्ति का दृष्टिकोण उसके आस-पास के वातावरण, बचपन में घटी घटनाएं, रोज मिलने वाले लोगों के विचार, स्वयं की रुचि की पुस्तकें, सिद्धांत आदि कई बातों से प्रभावित होता है. व्यक्ति का दृष्टिकोण अथवा सोच समय-समय पर होने वाली घटनाओं एवं उपर्युक्त बातों से भी बदल सकती हैं. अब प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति का दृष्टिकोण कैसा हो? समय-समय पर वह कैसे अप्रभावित रहे? कैसे वह सकारात्मक हो और आवेग के रूप में बाहर आए. निम्नलिखित बातों पर गौर करना आवश्यक है.

- सार्थक चिंतन अपनाएँ. किसी भी घटना पर संतुलित ढंग से विचार करें.
- कोई भी प्रतिक्रिया व्यक्त करने से पूर्व यह अवश्य सोच लें कि वह प्रतिक्रिया आप अपनी पूर्व धारणाओं के आधार पर कर रहे हैं या वर्तमान परिस्थितियों के आधार पर?
- पिछली घटनाएं हर वक्त पथप्रदर्शक या निर्णायक सिद्धांत नहीं होते. हम उन्हें निर्णायक सिद्धांत मान कर फैसला न लेकर अपनी वर्तमान आवश्यकताओं, हितों एवं भविष्य के परिणामों के बारे में सोचें.
- दृष्टिकोण को बंधन नहीं बनाएं, बल्कि उसे अपने निर्णय लेने में सहयोगी बनाएं.
- अपने दृष्टिकोण या सोच से समता रखने वाले लोगों से निकटता रखने का प्रयत्न करें.
- विचारों के आदान-प्रदान, सार्थक वाद-विवाद की अवहेलना न करें.
- अपनी सोच के अनुसार साहित्य का अध्ययन करें.
- परिवर्तन अच्छा होता है पर अपने दृष्टिकोण को एकदम से नहीं बदलें. उसे तर्क की कसौटी पर कसें तथा इंतजार करना संभव हो तो थोड़ा इंतजार करके सोच समझ कर निर्णय करें.

इस प्रकार हम इन छोटी छोटी बातों पर ध्यान दें तो संभवतः हमारी सोच सकारात्मक होगी, जो जीवन पर्यन्त हमें सही दिशानिर्देशित करती रहेगी.

डॉ. चेतना पांडेय, क्षे.का., पटना में वरिष्ठ प्रबंधक (ऋण) हैं.

संदीप गुप्ता

अभिप्रेरणा - एक विद्युतीय संचार

कहते हैं कि सुन्दरता देखने वाले की आंखों में होती है. सौंदर्य का एक रूप किसी एक व्यक्ति के लिए उपासना की अभिव्यक्ति हो सकता है, जबकि वही रूप किसी अन्य व्यक्ति के लिए वितृष्णा भरा हो सकता है. संभवतः यही तर्क अभिप्रेरणा के लिए भी उचित हो सकता है. एक प्रसंग है कि एक बार एक नवयुवक पेड़ की छाँव में आराम से लेटा था. उधर से गुजरते एक वृद्ध ने उसे टोकते हुए कहा कि दिन भर आराम फरमाते रहते हो, कुछ काम क्यों नहीं करते. "उससे क्या होगा", नवयुवक ने भोलेपन से पूछा. "काम करोगे तो तुम पैसे कमाओगे", वृद्ध ने उत्तर दिया. "उससे क्या होगा", नवयुवक ने प्रश्न किया. "पैसे से तुम अच्छा घर खरीद सकते हो, फिर अच्छी शादी करके घर बसा सकते हो, बच्चों को अच्छी शिक्षा दे सकते हो. उनको अच्छे व्यवसाय में व्यवस्थित कर सकते हो", वृद्ध ने नवयुवक को समझाते हुए कहा. "फिर क्या होगा", नवयुवक ने फिर वही प्रश्न किया. "फिर तुम आराम से लेट लगाना", वृद्ध ने उत्तर दिया. "तो अभी मैं क्या कर रहा हूं", नवयुवक ने उसी भोलेपन से पूछा. वृद्ध निरुत्तर हो गया.

एक अन्य प्रसंग है कि एक बार महात्मा बुद्ध प्रवचन दे रहे थे. सभी लोग बड़े ध्यान से सुन रहे थे. उनके उपदेश से उन्हें अनोखा आनन्द अनुभव हो रहा था. अगले दिन महात्मा बुद्ध के शिष्य नगर में उनका उपदेश देते घूम रहे थे. जब उन्होंने सड़क किनारे बैठे एक भिखारी को उपदेश देना चाहा तो भिखारी ने उन्हें गालियां दीं, पत्थर मारे. शिष्यों ने महात्मा बुद्ध को आकर बताया तो महात्मा ने उस भिखारी को उनके पास लाने को कहा. बुद्ध ने भिखारी की दयनीय स्थिति देखी. उसे नहला-धुलाकर अच्छे कपड़े और पेट भर खाना देकर आराम करने को कहा. अगले दिन शिष्यों ने जब वही उपदेश सुनाया तो भिखारी ने बड़े ध्यान से सुना और आनन्द का अनुभव किया !

इन प्रसंगों के माध्यम से यह तर्क पुष्ट होता है कि हर व्यक्ति के जीवन में उद्देश्यों की अपनी-अपनी प्राथमिकताएं होती हैं तथा अपने-अपने महत्व होते हैं और इन्हीं के अनुसार हर व्यक्ति अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अग्रसर होते हैं. परन्तु एक संस्था में कार्यरत कार्मिकों का व्यक्तिगत उद्देश्य चाहे कुछ भी हो, कार्मिक होने के नाते उनका प्रमुख दायित्व होता है, संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करना. ऐसे में यह एक चुनौती हो जाती है कि किस प्रकार हम स्वयं के व्यक्तिगत उद्देश्यों को संस्था के उद्देश्यों में समाहित कर सकते हैं. क्योंकि यदि दोनों उद्देश्यों में परस्पर विमुखता होगी अथवा सामंजस्य नहीं होगा तो कार्मिक के रूप में हमारे लिए कार्य दुष्कर एवं बोझिल हो जाएगा. साथ ही हम न तो संस्था के उद्देश्यों की पूर्णरूप से प्राप्ति कर सकते हैं तथा न ही व्यक्तिगत उद्देश्यों की.

ऐसा शायद ही कोई व्यक्ति होगा, जो अपनी संस्था के प्रति समर्पित न हो अथवा प्रतिदिन घर से यह सोच कर निकलता हो कि आज मुझे कार्यक्षेत्र में कार्य विमुख हो कर दिन बिताना है. प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामर्थ्य एवं दक्षता अनुसार पूर्ण लगन से कार्य करने का प्रयास करता है, परन्तु फिर भी देखने आता है कि संस्था उस गति से प्रगति नहीं कर पाती अथवा संस्था की प्रगति के सूचक आंकड़ों में उनकी लगन, दक्षता एवं सामर्थ्य परिलक्षित नहीं हो पाते. तो फिर चूक कहां रह जाती है.

स्पष्टतः एक प्रमुख कारण है, संस्था के उद्देश्यों को सर्वोपरि रखते हुए व्यक्तिगत उद्देश्यों को इस प्रकार समाहित न कर पाना कि दोनों की पूणरूपेण प्राप्ति हो जाए. दूसरा कारण हो सकता है कि उद्देश्यों की सही पहचान न कर पाना अथवा अपनी आवश्यकताओं को ठीक ढंग से तय न कर पाना, जिस कारण हम एक लक्ष्य निर्धारित नहीं कर पाते हैं और इधर उधर भटकते रहते हैं तथा अन्ततः संस्था के साथ सामंजस्य न बना पाने के कारण अपनी प्रतिभा को पूर्ण रूप से प्रदर्शित नहीं कर पाते हैं. तीसरा कारण हो सकता है कि कार्य क्षेत्र में हमें वह उत्साह भरा वातावरण प्राप्त न हो पाता हो, जहाँ हम चाह कर भी अपनी प्रतिभा का पूर्ण प्रदर्शन न कर पाते हों अथवा हमारी प्रतिभा को उचित पहचान एवं समर्थन न मिल पाता हो, जिस कारण धीरे-धीरे कार्य निष्पादन में वही उत्साह नहीं रह जाता. ऐसे में एक ही समाधान है - अभिप्रेरणा !

अभिप्रेरणा क्या है? अभिप्रेरणा मानव मन में जगने वाली एक ऐसी लौ (ललक) है, जो न केवल उसे उसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रेरित कर सफलता की तरफ ले जाती है, अपितु वह सम्पर्क में आने वाले सभी व्यक्तियों में अपनी तरह की ज्योति जगा जाती है.

प्रत्येक संस्था का यह दायित्व होता है कि वह अपने कार्मिकों को संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अभिप्रेरित करती रहे, ताकि सभी कार्मिक "मनसा, वाचा, कर्मणा" अर्थात मन, वचन, कर्म से अपनी पूरी योग्यता, दक्षता, लगन और मेहनत से निरन्तर कार्य करते रहें. कार्मिकों के लिए संस्था का कार्य बोझिल अथवा मजबूरी न होकर एक आनन्दमय अनुभूति के लिए उपलब्धियों भरी दिनचर्या बन जाए.

अभिप्रेरणा - क्यों : प्रत्येक संस्था चाहती है कि उसके कार्मिक निर्धारित लक्ष्यों को अत्यधिक कुशलता एवं सफलतापूर्वक प्राप्त करते रहें. इसके लिए संस्था अपने कार्मिकों को वेतन, वेतन-वृद्धि, बोनस, पदोन्नति इत्यादि प्रलोभन प्रदान करती है, ताकि उसके कार्मिक अधिकाधिक कार्य, अधिकाधिक दक्षता एवं मेहनत से करने के लिए प्रेरित रहें. परन्तु जैसा हमने प्रारम्भ में जाना कि सौंदर्य की भांति इच्छाएँ एवं आवश्यकताएं हर मनुष्य को अपनी-अपनी तरह से प्रभावित करती हैं. धन सभी को अच्छा लगता है, लेकिन उसकी महत्ता तथा आवश्यकता का स्वरूप सभी के लिए अलग अलग प्रकार से हो सकता है. इसी प्रकार पद, प्रतिष्ठा, सामाजिक जीवन-सबकी अपनी-अपनी महत्ता एवं आवश्यकता है, जो सभी मनुष्यों में भिन्न - भिन्न होती है. ऐसे में एक संस्था के लिए यह बेहद जटिल एवं चुनौतीभरा कार्य हो जाता है कि वह प्रत्येक कार्मिक की इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को पहचान कर उन्हें तदनुसार अभिप्रेरित करे. अन्यथा कार्मिकों के लिए कार्यक्षेत्र में नीरसता का बोध होने लगेगा. वे कार्य तो करेंगे, परन्तु उत्साहहीन, जिससे संस्था को लक्ष्यों की प्राप्ति कठिन हो जाएगी तथा संस्था के संसाधनों का भी अपव्यय होगा. धीरे-धीरे संस्था प्रतिस्पर्धा की दौड़ में पिछड़ जाएगी और कालान्तर में उसके लिए अपना अस्तित्व बचाना मुश्किल हो जाएगा.

अभिप्रेरणा कैसे ? अभिप्रेरणा के लिए दो प्रमुख कारक हैं. कार्मिक तथा स्वयं संस्था अर्थात् संस्था का कार्यालयीन वातावरण. हम पहले कारक की चर्चा करें तो कार्मिक सर्वप्रथम एक मानव है, जिसमें भावनाएँ हैं, संवेदनाएँ हैं और भौतिक आवश्यकताएँ हैं. यूं तो प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अद्वितीय होता है. ऐसे में प्रत्येक व्यक्ति की भावनाएं, संवेदनाएं एवं भौतिक आवश्यकताएं समझ पाना और उन्हें पूरा कर पाना बेहद कठिन कार्य है. फिर भी बहुत से मनोवैज्ञानिकों ने काफी अनुसंधान के पश्चात कुछ निष्कर्ष निकाले हैं, जो अधिकतर व्यक्तियों के लिए लागू होते हैं और जिनके आधार पर संस्थाएं कार्मिकों को अभिप्रेरित कर सकती हैं.

प्रमुख रूप से दो वैज्ञानिकों की विचारधाराओं की हम यहाँ चर्चा कर सकते हैं :

डग्लस मैकग्रेगर : x एवं y वर्गीन कार्मिक

काफी अनुसंधान के पश्चात मैकग्रेगर ने पाया कि किसी भी संस्था में मुख्यतया दो प्रकार के कार्मिक होते हैं, जिन्हें x वर्ग व y वर्ग में वर्गीकृत कर सकते हैं.

x वर्ग : इस वर्ग में ऐसे कार्मिक आते हैं, जो मूलतः कार्य को नापसंद करते हैं तथा ऐसे कार्मिक डर, दण्ड, सख्त नियन्त्रण इत्यादि से कार्य निष्पादन करते हैं. इस वर्ग के अधिकारी अपने अधीनस्थों को वित्तीय पुरस्कार अथवा पदोन्नति या कार्य स्वायत्तता देने में संकोच करते हैं, ताकि उनके अधीनस्थ एक निर्धारित दिशा एवं अपेक्षित संकीर्ण दायरे में कार्य करते रहें.

y वर्ग : इस वर्ग के कार्मिक, यदि उन्हें कार्य उनकी रुचि अनुरूप लगे तो स्वतः अनुशासित हो कर अपनी कल्पना, सजीवता एवं मन से कार्य करते हैं तथा कार्य के लिए वे स्वयं ही जिम्मेदारी अनुभव करते हैं.

एब्राहम मास्लो विचारधारा के अनुसार सभी प्रकार के कार्मिकों की आवश्यकताओं को एक पिरामिड के रूप में प्रस्तुत करते हुए यह माना जाता है कि प्रत्येक कार्मिक पिरामिड के धरातल से शीर्ष की तरफ आवश्यकताओं को पूर्ण करते हुए अग्रसर होता है.

मास्लो विचारधारा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की मुख्यतः तीन प्रकार की आवश्यकताएं होती हैं:

शारीरिक अथवा भौतिक : घर, कपड़ा, रोटी, आर्थिक एवं शारीरिक सुरक्षा.

सामाजिक : सामाजिक स्वीकृति, सामाजिक आदर-सम्मान, मित्रता, भावनात्मक सुरक्षा, स्नेह.

स्व-आदर एवं प्रभुता : पद, प्रतिष्ठा, मौलिकता, स्व-आदर.

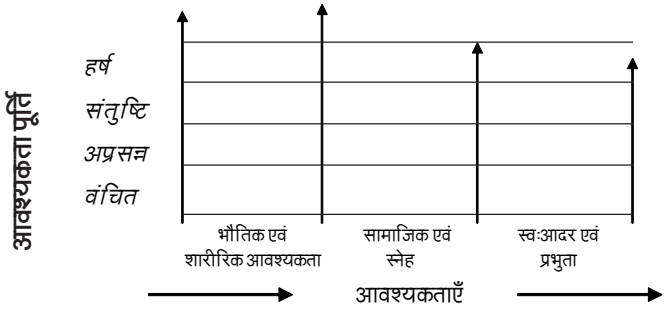

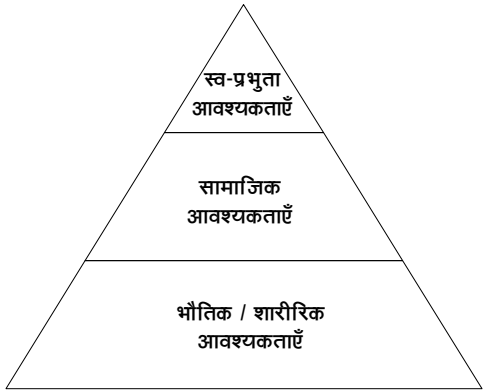

मास्लो के अनुसार कार्मिक के रूप में हम सभी सर्वप्रथम अपनी भौतिक एवं शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रेरित होते हैं. तत्पश्चात सामाजिक एवं अन्ततः स्व आदर की आवश्यकताएँ आती हैं. उल्लेखित प्रसंग में हम महात्मा बुद्ध एवं भिखारी का संदर्भ लें तो हम पाते हैं कि एक भिखारी के लिए उसकी शारीरिक आवश्यकताएं उपलब्ध थीं, जबकि महात्मा बुद्ध सर्वोच्च बल, शीर्ष की आवश्यकता पर अभिप्रेरित थे. अतः भौतिक एवं शारीरिक तथा सामाजिक, स्नेहिल आवश्यकताओं के पश्चात व्यक्ति ऐसे स्तर पर पहुँच जाता है, जहाँ से उसके लिए कार्यक्षेत्र एक स्वआनन्द अनुभूति एवं आत्मिक हो जाता है. वहाँ पहुँच कर वह अपने आप में बस खो-सा जाता है जैसे संगीतकार का संगीत, चित्रकार की चित्रकारी, जहाँ पहुँच कर उसे एक सम्पूर्णता, एक उत्कृष्टता का अहसास होता है.

दूसरा अति महत्वपूर्ण एवं प्रमुख कारक - संस्था तथा इसका वातावरण. प्रत्येक संस्था का यह दायित्व होता है कि वह ऐसे कार्मिकों के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण तथा ज्ञान की व्यवस्था करे, जो कार्य तो करना चाहते हैं परन्तु समुचित ज्ञान के अभाव में अपनी दक्षता पूर्णरूप से प्रकट नहीं कर पाते. दूसरे ऐसे कार्मिक जो कार्य तो करते हैं, परन्तु उचित मार्गदर्शन के अभाव में अपने कार्य निष्पादन से संतुष्ट नहीं हो पाते तथा अपनी दक्षता अपूर्ण पाते हैं. तीसरे ऐसे कार्मिक, जो अपना कार्य अच्छी तरह निष्पादित करते हैं. उनके लिए संस्था का दायित्व होता है कि वह उनके कार्य में सहयोग एवं समर्थन दे, उन्हें बढ़ावा दे. यह माना जाता है कि प्रत्येक कार्मिक अपनी क्षमता का आंशिक दोहन ही कर पाता है. उचित वातावरण में प्रत्येक कार्मिक अपनी क्षमता का भरपूर दोहन कर सकता है, इससे उसे संतुष्टि प्राप्त होगी तथा संस्था को अच्छा कार्य - निष्पादन.

अतः एक संस्था के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि -

- संस्था में यथासंभव हर कार्मिक को उसकी रुचि, सामर्थ्य एवं क्षमता अनुरूप कार्य दिया जाए.
- समय-समय पर उसके कार्य रूप में संवर्धता लाई जाए.
- कार्य निष्पादन को प्रोत्साहित एवं पुरस्कृत किया जाए.
- स्वायत्तता की अनुभूति हो तो किए कार्य की, लाभप्रदता एवं महत्व को समझा जाए.
- प्रोत्साहन, पुरस्कार बोनस की तरह समरूप न होकर कार्य निष्पादन की गुणवत्ता के आधार पर होना चाहिए.
- कार्मिक को दिए लक्ष्य चुनौतीपूर्ण हों, न कि अति दुष्कर.

जैसा हमने पहले जाना कि अभिप्रेरणा व्यक्ति के मन की वह स्थिति है, जिसमें वह अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा, क्षमता एवं लगन से स्वयं को लक्ष्य अथवा अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पूर्ण समर्पित हो जाए. उसके लिए कार्य समस्त भौतिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं से ऊपर निकलकर एक परम आनन्द की अनुभूति बन जाए, जैसे कोई संगीतज्ञ स्वयं को संगीत की मधुरता में डुबो देता है, जैसे चित्रकार चित्र की खूबसूरती में और एक शिल्पकार अपनी रचना में.

अभिप्रेरणा दो प्रकार से हो सकती है - आन्तरिक एवं बाह्य. बाह्य अभिप्रेरणा भौतिक रूप लिए होती है, जिसमें कार्मिक वित्तीय पुरस्कार, प्रोत्साहन, पदोन्नति के बल पर या लालच में अपने कार्य निष्पादन में श्रेष्ठता प्रदर्शित करते हैं अथवा बहुधा अपना एकाधिकार स्थापित रखने के लिए या आत्मश्लाघा के लिए कार्मिक अपना कार्य निष्पादन अच्छा करने के लिए अभिप्रेरित होते हैं अथवा किसी दण्ड, प्रताड़ना, बहिष्कार से बचने के लिए अभिप्रेरित होते हैं. किन्तु यह सभी अभिप्रेरणा के भौतिक स्रोत हैं, जिसमें बाह्य कारक के हटते ही कार्मिक फिर अपनी पुरानी कार्य शैली अपना लेता है.

आन्तरिक अभिप्रेरणा हमारे मन की वह स्थिति है, जो हमें बिना किसी बाह्य लालच के अपने कार्य निष्पादन में अनवरत जुटे रहने एवं इसे अधिकाधिक उन्नत बनाने के लिए प्रेरित करती है. इस स्थिति में मन अपने कार्य के साथ ऐसा जुड़ जाता है कि वह कार्य को आनन्द का स्रोत समझ लेता है तथा कार्य या कार्यक्षेत्र से जुड़ी अड़चनों को दरकिनार कर अपने कार्य को स्वरुचि अनुरूप ढाल लेता है. उसके लिए कार्य में नवीनता, सृजनता, सजीवता के ढेरों आयाम उपलब्ध हो जाते हैं. आवश्यकता होती है तो सिर्फ स्वयं को डुबाने की और उसके लिए उसकी उपलब्धियाँ, सफलताएँ,

रचनात्मकता, रोचकता, सरसता ही अभिप्रेरणा के स्रोत बन जाते हैं तथा मन की यह स्थिति रासायनिक परिवर्तन की तरह चिरस्थायी है, जो बाह्य कारकों की उपस्थिति-अनुपस्थिति से कुछ विचलित तो हो सकती है, लेकिन लम्बे समय के लिए प्रभावित नहीं हो सकती. अभिप्रेरणा का यह स्वरूप उस बहती नदिया की तरह है, जो अपने सम्पर्क में आने वाले सभी चेतन प्राणियों को अपने प्रेरणामय व्यक्तित्व की सुखद अनुभूति से अभिसंचित करती जाती है. एक ऐसा विद्युतीय संचार, जो कितने ही ऊर्जाविहीन मस्तिष्कों में नव - ऊर्जा का संचार कर उन्हें भी आलोकित कर देता है. इस सब के लिए निस्सन्देह हमें भौतिक आवश्यकताओं के मोहजाल से ऊपर उठना होगा. अपने मन से ऋणात्मक एवं प्रतिकूल दृष्टिकोण एवं विचारधारा को निकालना होगा. अपनी सोच को सकारात्मक एवं उन्नतशील करना होगा. स्वयं को दक्ष एवं पारंगत रखते हुए समय के साथ इस तरह बदलते हुए चलना होगा कि हम स्वयं को कभी भी पिछड़ा अनुभव न कर पाएँ. हमने एक संस्था चुनी है. संस्था द्वारा दिए गए दायित्व को पूर्ण लगन, पूर्ण क्षमता, पूर्ण दक्षता एवं ईमानदारी से निभाना हमारा परम कर्त्तव्य है. निस्सन्देह संस्था के हमारे प्रति जो दायित्व हैं, वह उनको निभाने में कृतसंकल्प है. परन्तु वह हमारी कार्यशैली का प्रतिफल नहीं हो सकते. संस्था हमने चुनी है तो हमें स्वयं को इस प्रकार अभिप्रेरित रखना है कि हम अपने कार्य निष्पादन में सदा उत्तम हों. एक किसान तेज धूप, आंधी, बारिश में भी धरती पर हल जोतता रहता है अपनी उसी लगन, मेहनत से.

एक प्रसंग से यह अवधारणा और स्पष्ट हो सकेगी -

एक बार एक व्यक्ति समुद्र के किनारे खड़ा था. समुद्र से निकलती लहरें जब किनारे से लौटती थीं तो कितनी ही छोटी-छोटी मछलियाँ किनारे पर छोड़ जाती थीं. जल के अभाव में वह तड़पने लगती थीं. वह व्यक्ति जल्दी-जल्दी उन्हें उठा कर वापिस समुद्र में फैंकता जाता था. फिर दूसरी लहर आती तो फिर ढेरों मछलियाँ आ जाती थीं. वह व्यक्ति फिर वही काम दोहराता रहता था. वहीं किनारे पर खड़ा एक अन्य व्यक्ति सब देख रहा था. उससे रहा नहीं गया. उसने हार कर उस व्यक्ति से कहा कि तुम भी कितना बेवकूफी भरा कार्य कर रहे हो, समुद्र में ढेरों मछलियाँ हैं, उनमें से कुछ मर भी जाएंगी तो इससे समुद्र को क्या फर्क पड़ेगा.

उस व्यक्ति ने कहा कि मेरे इस प्रयास से समुद्र को बेशक कोई फर्क नहीं पड़ता होगा, परन्तु उस एक मछली को जरूर पड़ता है, जिसे मेरे छोटे से प्रयास से नया जीवन मिल गया होगा !!!

संदीप गुप्ता, स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में वरिष्ठ प्रबन्धक (संकाय) हैं.

अरुण श्रीवास्तव

सफलता के घटक - परिश्रम एवं भाग्य

सफलता का कोई एक मापदण्ड एवं कोई एक घटक नहीं है. यह सर्वविदित है कि परिश्रम के बिना सफलता असंभव है. सफलता उसी व्यक्ति को मिलती है जो सही दिशा में परिश्रम करता है. सफलता की प्राप्ति में भाग्य का कोई योगदान नहीं है, अपितु हमारा परिश्रम या कर्म ही हमारी सफलता का व्यास तैयार करता है. कई बार हम बिना प्रयास किए प्राप्त हुई उपलब्धि को भाग्य से जोड़ देते हैं, जबकि वह भी किसी न किसी रूप में हमारे अपने पहले के कर्म या परिश्रम का परिणाम होती है. इसे दर्शन एवं अध्यात्म की भाषा में **'प्रारब्ध'** के नाम से जाना जाता है. अतः हमारा कर्म एवं परिश्रम ही सफलता का घटक है. जीवन में हम देखते हैं कि कई कम बुद्धिमान् व्यक्ति ऊंचे एवं हैसियत वाले पद प्राप्त कर लेते हैं और उन्हें बहुत कम प्रयास से सफलता मिल जाती है. इसके विपरीत कई व्यक्ति जीवन-भर जी-तोड़ परिश्रम करते हैं, लेकिन उन्हें यथेष्ट सफलता नहीं मिलती है. ऐसी स्थिति में लोग भाग्य का सहारा लेते हैं. भाग्य का सहारा लेकर हम परिश्रम से हाथ खींचकर स्वयं को कमजोर बना लेते हैं. परिश्रम करने से व्यक्ति में कई गुणों का विकास होता है, जो आगे चलकर उसकी सफलता का मार्ग प्रशस्त करते हैं.

दो राज्यों के बीच युद्ध होने वाला था. दोनों राज्यों के राजा युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए आशीर्वाद लेने एक सिद्ध संत के पास जाते हैं. पहला राजा अपनी सुसज्जित सेना की संख्या, वीरता और शस्त्रों-अस्त्रों का बखान करते हुए संत से आशीर्वाद मांगता है. संत उसे आशीर्वाद देते हुए कहता है - ''तुम्हारे पास मजबूत और निडर सेना है, तुम्हारी विजय निश्चित है''. वह राजा अपनी विजय से आश्वस्त होकर चला जाता है और अपनी जीत की आशा व अतिविश्वास से भरकर युद्ध से पहले ही जीत का जश्न मनाने की तैयारी शुरू कर देता है. दूसरा राजा भी संत से आशीर्वाद लेने जाता है. वह अपनी सेना का कोई बखान नहीं करता. संत उसे कहता

है - ''तुम्हारी विजय संदेहजनक है''. संत के मुख से अपनी विजय को संदेहजनक जानकर राजा गंभीर चिंतन में पड़ जाता है और अपनी सेना के बड़े अधिकारियों की बैठक तुरंत बुलाकर युद्ध जीतने की रणनीति तैयार करता है.अपनी सेना को प्रेरित और प्रोत्साहित करता है. आत्म-गौरव एवं आत्म-सम्मान से जीने के लिए उनके मनोबल को बढ़ाने का प्रयास करता है. अपनी सेना को शस्त्रों-अस्त्रों के साथ सुसज्जित करता है. दोनों राज्यों में युद्ध होता है और वह विजयी होता है. पहला राजा संत के पास जाकर उसे भला-बुरा कहता है - ''आप कोई सिद्ध संत नहीं हैं. आपने मेरी विजय निश्चित बताई थी, लेकिन मैं हार गया''. संत उसे कहता है - ''युद्ध जीतने के लिए जिस रणनीति, तैयारी एवं परिश्रम की जरूरत होती है, संभवतः उसमें तुम्हारी कोई कमी रही होगी. कोई भी युद्ध केवल सेना की संख्या, अस्त्र-शस्त्र और प्रभाव से नहीं जीता जाता, अपितु उसके साथ-साथ उचित रणनीति, तैयारी, हौसले और परिश्रम की जरूरत भी होती है''.

इस घटना से यही पता चलता है कि परिश्रम के बिना कुछ भी संभव नहीं है. जीवन एक संघर्ष है, उसका सामना करने के लिए परिश्रम एक कारगर शस्त्र है.

कुछ गुण और दोष प्रत्येक व्यक्ति में होते हैं. गुणों का विकास करने और दोषों पर नियंत्रण करने के लिए परिश्रम करना पड़ता है. जो व्यक्ति भाग्य का सहारा लेकर, अपनी कमजोरियों पर पर्दा डालकर अपने गुणों का विकास नहीं करते तथा दोषों को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करते, उनकी सफलता का ग्राफ कभी ऊंचा नहीं उठता. जिन गुणों का हममें अभाव है, उन्हें ग्रहण करने के लिए हमें भरपूर परिश्रम करते हुए सफलता को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए. हमारे निरंतर प्रयास ही हमें सफलता की ओर ले जाते हैं. कई लोग सफलता के बिल्कुल पास पहुंचकर ही अपने प्रयास छोड़ देते हैं. वे यह नहीं जानते कि शायद एक-दो और प्रयास करते तो उन्हें सफलता मिल जाती. किसी भले आदमी ने सही कहा है - ''Success will come sooner or later if only you keep trying. Never give up''.

सफलता की कोई मंज़िल नहीं है, वह एक यात्रा है. जो इस यात्रा में थककर बैठ जाते हैं, उन्हें सफलता नहीं मिलती. श्रीकृष्ण ने गीता में निरंतर किए जाने वाले प्रयास को कर्म कहा है. हमारा अधिकार सिर्फ़ परिश्रम या कर्म पर है, फल पर नहीं.

कर्म के दो चरण :

सर्वशक्तिमान् के पास हमारे हर अच्छे-बुरे कर्म का लेखा-जोखा रहता है. हमारे जीवन में आने वाले सुख-दुःख हमारे अपने संचित कर्मों के परिणाम हैं. किस

अच्छे या बुरे कर्म का फल क्या मिलेगा, इसका निश्चय करने का अधिकार भी हमारा नहीं है. दर्शन की भाषा में इसे ''प्रारब्ध'' कहते हैं. व्यक्ति को अपने कर्मों का फल किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है. यदि फल अच्छा मिलता है तो लोग कहते हैं कि भाग्य अच्छा है. फल अच्छा न मिलने पर लोग उसे दुर्भाग्य से जोड़ देते हैं. इस प्रकार परिश्रम और प्रारब्ध परस्पर-विरोधी नहीं हैं, अपितु कर्म के दो चरण हैं. भाग्य को हमें कोई दैवी-कृपा या भगवत् वरदान न मानकर हमारे कर्मों या परिश्रम से उपजा प्रारब्ध ही कहना चाहिए. भारतीय दर्शन एवं अध्यात्म यह कहता है कि हमें अपने ''प्रारब्ध'' को स्वीकार करते हुए अपना जीवन-यापन करना चाहिए, ताकि हम अपने वर्तमान कर्मों एवं परिश्रम की सही दिशा तय कर सकें. इस प्रकार व्यक्ति अपने जीवन का निर्माता स्वयं ही है.

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि व्यक्ति अपने जीवन का निर्माता स्वयं है तो उन बच्चों का क्या दोष है, जो जन्म से ही कई शारीरिक या मानसिक विकार लेकर पैदा होते हैं या उन व्यक्तियों का क्या दोष है, जो जीवन-भर भले कर्म एवं परिश्रम करते हैं, लेकिन उन्हें यथेष्ट सफलता नहीं मिलती. हमारे इस जन्म के सुख-दुःख न केवल इस जन्म के, अपितु पिछले जन्म के कर्मों का परिणाम भी हैं. भारतीय अध्यात्म यह कहता है कि व्यक्ति स्थूल शरीर होने के साथ-साथ एक आत्मा भी है, जो न जन्म लेती है न मरती है, वह नित्य और शाश्वत है. शरीर के नष्ट होने पर आत्मा नष्ट नहीं होती, वह नया शरीर धारण करती हैः

न जायते म्रियते वा कदाचीनऽयं, भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

हमारे अपने ही कर्मों एवं परिश्रम से निर्मित जीवन की हर स्थिति को सहर्ष स्वीकार करके हमें आगे भी अच्छे कर्म करके अपने जीवन को सफल बनाना चाहिए. इस सृष्टि में भाग्य नाम की कोई ऐसी चीज नहीं है, जो किसी को सीधे ही राज्य सिंहासन पर बैठा दे अर्थात् ऊंची सफलता दिलवा दे. केवल परिश्रम है, जिसके सहारे व्यक्ति जीवन-नैया को पार लगा सकता है. संस्कृत में एक श्लोक है : उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।

सही दिशा में परिश्रम

कठोर परिश्रम करने के बाद भी अपनी योग्यतानुसार परिश्रम न करने और सही दिशा में परिश्रम न करने के कारण अंततः निराशा ही हाथ लगती है. जीवन

में सफलता पाने के लिए हमारा परिश्रम सही दिशा में होना चाहिए. हमने कई व्यक्तियों से यह सुना होगा कि परिश्रम तो हमने भी बहुत किया है, लेकिन हमें सफलता नहीं मिली. शायद सफलता का स्वाद चखना हमारे भाग्य में ही नहीं है और परमात्मा भी हमसे पता नहीं क्यों नाराज है.

परिश्रम हम सभी करते हैं, परंतु सफलता कुछ चुनिंदा लोगों को ही मिलती है. इसका प्रमुख कारण यह है कि अधिकांश लोग अपनी योग्यता के अनुसार सही दिशा में प्रयास नहीं करते हैं. योग्यता हममें साधारण अधिकारी बनने की भी नहीं है और हम उच्चाधिकारी बनने के सपने देखते हैं, अर्थात् हमारे प्रयास हमारी क्षमता और चाहत के विपरीत होते हैं. इसीतरह, डॉक्टर, इंजीनियर, नेता, अभिनेता एवं लेखक बनने के लिए उसी दिशा में प्रयास और परिश्रम करना चाहिए. उन कार्यों की बारीकियों को सीखकर ही यथेष्ट सफलता प्राप्त की जा सकती है. अपने में सापेक्ष गुणों का विकास करके सही दिशा में किये गये परिश्रम से विकसित आत्म-विश्वास एवं आत्म-सम्मान का स्तर ही सफलता का मापदंड निश्चित करता है.

इच्छा-शक्ति

परिश्रम को बनाए रखने और मानवीय कमजोरियों पर विजय पाने के लिए इच्छा-शक्ति मजबूत होनी चाहिए. इच्छा-शक्ति मानवीय कमजोरियों पर नियंत्रण या अंकुश का काम करती है. कहावत भी है - ''जहां चाह वहां राह''. राह वहां निकलती है, जहां चाहत मजबूत होती है. यह चाहत ही है, जो व्यक्ति को कमजोर नहीं बनने देती. जैसे-जैसे चाहत बढ़ती है, वैसे-वैसे व्यक्ति सही दिशा में परिश्रम करने लगता है. यही कारण है कि कई व्यक्ति मंज़िल की राह में ही थक जाते हैं और लक्ष्य को बीच में ही छोड़ देते हैं.

व्यक्ति को अपनी जुबान पर ऐसे शब्द भी नहीं लाने चाहिए, जो उसकी इच्छा-शक्ति को कमजोर बनाते हैं, यथा : अब मैं थक गया हूँ - मेरा भाग्य साथ नहीं देता - मेरी बुद्धि कम है-मैं बूढ़ा हो गया हूँ. ऐसे शब्द व्यक्ति की इच्छा-शक्ति को कमजोर करके उसे परिश्रम की राह से विमुख कर भाग्य की राह पर मोड़ देते हैं.

अच्छा स्वास्थ्य एवं अच्छी आदतें

व्यक्ति कितना ही अधिक गुणी, बुद्धिमान एवं प्रतिभाशाली हो, उसे सफलता प्राप्त करने के लिए हर कार्य अपने शरीर एवं मन से करना है. अतः मन और शरीर का स्वास्थ्य अच्छा रहना आवश्यक शर्त है. शरीर का स्वास्थ्य अच्छा रहने पर मन

प्रसन्न रहता है और उत्पादक बना रहता है. शरीर का स्वास्थ्य बिगड़ने से मन भी बीमार हो जाता है तथा कई प्रकार के भय, भ्रम और विभ्रम का शिकार होकर अस्वस्थ हो जाता है, जिससे प्रयास एवं परिश्रम करने की शक्ति क्षीण हो जाती है. सच यह है कि दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं और परस्पर जुड़े हैं.

अच्छा सात्विक भोजन, स्वच्छ जल, प्राणायाम, व्यायाम शरीर को न केवल विभिन्न रोगों से बचाने की प्रतिरोधक शक्ति का विकास करते हैं, अपितु परिश्रम करने की शक्ति का विकास भी करते हैं. इसीप्रकार अच्छे विचार, न्यायोचित निर्णय, प्रार्थना, प्रेम, सेवा, दान आदि हमारे मन के स्वास्थ्य को मजबूत बनाते हैं, जो छोटी-छोटी समस्याओं से घबराना छोड़कर लक्ष्य से बंधा रहता है और भाग्य की ओर उन्मुख नहीं होता. खान-पान एवं रहन-सहन की अच्छी आदतें परिश्रम करने के लिए व्यक्ति की क्षमता में वृद्धि करती हैं.

सकारात्मक सोच

जो व्यक्ति सकारात्मक सोच रखते हैं, उनका भाग्य में भरोसा नहीं होता, वे परिश्रम में ही विश्वास रखते हैं. इस संबंध में मनीराम और धनीराम का उदाहरण दिया जा सकता है. मनीराम और धनीराम एक इंटरव्यू के लिए घर से निकलते हैं. दोनों ने नयी सफेद कमीज पहनी है और टाई लगाई है. घर से बाहर निकलते ही कबूतर उनकी कमीज पर गंदगी कर देता है. इसपर दोनों की प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न है. मनीराम ''ओ हो! पता नहीं सुबह किसका मुंह देखा था. बिस्तर से उठा तो सिर में दर्द था. अब कबूतर ने गंदा कर दिया. आज मेरा भाग्य ही खराब है. लगता है आज का इंटरव्यू भी ऐसा ही जाएगा. वापस घर जाना ही अच्छा है''. मनीराम घर चला जाता है. इसपर धनीराम की प्रतिक्रिया ''ओ हो! कमीज गंदी हो गई. अब घर जाकर कमीज बदलने का तो समय नहीं है. शुक्र है कबूतर ने गंदगी की. अगर गधे-घोड़े भी उड़ते होते तो क्या होता? इंटरव्यू पर तो जाना ही है''. कमीज अच्छी तरह साफ करके आटोरिक्शा पकड़कर इंटरव्यू पर चला गया.

इन्सान को अपनी ज़िंदगी से शिकायत नहीं करनी चाहिए. ज़िंदगी हर हाल में अच्छी है और उसे अच्छे रूप में ही स्वीकार करना चाहिए. एकबार श्री अमिताभ बच्चन ने किसी टीवी कार्यक्रम में कहा था कि उन्हें बाबू जी ने बचपन में यही सिखाया, ''मन का हो जाए तो अच्छा, मन का न हो तो और अच्छा''. वस्तुतः यही सकारात्मक सोच है, क्योंकि जीवन में आनन्द एवं सुख इन्सान अपने ही संचित कर्मों एवं परिश्रम से प्राप्त करता है. भाग्य का सहारा लेकर रोते रहने से व्यक्ति नकारात्मक

सोच अपनाकर सफलता के रास्ते से विमुख हो जाता है और परिश्रम का सहारा लेकर सकारात्मक सोच अपनाकर व्यक्ति सफलता के मार्ग की ओर अग्रसर होता है. हमें गीता के संदेश को संबल बनाकर अपनी सोच को सकारात्मक बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए - ''जो हो रहा है अच्छा हो रहा है, आगे भी अच्छा होगा. हम क्या लाये थे, जो हमने खो दिया. जो लिया उससे लिया और जो दिया उसी को दिया'', यह संदेश हमारी सोच को सकारात्मक बनाए रखने की अद्‌भुत क्षमता रखता है.

स्व-निर्देशन

हमने अपने जीवन में कई लोग ऐसे देखे होंगे, जो छोटी-छोटी बात पर दूसरों से सलाह-मशविरा लेने चल पड़ते हैं. अधिकांशतः ये लोग न अपने-आप में और न ही परमात्मा में अटूट विश्वास रखते हैं. यदि व्यक्ति परिश्रमी है और अपनी सफलता पर पूरा यकीन रखता है तो उसे उम्मीद का दामन थामकर आगे बढ़ना चाहिए और अपने जीवन में हर फैसला स्वयं करना चाहिए. अपने फैसले के परिणाम की जिम्मेदारी भी उसे खुद पर लेनी चाहिए. किसी गंभीर तकनीकी विशेष विषय या मामले तथा विषम परिस्थिति में सलाह लेना बुरा नहीं है, लेकिन हर परिस्थिति में दूसरों से सलाह लेकर कार्य करना अपने-आपको पंगु बनाने जैसा हो जाएगा.

ऊंची सफलता प्राप्त करने के लिए परिश्रम के साथ-साथ अंतर-निर्भरता की आवश्यकता पड़ती है, परंतु पर-निर्भरता घातक है. वस्तुतः अन्तर-निर्भरता, आत्म-निर्भर होने की ही सूचक है, क्योंकि जब हम अपने गुणों का विकास करके किसी से कुछ प्राप्त करते हैं तो हम उन्हें कुछ देने की स्थिति में भी होते हैं. स्व-निर्देशन हमें आत्म-निर्भर एवं सक्षम बनाता है.

आज का महत्व

आज का परिश्रम कल की सफलता का मूलाधार है. हमें जो भी करना है आज करें और अभी करें. भाग्य के भरोसे बैठे रहने वाला भविष्य के लिए टाल-मटोल करता रहता है और सदैव भविष्य की ओर देखता रहता है. कर्मठ और परिश्रमी व्यक्ति सदैव पहल करने में विश्वास रखता है और किसी भी नये कार्य को प्रारंभ करके सबको चकाचौंध कर देता है. आज (वर्तमान) को अंग्रेजी में प्रैजेंट (उपहार) कहते हैं. आज सच में एक उपहार है.

आज का परिश्रम ही कल हमारा प्रारब्ध (परिश्रम का फल) बनता है, जो हमें सफलता प्रदान करता है. आज किए हुए कर्म का फल हमें कल मिलता ही है, लेकिन हमें फल से न जुड़कर केवल परिश्रम से जुड़ना चाहिए. क्योंकि जो कल था, वही

आज है. कल हमारे लिए कोई फूलों की सेज नहीं सजा देगा, केवल आज का परिश्रम एवं उद्देश्यपूर्ण कर्म प्रसन्न रख सकता है. इसलिए हमारा अधिकार सिर्फ कर्म पर होना चाहिए.

परिश्रम गुण है, भाग्य कोरी कल्पना है

भाग्य मानवीय गुण नहीं है. यह कोरी कल्पना के साथ-साथ एक दोष भी है, जो व्यक्ति को निकम्मा बनाकर उसे नाकामी की ओर धकेल देता है. भाग्य का आश्रय लेने वाला व्यक्ति जीवन-भर केवल खाक छानता रहता है और खुशी से महरूम रहता है. भाग्य का आश्रय हमारी रगों में दौड़ने वाले शोणित को ठंडा कर देता है और हमारी सारी मानसिक शक्तियों यथा कल्पनाशक्ति, स्मरणशक्ति, बौद्धिक शक्ति, संवेगात्मक शक्ति को जंग लगा देता है. जब इन शक्तियों को जंग लग जाता है तो परिश्रम करने के लिए मन और शरीर को मिलने वाली विवेक, धैर्य, उत्साह और उमंग की खुराक कम हो जाती है और व्यक्ति स्वयं के लिए तथा समाज के लिए अनुपयोगी बन जाता है. भाग्य को दोष देकर एवं भाग्य का दोष लेकर जीने वाला अनुपयोगी व्यक्ति अंततः जीवन से हार जाता है.

भाग्य का सहारा लेने वाले अपने बच्चों, परिवार एवं समाज के अपराधी हैं, क्योंकि वे जिम्मेदारियों से भागते हैं. इनके लक्ष्य भी ऊंचे नहीं होते हैं, क्योंकि ऊंचे लक्ष्य के लिए अत्यधिक परिश्रम की दरकार होती है. परिश्रम करने पर भी जब सफलता न मिले तो अपने कर्मों एवं प्रयासों की समीक्षा करनी चाहिए, लेकिन किसी भी स्थिति में लक्ष्य को नहीं छोड़ना चाहिए. परिश्रम ही एक ऐसा गुण है, जो हमारे जन्म एवं जीवन के उद्देश्य को सार्थक बनाता है, इसलिए ईश्वर स्वरूप है.

अरुण श्रीवास्तव, केंद्रीय राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, मुंबई के प्रभारी मुख्य प्रबन्धक हैं.

प्रदीप कुलकर्णी

मानव संसाधन प्रबन्धन एवं संप्रेषण

मानव संसाधन प्रबन्धन और संप्रेषण एक दूसरे से जुड़े हैं. जब भी मानव संसाधन के बारे में चर्चा होती है, संप्रेषण कुशलता के विषय में बात छिड़ना अनिवार्य है. मानव संसाधन प्रबन्धन की मुख्य भूमिका सभी कर्मचारियों को संस्था के उद्देश्यों के साथ जोड़ने की होती है.

हर एक व्यावसायिक अथवा गैर व्यावसायिक संस्था में मानव संसाधन प्रबन्धन में बदलाव सुस्पष्ट है. बैंकिंग संस्थानों में यह बदलाव अधिक उजागर हुए हैं. मूलतः कर्मचारी आयोजना के कार्य जैसे नियुक्ति, स्थानांतरण, प्रतिनियुक्ति, वेतन व अन्य लाभ वितरण, अनुशासनिक कार्रवाई तथा सेवा नियुक्ति के कार्य से बढ़कर कार्य निष्पादन की आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण, कुशलताओं की मैपिंग तथा कर्मचारियों के विकास की ओर अधिक जोर दिया जा रहा है. संस्था के उद्देश्य एवं लक्ष्य-प्राप्ति में मानव संसाधन सबसे भिन्न तथा महत्वपूर्ण साधन है. महत्वपूर्ण इसलिए कि मानव शक्ति ही अन्य साधनों को उपयोग में लाकर लक्ष्यों को प्राप्त करती है. इसलिए मानव संसाधन विकास के रूप में आँका जा रहा है.

आर्थिक सुधारों के दो दशक गुजरने वाले हैं. इस दौर में अन्य संस्थाओं के साथ-साथ भारतीय बैंकों को रूपांतरण प्रबन्धन की चुनौती का सामना करना पड़ा है. संपूर्ण रूपांतरण की इस प्रक्रिया में कर्मचारियों का योगदान उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना नई तकनीक तथा ग्राहकोन्मुख उत्पादों को अपनाने का. वैश्विक प्रतिस्पर्धा ने बैंकों को अपना अस्तित्व बचाने तथा व्यावसायिक वृद्धि को बनाए रखने के लिए ''नवीनतम तकनीक'', ''वित्तीय प्रबन्धन'', ''कार्यालय प्रबन्धन'' तथा ''जोखिम प्रबन्धन'' के अद्यतन ज्ञान तथा कुशलताओं को अपनाने पर बाध्य किया है. इस प्रकार के अनभिज्ञ पहलुओं को अपनाकर सुचारू रूप से कार्यान्वित करने में मानव संसाधन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है. मानव संसाधन प्रबन्धन एक समर्थक क्रियाकलाप

से बढ़कर उत्पादकता तथा लाभवृद्धि के प्राथमिक क्रियाकलाप का हिस्सा बना है. बैंकों में पिछले डेढ़ दशक से ''कर्मचारी उत्पादकता'' में वृद्धि को उपलब्ध मानव संसाधन के बेहतर विकास का परिणाम माना जा रहा है.

वैश्वीकरण, उदारीकरण तथा प्रतिस्पर्धा के युग में मानव संसाधन प्रबन्धन कई चुनौतियों का सामना कर रहा है.

- **संस्थागत तौर पर कुछ प्रमुख चुनौतियाँ :**

  व्यावसायिक कुशल कर्मचारियों की नियुक्ति तथा उन्हें जोड़े रखना
  कार्य निष्पादन का मूल्यांकन
  पारदर्शी प्रबन्धन
  कर्मचारियों का उचित परिनियोजन
  सहभागितापूर्ण प्रबन्धन
  कर्मचारियों में कुशलताओं की वृद्धि

- **कर्मचारियों की मानसिकता तथा व्यवहार के स्तर पर प्रमुख चुनौतियाँ :**

  कर्मचारियों की सोच में तथा व्यवहार में सकारात्मकता
  टीम भावना / संघ भावना
  अभिप्रेरणा एवं अभिवृत्तियों में परिवर्तन
  कुशल नेतृत्व

वर्तमान परिवेश में संस्थागत चुनौतियों से निपटने हेतु, आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी तथा प्रबन्धकीय विशेषज्ञों का साथ लिया जा रहा है. मानव संसाधन एवं विकास की नई नीतियों को अपनाने का प्रयास हो रहा है. पीपुल सॉफ्ट जैसे सूचना प्रौद्योगिकी को उपयोग में लाया जा रहा है. किन्तु बदलाव तो हर बदले हुए परिवेश में स्थित होते हैं. इसलिए कर्मचारियों की मानसिकता तथा व्यवहार के स्तर पर की चुनौतियों का सामना केवल कर्मचारियों की अभिप्रेरणा से ही किया जा सकता है.

अभिप्रेरणा : अभिप्रेरणा एक मनोवैज्ञानिक उत्तेजना है, जो सभी को आत्म विकास के लिए प्रोत्साहित करती है. अभिप्रेरणा में उन समस्त क्रियाओं का समावेश होता है, जिनके द्वारा व्यक्ति को आत्म-विकास के लिए प्रेरित किया जा सकता है. आत्म-विकास की ''क्षमता'' और आत्म-विकास की ''इच्छा'' दोनों भिन्न बातें हैं. क्षमताओं के बावजूद इच्छा की कमी, इच्छा रहने पर भी क्षमता की कमी के

साथ कर्मचारी कार्यरत हैं. अतः अभिप्रेरणा का मूल व्यक्ति दर व्यक्ति भिन्न होता है.

''अब्राहम मॅस्लो'' के सिद्धान्तानुसार व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु अभिप्रेरित होता है. जबकि ''मैकग्रेगर'' के ''बाय'' सिद्धान्तानुसार व्यक्ति स्वभाव से निष्क्रिय नहीं होता. यदि उसे अभिप्रेरित किया जाए तो वह आत्म विकास की ऊंचाई को पा सकता है. व्यक्तित्व के स्तर पर केवल वह निर्धारित उद्देश्यों, नीतियों एवं व्यवहारों को समाजोन्मुखी बनाने में सक्षम है.

''सहभागिता सिद्धान्त'' के अनुसार व्यक्ति कार्य एवं विषय के प्रति लगाव एवं अपनेपन की भावना चाहता है, अभिव्यक्ति के अवसर तथा व्यक्तित्व विकास चाहता है. अभिप्रेरणा एक ऐसा मनोवैज्ञानिक तथ्य है, जिसका संबंध उसकी सभी आंतरिक शक्तियों से है, जो उसे एक निश्चित ढंग से क्रियाशील एवं विकासशील होने के लिए उत्तेजित करती है.

प्रत्येक व्यक्ति परिवर्तन एवं विकास के प्रति संवेदनाशील होता है. व्यक्ति का आत्म-विकास आंतरिक प्रभाव एवं बाह्य प्रभाव से निर्मित एक ऐसा प्रभाव है, जो निश्चित दिशा में कार्य करता है.

ऐसे में संस्था के नेतृत्व की जिम्मेदारी है कि वे सभी कर्मचारियों को सकारात्मक रूप से प्रोत्साहित करें. यह समझें कि अभिप्रेरणा कार्य को आसान बनाती है. असहज दबाव का कार्य क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, जबकि निरन्तर अभिप्रेरणा दबाव को सहज मानकर कार्य को गति प्रदान करती है.

कर्मचारियों को अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करने, क्षमताओं को परखने तथा उपयोग में लाने का अवसर प्रदान करने से वे अभिप्रेरित रहेंगे. सीधे एवं सरल सूत्र में ''लगे रहो मुन्ना भाई'' के मुन्ना जैसे कार्य में समाधान, कार्य के प्रति लगन और कार्य के साथ जुड़े रहना ही उन्हें अपनी क्षमता और इच्छा को जोड़कर आत्म-विकास पर सोचने पर बाध्य करता है.

कार्य के साथ जुड़े रहने का अर्थ है, लगन, श्रद्धा तथा कुछ हासिल करने की चाहत को मन में जगाना. यदि कर्मचारी अपने कार्य या कार्यालयीन वातावरण में यह पाता है, तब अपने आत्म विकास को संस्था के साथ जोड़कर सोचता है.

कर्मचारी का संस्था या कार्य के साथ जुड़े रहना निम्न दर्शित 3 **'S'** मॉडल में स्पष्ट होता है.

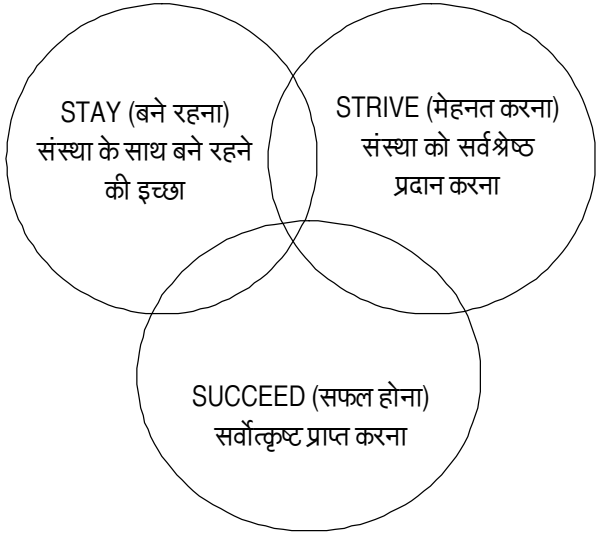

कार्यरत कर्मचारी इन सभी दौरों से निरन्तर गुजरता है. वह नेतृत्व तथा वरिष्ठों से कुछ अपेक्षाएँ रखता है.

- भविष्य की योजना पर नज़र
- अधिकार एवं जिम्मेदारी
- वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन
- पारस्परिक संबंध
- भावात्मक लचीलापन
- पहल
- समयानुसार शीघ्र निर्णय
- यथाशीघ्र उत्पाद एवं कार्य प्रणाली में बदलाव की जानकारी
- टीम भावना
- सौहार्द भाव / सहायता भाव
- प्रशिक्षण एवं विकास की जानकारी

इन सभी बातों को कर्मचारियों से समझने तथा उन तक आवश्यक बातों को पहुँचाने का एकमात्र मार्ग है - संवाद संप्रेषण. उच्च श्रेणी के संप्रेषण कौशल से

कर्मचारियों को अभिप्रेरित किया जा सकता है. पारस्परिक संबंधों को प्रगाढ़ बनाया जा सकता है. पारस्परिक निर्भरता को बढ़ाया जा सकता है. सदस्यों के गुणों को समझकर उन्हें उपयोग में लाया जा सकता है.

संवाद संप्रेषण :

संप्रेषण का प्रमुख उद्देश्य होता है, उभय पक्ष अपने पारस्परिक व्यवहार में तारतम्य प्रस्थापित करें. विषय वस्तु या समस्या को एक ही प्रकार से समझें. व्यक्ति को समझने अथवा उससे जुड़ने का पहला कदम होता है - संप्रेषण. संप्रेषण कौशल का व्यावसायिक तथा व्यक्तिगत स्तर पर भी महत्व है.

संप्रेषण कौशल के दो पहलू हैं :

1. अभिव्यक्ति कौशल
2. श्रवण कौशल

अभिव्यक्ति कौशल के उपयोग से गतिविधियों की जानकारी को कर्मचारियों तक पहुँचाया जा सकता है. जबकि श्रवण कौशल से उसे समझा जा सकता है. संवाद संप्रेषण में जितने शाब्दिक संवाद महत्वपूर्ण हैं, उतने ही महत्वपूर्ण हैं शारीरिक संवेदन. संपूर्ण संप्रेषण कौशल वृद्धि को निम्न रूप से आँका जा सकता है :

50 प्रतिशत सुनना
25 प्रतिशत कहना / बात करना
15 प्रतिशत पढ़ना
10 प्रतिशत लिखना

पारस्परिक व्यक्तिगत संबंधों में प्रगाढ़ता लाने में श्रवण कौशल अहं भूमिका अदा करता है. संवाद संप्रेषण की पहली और महत्वपूर्ण कड़ी है - श्रवण. संवाद को सही ढंग से समझने की क्षमता व्यक्ति को अच्छा श्रोता बनाती है. संवाद में संप्रेषित विचारधारणाओं एवं चिन्ताओं को समझकर समुचित कार्यवाही के लिए तैयार करती है.

संवाद संप्रेषण का दूसरा महत्वपूर्ण अंग है फीड बैक. यह पारस्परिक जानकारी आदान-प्रदान करने का माध्यम है, जिससे व्यक्ति को अपनी योग्यताओं तथा कमजोरियों की जानकारी प्राप्त होती है. प्रभावी फीडबैक की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं, जैसे कि वह :

- तथ्यों पर आधारित हो, न कि राय पर
- सुझाव के रूप में हो, न कि आदेशात्मक
- परिवर्तनीय तथा सुधारात्मक मुद्दों पर ध्यान देता हो.

कुशल संवाद संप्रेषण के माध्यम से संस्थागत नेतृत्व अपने कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने हेतु निम्न बातें कर सकते हैं, जो कि संस्था के लिए आवश्यक हैं :

- लक्ष्यों की जानकारी टीम सदस्यों तक पहुँचाना
- लक्ष्य-प्राप्ति में योगदान करने का आह्वान करना
- लक्ष्य-प्राप्ति में योगदान करने वालों को सराहना
- महत्वपूर्ण कार्य में टीम सदस्यों को सम्मिलित करना
- निर्णय लेने की प्रक्रिया में सदस्यों से परामर्श करना
- टीम के प्रत्येक सदस्य को उसकी भूमिका समझाना
- स्वस्थ आलोचनाओं को प्रोत्साहित करना
- व्यवसाय से जुड़ी प्रत्येक घटना से सभी को अवगत कराना
- प्रशिक्षण तथा कोचिंग द्वारा कर्मचारियों की कुशलता का विकास करना
- टीम सदस्यों के सुख दुख में सम्मिलित होना
- कारोबार संबंधित जोखिम के बारे में सचेत करना
- योगदान के लिए सभी को उचित अवसर प्रदान करना
- कर्मचारी तथा कर्मचारी संगठनों से अच्छे संबंध प्रस्थापित करना

मानव संसाधन प्रबन्धन एवं विकास में संवाद संप्रेषण को सुचारू रूप से निभाने से निम्न पहलुओं को टाला जा सकता है :

- व्यक्तिगत कलह
- कर्मचारी निष्ठा का ह्रास
- जिम्मेदारी वहन करना टालने की प्रवृत्ति
- असंगत/अयोग्य सूचनाओं का पालन
- लक्ष्यों को निर्धारित अवधि में हासिल नहीं करना

कर्मचारियों के संस्था के साथ जुड़े रहने के विषय पर "बिझनेस टुडे" द्वारा किए गए सर्वे के अनुसार, कर्मचारी निम्न छः पहलुओं पर ध्यान देता है :

1. कार्यरत लोग (People) - नेतृत्व, अन्य साथी तथा कार्य संस्कृति
2. कार्य (Work) - अभिप्रेरणा, कार्य प्रकार और गुणवत्तापूर्ण संसाधन
3. अवसर (Opportunities) - पदोन्नति, प्रशिक्षण
4. कार्य जीवन की गुणवत्ता (Quality life) - व्यक्तिगत तथा व्यावसायिक समतोल
5. कार्य प्रणाली (Procedures) - स्पष्ट नीति, कार्य प्रणाली पद्धति
6. मुआवजा (Compensation) - वेतन, अन्य लाभ

मानव शक्ति आयोजना इसी तथ्य पर आधारित है कि मानव संसाधन में मात्रात्मक और गुणात्मक पहलुओं पर नियंत्रण हो और सही स्थान पर, सही समय पर सही लोगों की नियुक्ति हो.

इक्कीसवीं सदी में अधिकतर कार्य आधुनिक तकनीक एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से संचालित हो रहे हैं. किन्तु यह ज्ञात रहे कि मशीनें मानव शक्ति द्वारा ही चलायी जाती हैं. अतः इनकी कार्यकुशलता मानव संसाधन के कौशल पर निर्भर होती है. इसके अलावा ग्राहक को समझने और समझाने जैसे संवेदनशील कार्य केवल मानव कर सकता है. इसलिए समर्पित मानव संसाधन किसी भी व्यावसायिक संस्था की अनिवार्यता है. मानव संसाधन अभिप्रेरणा से कार्य के प्रति समर्पित होता है. संवाद संप्रेषण के विविध उपायों द्वारा कर्मचारियों में अभिप्रेरणा जागृत की जा सकती है.

प्रदीप कुलकर्णी, स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में वरिष्ठ प्रबन्धक (संकाय) हैं.

संतोष कुमार शुक्ल

समस्याएं समाप्त नहीं होतीं, केवल रूप बदलती हैं

1. यदि किसी समस्या का समाधान नहीं है तो वह समस्या नहीं एक तथ्य है और उसके साथ जीना सीखना होगा.
2. काल्पनिक समस्याएं, वास्तविक समस्याओं से ज्यादा डरावनी होती हैं.

शीर्षक के कई दार्शनिक पाठ हो सकते हैं.

प्रथम : सांसारिक व्यवस्था में एक तरह का समन्वय और सामंजस्य बना होता है, जो तार्किक और प्रायः अंतार्किक किन्तु सर्व-स्वीकार्य होता है. कभी-कभी यह सामंजस्य टूटता है और हम परेशान हो उठते हैं. यह सामंजस्य चेतन और अचेतन अर्थात् प्रकृतिजन्य व मानवीय, दोनों हो सकता है. दुनिया के अलग-अलग भागों में वर्षा की औसत मात्रा अलग-अलग है, यह प्रकृतिजन्य है. लोग उपलब्ध जल के अनुसार अपना आर्थिक व सामाजिक ताना-बाना बुने हुए रहते हैं. एक सामंजस्य बना रहता है, किन्तु किसी वर्ष यदि बारिश अपेक्षा से कम हुई तो लोग विचलित हो उठते हैं. क्योंकि सामंजस्य टूट जाता है. सामंजस्य की अवस्था समस्याहीनता व सामंजस्य के अभाव को समस्याग्रस्तता कहा जा सकता है.

द्वितीय : संसार सतत् गतिमान है, जड़, चेतन सब कुछ. यह गति दोहरी है. एक गति निर्माणकारी व कल्याणकारी है, दूसरी गति जो विपरीतगामी है, विक्षोभकारी या कभी-कभी विनाशकारी होती है. दोनों गतियों के संतुलन से जीवन चक्र चलता रहता है. सांसारिक व्यवस्था बनी रहती है. आधुनिक युग में मनुष्य की हस्तक्षेपी भूमिका दोनों ही प्रकार की गतियों में दृष्टव्य है. परिणामतः विकास और

विनाश दोनों की तेज गति परिलक्षित है. संतुलन-असंतुलन-संतुलन एक अविरल क्रिया है. प्रकृति, अर्थ जगत् और समाज इसी सांसारिक व्यवस्था के अभिन्न अवयव हैं. अतिवृष्टि और अनावृष्टि प्राकृतिक असंतुलन की अभिव्यक्ति हैं, वर्तमान दौर की भीषण मंदी अर्थ जगत् में असंतुलन का उदाहरण है व हिंसा व आतंक को सामाजिक असंतुलन कहा जा सकता है. इसी असंतुलन को समस्या का नाम दिया जा सकता है. संतुलन समस्याहीनता है और असंतुलन समस्याग्रस्तता है.

एक अंतहीन सिलसिला :

व्यक्ति के स्तर पर यदि समस्याओं का अध्ययन करें तो पाएंगे कि समस्याएं केवल वास्तविक न होकर भावनात्मक या काल्पनिक भी हो सकती हैं. बॉस या किसी परिजन द्वारा झिड़के जाने पर मन कई दिन तक अस्थिर और बेचैन रहता है, बुरा सपना देखा और बदन कांपने लगता है, कल सुबह ट्रेन पकड़नी है और रात भर नींद नहीं आती आदि. हर दिन की ऐसी समस्याओं का यदि योग किया जाए तो वे सैंकड़ों में होंगी. बचपन में ऊँचे अंकों के साथ परीक्षा पास करने व कक्षा में अव्वल आने का कठिन लक्ष्य, पढ़ाई पूरी करने के उपरान्त बढ़िया रोजगार, फिर रोटी, कपड़ा और मकान की समस्या, तत्पश्चात् पारिवारिक व सामाजिक सुरक्षा की चिन्ता, इन सबसे उबरे तो अहम् और सम्मान की तुष्टि. समस्याओं का एक अन्तहीन सिलसिला बना रहता है.

सफलता एक बड़ी समस्या :

किसी ने ठीक कहा है, ''यदि आप सतर्क नहीं हैं तो सफलता आपकी मृत्यु का कारण बन सकती है''. आधुनिक युग में सफलता की परिभाषा कुछ बदल सी गई है. जीवन में जैसे-जैसे आप सफलता की सीढ़ियां चढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे व्यवसायगत समस्याएं बढ़ती जाती हैं. यदि आप विपणन के क्षेत्र में हैं तो ये समस्याएं और भीषण रूप में प्रकट होती हैं - ऊँचे लक्ष्य, कठिन प्रतिस्पर्धा, ग्राहक असंतोष, गिरती उत्पादकता, कर्मचारियों में अभिप्रेरणा का अभाव आदि.

ये सारी समस्याएं कभी-कभी एक साथ चारों ओर से वार करती हैं और आप पाते हैं कि आपकी स्थिति चक्रव्यूह में फंसे अभिमन्यु-सी हो गई है. आपकी सारी बुद्धि, विवेक और तर्कशक्ति जवाब दे जाती है. मानसिक दबाव बढ़ने लगता है. मानसिक दबाव की भावनात्मक व शारीरिक प्रतिक्रिया तनाव है. यह तनाव एक स्तर के बाद स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर डालता है और कार्यक्षमता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है. कहते हैं कि उत्पादकता और तनाव के बीच सीधा रिश्ता है. तनाव

के बिना उत्पादकता वृद्धि या कौशल वृद्धि संभव नहीं है. तनावहीन अवस्था को ''जंगावस्था'' (Rustout syndrome) भी कहा जा सकता है. जबकि अत्यधिक तनाव ''भस्मावस्था'' (Burnout) का कारण बनता है. हालांकि तनाव की उपयुक्त मात्रा प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग होगी, जो उसकी मानसिक बनावट और जीवन दर्शन पर निर्भर करेगी.

व्यक्तिगत जीवन और समस्याएं :

अगर समस्याएं जीवन का दूसरा नाम है तो समस्याओं से विचलित न होना जीवन जीने की कला है. कहा जाता है कि जीवन में विकल्पों की उपलब्धता ही आजादी है और विकल्पों का अभाव गुलामी है. विकल्पहीनता, समस्याग्रस्तता है. व्यक्तिगत व पेशेगत दोनों ही मोर्चों पर विकल्पों की तलाश में संबद्ध व्यक्ति समस्याओं का सामना बेहतर ढंग से कर पाता है. एकल कौशल वाले कर्मचारियों की बनिस्पत बहु कौशल वाले कर्मचारियों के पास छंटनी की अवस्था में अधिक विकल्प खुले रहते हैं. इसी प्रकार हमारे जीवन में कुछ बृहत्तर लक्ष्य होने चाहिए. ये लक्ष्य हमें न केवल ऊर्जावान रखते हैं, बल्कि छोटी-छोटी बाधाओं को नजरंदाज करने की ताकत भी देते हैं. बड़े लक्ष्य होने से हम दिन प्रतिदिन की छोटी-छोटी समस्याओं को अनावश्यक तूल देने से बच जाते हैं. एकाकीपन समस्या है, सहबद्धता की भावना हमें विचलित होने से बचाती है. इसे सामाजिक नेटवर्किंग भी कहा जाता है. जो लोग अपने परिवार, मित्रों, पड़ोसियों व सहकर्मियों से मधुर संबंध रखते हैं व आत्मिक लगाव महसूस कर सकते हैं, उनमें तनाव की सम्भावना कम होती है. वातावरण से उत्पन्न सकारात्मक ऊर्जा, नकारात्मक स्थितियों का निषेध करती रहती है.

व्यावसायिक संगठन व समस्या निवारण :

व्यावसायिक संगठनों को नाना प्रकार की समस्याओं से रूबरू होना पड़ता है. एक प्रगतिशील संगठन न केवल वर्तमान समस्याओं की समझ रखता है, बल्कि सम्भाव्य समस्याओं पर भी नजर रखता है. संगठन के सामने सदैव अपने बाजार अंश को बढ़ने/बचाए रखने, कार्यकुशलता में वृद्धि, ग्राहक की परिवर्तनशीलता और बढ़ती अपेक्षाओं पर नजर रखना, कर्मचारियों को अभिप्रेरित रखने जैसी बड़ी चुनौतियां रहती हैं. एक भविष्योन्मुखी संगठन, समस्याओं के निराकरण हेतु तदर्थ उपायों के विपरीत स्थायी ढांचा खड़ा करने में विश्वास रखता है. जोखिम प्रबंधन, आपदा प्रबंधन व व्यवसाय निरंतरता योजना इसी सोच का हिस्सा है.

एक सुदृढ़ संगठन के लिए योग्य एवं कल्पनाशील नेतृत्व, उत्साही टीम सदस्य, स्पष्ट लक्ष्य के साथ ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर की ओर सतत एवं प्रभावी संवाद आवश्यक है. जहां एक ओर नेतृत्व अपने "विजन" को लेकर सदस्यों को अनुप्राणित करता है, वहीं टीम के सदस्यों को अपनी सर्जनात्मकता को फलीभूत होने के पूरे अवसर प्रदान करता है. यूनियन बैंक के माननीय चेयरमैन व प्रबंध निदेशक द्वारा शुरू किया गया "नवोन्मेष" (Innovation) इसका अप्रतिम उदाहरण है.

समस्या को परिभाषित करना :

दरअसल संगठनों के अंदर, समस्याओं से निपटने के लिए संस्थाबद्ध दृष्टिकोण रखते हुए एक ढाँचा खड़ा करने की आवश्यकता होती है. एक पूरी प्रक्रिया, जहाँ समस्या को परिभाषित करने, उसकी तह तक जाने व सर्वश्रेष्ठ विकल्प रखने व उस पर अमल करवाने का प्रबंध हो. संगठन के अंदर ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि न केवल वर्तमान समस्याओं, बल्कि सम्भाव्य समस्याओं का भी पूर्वानुमान किया जा सके. ऐतिहासिक आंकड़ों को एकत्र कर उनके विश्लेषण व मूल्यांकन की पद्धति होनी चाहिए. प्रभावी शोध एवं विकास कितना आवश्यक है, इसे एक उदाहरण के साथ रखा जा सकता है. कोई भी उत्पाद जीवनचक्र की तीन अवस्थाओं से गुजरता है - चढ़ाव, स्थिरता व उतार. इससे पूर्व कि उत्पाद का बाजार तीसरी अवस्था तक पहुँचे, संगठन के लिए आवश्यक है कि ग्राहक की बदली हुई मांग के अनुरूप एक नए उत्पाद को बाजार में उतारे या फिर वर्तमान उत्पाद को कुछ नवीनताओं के साथ प्रस्तुत करे. शोध एवं विकास एक सतत् आवश्यकता है और इस कार्य में न केवल उच्च प्रबंधन, बल्कि हर स्तर के टीम सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए.

निकटस्थ कारण ढूंढना :

समस्या का मुख्य कारण क्या है, उसकी तह तक पहुँचना, तर्क - बुद्धि के साथ-साथ विवेक की मांग करता है. **'5 क्यों'** तकनीक इस दिशा में सहायक हो सकती है. **'5 क्यों'** एक ऐसी तकनीक है, जिसके अंतर्गत किसी समस्या से रूबरू होने पर 'क्यों' प्रश्न के सहारे कारण तलाशने की कोशिश की जाती है. हर बार प्राप्त उत्तर को प्रश्न की तरह रखकर समस्या की जड़ तक पहुँचा जाता है. किन्तु थोड़ी सी असावधानी कुतर्क के रास्ते अंधी गली तक ले जा सकती है. इसे एक उदाहरण द्वारा पेश करना समीचीन होगा. महाप्रबंधक की मीटिंग में एक शाखा प्रबंधक देर से पहुँचते हैं और डांट खानी पड़ती है. शाखा प्रबंधक महोदय '**5 क्यों**' के माध्यम से समस्या का कारण ढूँढते हैं.

'मीटिंग के लिए देर क्यों हुई?'

'ट्रैफिक जाम के कारण'.

'ट्रैफिक जाम क्यों हुआ?'

'नेताजी की सभा उसी इलाके में थी'

'नेताजी की सभा क्यों थी?'

'चुनाव के दिन हैं'

अब शायद आगे और "क्यों" का उत्तर नहीं चाहिए. इसी समस्या को अलग तरह से समझा जाए.

'मीटिंग के लिए देर क्यों हुई?'

'ट्रैफिक जाम के कारण.'

'ट्रैफिक जाम में क्यों फंसे?'

'इस सम्भावना के बारे में सोचा नहीं'. नहीं सोचा तो डांट खाइए और पछताइए. घर से मीटिंग हॉल तक कितनी दूरी है, यदि वाहन खराब हुआ, ट्रैफिक जाम लगा तो क्या विकल्प है? इस पर विचार नहीं किया गया. यहां समस्या ट्रैफिक जाम की नहीं, बल्कि अविचार और दृष्टिकोण के अभाव की है. यदि सूझ-बूझ का अभाव न हो तो 'क्यों' के सहारे समस्या की जड़ तक पहुँचा जा सकता है.

उपलब्ध विकल्पों में सर्वश्रेष्ठ का चयन :

समस्या समाधान हेतु सारे मौजूद विकल्पों पर गुण-दोष व लागत-लाभ विश्लेषण के आधार पर 'सर्वश्रेष्ठ' का चयन आवश्यक किन्तु कठिन कार्य है. महाप्रबंधक की मीटिंग के लिए एक दिन पूर्व पहुँचना या उसी दिन पहुँचना बेहतर होगा. निजी वाहन, टैक्सी या ट्रेन में से कौन साधन उत्तम होगा, इस पर पूर्व विचार आवश्यक है. सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन, निर्णयकर्ता के अनुभव, सूझबूझ और दक्षता पर निर्भर करता है.

यहाँ पर यह तय करना आवश्यक है कि निर्णय सर्वमत अर्थात् समूह के सदस्यों से परामर्श के उपरान्त लिया जाए या फिर नेतृत्व का एकल निर्णय हो. अनुभव यह बताता है कि 90% अवसरों पर समूह निर्णय, एकल निर्णय से बेहतर होता है. यदि समूह का इतिहास एक सफल टीम का रहा है, नेतृत्व के पास निर्णय हेतु

आवश्यक सभी जानकारी का अभाव है, बिल्कुल नयी तरह की समस्या का जहाँ विगत कोई अनुभव नहीं है और यदि सदस्यों से सक्रिय सहयोग पूर्व के निर्णयों में मिलता रहा है तो समूह निर्णय व्यक्तिगत निर्णय से बेहतर होगा.

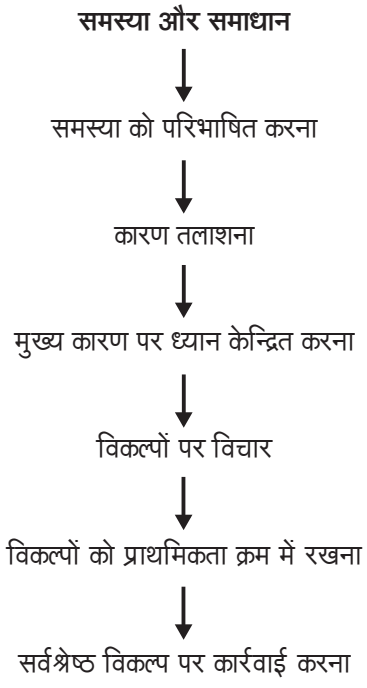

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं :

1. हर युग नयी चुनौतियां लेकर आता है. तमाम आर्थिक और तकनीकी उन्नति के बावजूद हमारे युग की समस्याएं नयी और विचित्र हैं. इतिहास बताता है कि मानव की रचनात्मकता और लोचकता अथाह है, वह हर समस्या का समाधान ढूंढ पाने में सक्षम है. पाठ्य पुस्तकों में मौजूद नुस्खे हमेशा कारगर नहीं होते, क्योंकि समस्याओं पर देश, काल और परिस्थितियों का रंग चढ़ा होता है.

2. बहुत सारी समस्याएं अज्ञानता की उपज हैं. उनके समाधान यदि सही नहीं हुए तो यह और बड़ी अज्ञानता होगी. तात्पर्य है कि समस्या की सही समझ ही समाधान का रास्ता सुझा सकती है. किसीने कहा है 'अन्वेषण गर्भावस्था के समान है, जो कि लम्बा और कष्टप्रद है और समाधान शिशु जन्म के समान है, जो सुन्दर और सुखकारी है'. सही अन्वेषण (Investigation) आधा समाधान है.
3. ठीक ही कहा गया है 'नृत्य कीजिए आपकी बहुत सी समस्याएं खत्म हो जाएंगी'. मन्तव्य यह है कि समस्याएं मानसिक दबाव देती हैं और यह दबाव हर व्यक्ति पर अलग-अलग होता है. अति तनावग्रस्तता न व्यक्ति के लिए उचित है न संगठन के लिए. थोड़ी सी तटस्थता बनाये रखना एक बेहतरीन रणनीति होगी, यदि भस्मावस्था (Burnout) से बचना है. याद रखिए, समस्याएं कभी खत्म नहीं होतीं (सिर्फ रूप बदलती हैं), आदमी खत्म हो जाता है.
4. हमारी मनोवृत्ति एक निर्णायक तत्व है, 'यह किया जाना है' से 'यह करना है' का रवैया सही समाधान वाले दरवाजे तक पहुँचा देगा. समस्याओं के बारे में सिर्फ बात करना और उन्हें बार-बार सजाना (Rearranging) ज्यादा दुखी करता है.
5. एक व्यक्ति के लिए दूसरों की समस्याओं का समाधान ढूंढना ज्यादा आसान होता है. अतः अपनी समस्याएं टीम सदस्यों के बीच रखना उचित होगा. हो सकता है, उनके पास बेहतर समाधान हो. जिन समस्याओं का समाधान न आपके पास है न दूसरों के पास, उनके साथ जीना सीखना बेहतरीन रणनीति होगी.

संतोष कुमार शुक्ल, स्टा.प्र.के., भुवनेश्वर में वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय) हैं.

रामगोपाल सागर

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत

एक समय की बात है, जंगल में बहुत सूखा पड़ा. लाखों जीवजंतु पानी के अभाव में इधर उधर भटकते हुए मर गए. कुछ ने हिम्मत हार कर दम तोड़ दिया तो कुछ अपने प्रयासों के लिए अंतिम श्वास तक आशान्वित बने रहे. इनमें एक कौआ भी था, जो जंगल की सीमाएं पार कर दूर तक पानी की तलाश में भटकता रहा. अंततः उसे एक झोंपड़े के पास एक घड़ा दिखा. उसे उसमें जीवन नजर आया. वह उसके पास पहुंचा. पर उसने देखा कि घड़े के तले में बहुत कम पानी है, जहां तक उसकी चोंच पहुंचना मुश्किल है. उसने हिम्मत नहीं हारी. उसने तरकीब सोची. क्यों न इस घड़े में कुछ पत्थर डाल दिए जाएं तो शायद पानी ऊपर आ जाए. उसने यह सूझा हुआ प्रयास किया. कंकड़ घड़े में डालता रहा और उसने देखा कि पानी ऐसे स्तर पर आ गया कि वह आसानी से पी सके. उसने पानी पिया और नया जीवन पाकर अपने गंतव्य की ओर उड़ गया.

यह कहानी हम सबने न जाने कितनी बार पढ़ी होगी. निचली कक्षाओं में इसकी सीख परीक्षाओं में लिखने तक के लिए रटी होगी. पर जैसे-जैसे हम बड़े और समझदार होते जाते हैं, ऐसी कथाओं की सीख, शिक्षा का मतलब बदलता जाता है. गंभीर होता जाता है. हम उसे अपने जीवन की जीवंत गतिविधियों से जोड़कर देखने लगते हैं और सबक लेते हैं. उदाहरण के साथ अपने लक्ष्य ढालने लगते हैं. यह कहानी हमें यही सीख देती है कि हिम्मत हार कर मुसीबतों को हावी होने देने से बेहतर है कि सभी संभावनाओं तक अपने प्रयास और अपना भरोसा न छोड़ें. प्रयास करने वालों को ही उम्मीद और सफलता की किरणें नजर आती हैं. ईश्वर उन्हीं का साथ देता है जो सच्चे मन से प्रयासों को अंजाम देते हैं.

इंसान होने का मकसद क्या है?

इस धरती पर इंसान ही ऐसा प्राणी है, जिसे बुद्धि का वरदान मिला है. अन्य

प्राणी केवल उतना ही सोच सकते हैं, जितना उनकी जीविका के लिए जरूरी है. अपनी सुरक्षा वे अपने हिसाब से ही कर पाते हैं, पर इंसान की तरह नहीं. इंसान के पास यदि बुद्धि न होती तो शायद एक छोटा सा कीड़ा भी उसकी जान ले सकता था. पर आज वह छोटे से जंतु से लेकर शेर, चीता, आंधी, तूफान, बाढ़, बारिश, गर्मी, सर्दी सबसे अपनी सुरक्षा करने में सक्षम है. हर आदमी को जीत प्यारी होती है. परंतु समय, परिस्थितियां सदैव एक सी सहज व समान नहीं होतीं. कई बार उसे हार का सामना भी करना पड़ता है. ऐसे समय कुछ लोग हालात से समझौता कर हार मान लेते हैं, परन्तु उनमें से कुछ लोग हार न मानते हुए अंतिम समय तक संघर्ष करते हैं. हर हार से, हर असफलता से वे नया सीखते हुए आगे बढ़ते जाते हैं और ऐसे ही व्यक्तित्व अपनी मंजिल पाने में सफल हो पाते हैं. आदमी का जन्म अपनी सामर्थ्य व हैसियत से कुछ करते रहने के लिए है. उसे यह भलीभांति समझ लेना चाहिए कि दुनिया में उन्हें ही याद किया जाता है, जिन्होंने दुनिया को कुछ देने का काम किया है. बेमतलब और बेमकसद जिंदगी किसी काम की नहीं. ऐसे लोगों का इस दुनिया में होना न होना बराबर है. बल्कि होना इस धरती पर बोझ है. बेहतर हो हम ऐसे लोगों के बारे में कोई बहस ही न छेड़ें.

मन क्या है?

मन इंसान के शरीर का ऐसा अदृश्य हिस्सा है, जिसे समझ पाना स्वयं इंसान के वश की बात नहीं है. वह चंचल है, चेतन है. कल्पनाओं में विचरने वाला एहसास है. मस्तिष्क विचारों का भण्डार गृह है. मन पल भर में दूर-दूर तक हो आता है. हर सपना देख सकता है और मस्तिष्क को इस बात के लिए मजबूर करता है कि वह इन विचार श्रृंखलाओं का निष्कर्ष निकाले. यदि मन के अनुकूल है तो उसे सहर्ष स्वीकार करते हुए क्रियान्वयन की प्रक्रिया में जुट जाता है. मन को गलत और सही से अधिक वास्ता नहीं है. मन का काम कतई स्थिर नहीं है. उसे काबू में रखने या जीतने के लिए इंसान को बहुत हिम्मत चाहिए. लोग दिल पर लगाम लगा लेते हैं. दिमाग को शांत कर लेते हैं. दिल भावनाओं को सहेजने का कार्य करता है तो दिमाग अच्छे बुरे, सही गलत और नैतिक-अनैतिक की सीमाएं निर्धारित करता है. मस्तिष्क में अच्छे विचार भी भरे होते हैं. पर मन अपनी चंचलता के चलते इन सबको परेशान किए रहता है. जब उसे अपनी चलानी हो तो ये सभी हथियार डालते नजर आते हैं. इन सबको केवल बुद्धि के सहारे ही नियंत्रण में रखा जा सकता है. जब-जब आदमी ने मन को परे रखकर बुद्धि से काम किया है, वह अच्छी दिशा में ही बढ़ा है. पर यह भी सत्य है कि बुद्धि तक पहुंचने का जरिया मन के पास से ही होकर

जाता है. अतः इंसान के लिए मन सबसे उर्वर, ऊर्जावान और सक्रिय स्रोत है, जिसके बलबूते वह हर असंभव कार्य को कर पाने के निर्णय से भी नहीं हिचकिचाता.

वैज्ञानिक परिभाषा के अनुसार हम अपने अनुभव, ज्ञान व सूझबूझ से जो भी निष्कर्ष निकालते हैं, हम जो भी करते हैं, सोचते हैं और जो भी हमारा व्यवहार है वह सब मन का ही प्रतिबिम्ब है. भारतीय संस्कृति में जो अपने मन को वश में कर लेता है और दिल, दिमाग, मस्तिष्क, बुद्धि से काम लेने में सक्षम हो जाता है, वह ज्ञानी हो जाता है. हर धर्म की अंतिम शिक्षा यही है कि मन को वश में करो, ताकि वह अनर्गल, अनैतिक व अवांछित विचारों को समेट कर आपके मस्तिष्क में न भर दे.

मन की हार क्या है?

किसी काम को करने पर यदि असफलता मिले और उसे ही हम अपना भाग्य समझ कर मान लें तो समझो आपका मन हार मान बैठा है. यदि प्रतियोगी परीक्षा में एक बार में नहीं निकल सके तो इसका अर्थ यह तो कतई नहीं कि आप सक्षम या समर्थ नहीं हैं. क्रिकेट के अच्छे-अच्छे खिलाड़ियों को शून्य पर भी आउट होते देखा है. यदि वे उसी से अपने खेल का आकलन करें तो आगे कभी अच्छा नहीं खेल पाएंगे. यह असफलता उन्हें आगे होशियार व सतर्क हो जाने के लिए प्रेरित करती है. अपने प्रयासों में नाकामयाबी के बाद आपके मन में यदि उदासी, हताशा, निराशा, दुःख, नकारात्मक सोच और भाग्यहीन होने के भाव आ जाएं तो समझो मन ने हार मान ली है. उसे ऐसे समय सही दिशा की जरूरत है. अन्यथा हारा हुआ मन आदमी को निष्क्रिय और दिशाहीन बना देता है.

मन की जीत क्या है?

बच्चा जब घुटने के बल चलने के बाद खड़े होने की कोशिश करता है तो वह कई बार धड़ाम से गिर जाता है. चलने का प्रयास करता है तो बार-बार गिर जाता है. पर उसे गौर से देखिए वह गिर कर चोट भी खा जाए, रोए, चिल्लाए, पर वह उठने और चलने की प्रक्रिया बार-बार करने से हार नहीं मानता. चोट के डर से मां-बाप भी तो ऐसा नहीं सोचते कि उसे ऐसा करने से रोकें. यह उसकी प्रारंभिक सीख है.

इंसान का जन्म सफल जीवन जीने के लिए है. इसका मापदण्ड हमें स्वयं करना होता है. दूसरों को आदर्श मानकर किए कार्य में उतनी संतुष्टि नहीं मिलती,

जितनी स्वयं के प्रयासों और अपनी लकीर पर किए जाने वाले कामों से मिलती है. अपनी मूल योजनाओं, रणनीतियों से किए गए कार्य आत्मविश्वास जगाते हैं. हम गलत हो सकते हैं, पर हमेशा गलत हों, ऐसा कतई नहीं है. यदि सही नीयत से ईमानदार प्रयास किए जाएं और सफलता न मिले तो भी निराशा की गुंजाइश कम होती है. क्योंकि ऐसे समय मन में हौसला होता है. असफलता से सबक लेते हुए आगे बढ़ने की चुनौती आती है. हर प्रगतिशील व्यक्ति चुनौती को सहर्ष स्वीकार करता है और यही उसकी प्रगति और सफलता का मापदण्ड बन जाता है. यही मन की असली जीत है.

कैसे बनाएं खुद को मजबूत :

हर आदमी मन से मजबूत होता है. परिस्थितियां, विचार, आदतें और संगति उसे कमजोर और डरपोक बना देती हैं. हर इंसान की नियति सफल होने में है. पर कभी-कभी वह असफल हो जाता है. ऐसे समय उसे हार मान कर लक्ष्य नहीं छोड़ना चाहिए, बल्कि निर्धारित लक्ष्य के लिए लगातार प्रयासरत रहना चाहिए. ऐसी ही सकारात्मक व जुझारू सोच उसे लक्ष्य पाने में मददगार हो सकती है. ऐसे और भी कई कारक हैं, जिनके बलबूते इंसान खुद को मजबूत बना सकता है :

1. **अच्छी आदतें :** बच्चे पैदा होने के बाद से ही मां-बाप व परिवार-जनों से जीवन की शुरुआत की हर छोटी बड़ी बात सीखते हैं. उनमें अधिकांश ऐसी सीखें आदत बन जाती हैं. सच पूछा जाए तो आदमी का व्यवहार आदतन होता है. जैसे-जैसे वह सीखता जाता है, कुछ बातों को बार-बार दोहराता है और वे ही आदत में परिवर्तित हो जाती हैं. बच्चा अच्छे और बुरे का फर्क नहीं कर सकता. उसे जैसा सिखाया जाएगा, वह अपनाता जाएगा. यह सच है कि बुरी आदतें सीखने में हम स्वयं सहज और आनंदित महसूस करते हैं और वे जल्दी अपने गले पड़ जाती हैं, पर इन्हें छोड़ना उतना ही कष्टकर और कठिन होता है. इसी तरह अच्छी आदतें अपनाने में थोड़ी कठिनाई और मशक्कत होती है. इससे यह तो स्पष्ट है कि जो गलत है, हमारे लिए उचित नहीं है, उसके प्रति हमारे मन का आकर्षण तीव्र होता है. जो हमारे जीवन में सफलता और अच्छे आचरण का कारण बनती हैं, ऐसी आदतों के लिए मन को बहुत मनाना पड़ता है. जब-जब मन बुरी आदतों के वशीभूत हो जाता है, चाहते हुए भी हम सफल नहीं हो पाते. यहां मन ही हारने का कारण है. मन का मन है कि शरीर को, दिमाग को कष्ट न हो और ऐसी अन्तःधारणा मन को आगे बढ़ने से रोक देती है. मन को लगता है कि यदि यह काम नहीं

हो पाएगा तो कौन सा पहाड़ टूट जाएगा और इसी को सच मानते हुए हम हार कर बैठ जाते हैं. आदमी स्वभाव से चोर और बेईमान कभी नहीं होता. यदि कोई व्यक्ति पहली बार चोरी या बेईमानी करने पर पकड़ा न जाए तो वह इसे सफलता का आसान व शार्टकट तरीका मान लेता है और ऐसा बार-बार करते हुए इन आदतों के अधीन होकर रह जाता है. यदि उसे इन्हें छोड़ने के लिए कहा जाए तो उसके लिए कष्टकर है, क्योंकि ये उसे सहज, सरल लगती हैं. हमारी कोशिश हो कि हम आदतों के वश में न रहें, बल्कि आदतों को अपने वश में रखें, तभी सफल व सच्चरित्र जीवन जीने में कामयाब हो सकते हैं.

2. **अच्छे संस्कार :** आदतें हमारे व्यक्तिगत जीवन से जुड़े कामों से बनती रहती हैं. इन्हें त्यागने, अपनाने की सामर्थ्य हर व्यक्ति में होती है. बशर्ते वह अपने मन को काबू में रखने का हौसला रखता हो. संस्कार हमें अपने परिवार, समाज के आचरण व व्यवहार से मिलते हैं. जो भी रीतिरिवाज़, चलन परिवार में विद्यमान है, परिवार के सदस्यों का व्यवहार उसी के अनुरूप ढलने लगता है. संस्कार परिवार का दर्पण हैं. अच्छे संस्कार दूसरों के प्रति आपके व्यवहार से झलकते हैं. दूसरों का भला सोचने और हर हितकारी व प्रगतिशील कार्य में सहयोग का रवैया रखने वाले परिवार ही संस्कारयुक्त माने जाते हैं. जिन परिवारों में लोग एक दूसरे का सम्मान करते हुए हरेक की बात को ध्यान से सुनते हैं, वहां विश्वास और अपनेपन की अनूठी मिसाल कायम हो जाती है. ऐसे परिवारों के लोग सहयोगी और विश्वसनीय होते हैं. अतः हम स्वयं परिवार का ऐसा माहौल बनाएं कि अच्छे संस्कारों की स्थापना अपने आप होती चले. संस्कारों को थोप कर अच्छा नहीं किया जा सकता. अपने बच्चों को बड़ों की बात का जवाब देने की कला जरूर सिखाएं, पर पलट कर जवाब देने की नहीं. अच्छे संस्कार मन को अच्छा करने की प्रेरणा देते हैं और मन हार के लिए नहीं, बल्कि जीत के तरीकों व उपायों के लिए हौसले से भर जाता है.

3. **सच्ची लगन :** कहते हैं, जहां चाह, वहां राह. यदि आपके मन में किसी भी काम के लिए इच्छा नहीं होगी तो काम की शुरुआत ही नहीं हो सकती. सबसे पहले काम के प्रति दृढ़ इच्छा का पनपना जरूरी है. इच्छाएं ज्ञान की भूख बढ़ाती हैं. लक्ष्य निर्धारित करने की प्रेरणा देती हैं और मंजिल पाने की रणनीतियां खोजने में गंभीर सोच विकसित करती हैं. स्पष्ट है कि किसी

भी काम की सफलता की पहली शर्त है, उसे करने की इच्छा होना. सफल और असफल व्यक्ति में इतना भर फर्क होता है कि सफल व्यक्ति सच्ची लगन से अंतिम प्रयास कभी नहीं छोड़ता, वहीं असफल व्यक्ति पहली बाधा आते ही मन से हार मान कर हताश बैठ जाता है या अपने भाग्य को कोस कर रह जाता है. सच्ची लगन मन को मजबूत करने का एक नायाब नुस्खा है. जो सच्ची लगन से अपने कर्तव्य में जुट जाते हैं, अड़चनें उनके आसपास फटकने से भी डरने लगती हैं.

अगर हो चाह ख्वाबों को हकीकत में बदलने की,
इसके लिए मेरे दोस्तो मौसम नहीं मन चाहिए.

4. **सच्चा श्रद्धा भाव :** मन की शांति और भविष्य में सुकून के लिए लोग किसी आराध्य देव के प्रति श्रद्धा भाव रखते हैं. उनकी शक्ति और महिमा में उनका विश्वास होता है. इनमें भगवान से भय खाने वाले लोगों की तादाद अधिक होती है. पर जरूरी नहीं कि वे धार्मिक हों. किसी धर्म का अनुयायी होना आसान है, पर धार्मिक होना बहुत कठिन है. तभी तो दुनिया में प्रार्थना-स्थल खूब बढ़े हैं, पर प्रार्थनाएं कम हो गई हैं. जो मन से सभी तरह से अच्छा इंसान है, वही सच्चे अर्थों में धार्मिक है. वह सच्चरित्र, दूसरों का भला चाहने वाला और भेदभाव से दूर इंसानियत में विश्वास करने वाला होता है. सच्चा श्रद्धा भाव ऐसे ही लोगों में होता है. सच कहा जाए तो नास्तिक अधिक धार्मिक होते हैं और इसी कारण वे कम डरपोक होते हैं. क्योंकि डर भगवान से नहीं, अपने-आप में छुपे उस शैतान से है, जो आपको अधार्मिक कार्य करने को प्रेरित करता है.

मेरा यही दृढ़ विश्वास है कि परमात्मा हमसे अलग नहीं. उसे देखा नहीं जा सकता. जिसे देखा जाए, उसके साथ कुछ न कुछ दूरी तो है ही. पर जिसका अंतर्मन से अहसास किया जाए, जिसके आपमें ही होने की अनुभूति हो, उसका आपकी धड़कन में स्पंदन हो, वही सच्चा आत्मीय है. उसे त्यागा नहीं जा सकता, उसे छोड़ा नहीं जा सकता, उसे विस्मृत नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसा तो कुछ अलग होने की क्रिया से होता है. जब वह आप में ही है तो जहां आप हैं, उसे वहीं पा लेंगे. दर्शन कर लेंगे..... जैसी मन में छवि होगी.

ईश्वर किसी देवालय में नहीं मिलता. वह हमेशा अपने प्यारों में बसता है. जिसे भी आप शुद्ध आत्मा से, सच्चे हृदय से अपना स्वीकारते हैं, उसी में

बसते हैं भगवान. ऐसे ही प्यारों का भला सोचते जाइए. ईश्वर आपसे निकटता बनाता जाएगा. जब हम केवल अपने लिए प्रार्थना करते हैं तो ईश्वर हमसे उतना ही दूर होता है. इसीलिए प्रार्थना निःस्वार्थ भाव से उनके लिए करें, जो आपको निष्कपट भाव से चाहते हैं. प्यार का कोई मापदण्ड नहीं होता. यदि कोई निर्विकारभाव से आपके मनोभावों और अंतर्मन में गुंजित है तो मानिए ईश्वर की प्रार्थना के अच्छे गुणों का संचार हो रहा है. हमारी प्रार्थना सही है. ईश्वर को सही प्रार्थना पसंद है. पाखण्ड, दिखावा और प्रदर्शन कतई नहीं.

5. **सकारात्मक सोच** : सकारात्मक सोच से भरपूर एक ईमानदार इंसान अपने-आप में एक फौज है. उसे प्रतिकूल और विपरीत परिस्थितियां भी नहीं डिगा पातीं. सकारात्मक सोच हौसले और प्रेरणा से भरपूर होती है. हर हताशा, उदासी और निराशा पर यह भारी है. इसीलिए हमेशा आशावान बनिये. अगर आप आशावान हैं और सपने देखते हैं तो उन्हें साकार करने के लिए इच्छा रखें. अपनी तुलना खुद से करें और अपने प्रयासों पर भरोसा रखें. अपने लक्ष्य तय कीजिए. उन्हें पाने के लिए योजना निर्धारित कीजिए. इन लक्ष्यों को पाने में, मंजिल तक पहुंचने में यदि असफलताएं भी मिलें तो उनसे सीख लेते हुए, आगे बढ़ते हुए प्रयासों में जुटे रहिए. नकारात्मक सोच व्यक्ति को आगे बढ़ने से रोकती है. दुनिया सकारात्मक व्यक्तित्व वाले इंसानों की मौजूदगी और सक्रियता के कारण खूबसूरत और जीवंत है. वे ही तो अच्छे व संस्कारयुक्त समाज के निर्माता हैं. कई मौकों पर उन्हें समाज को बुराई से बचाने के लिए कुर्बानियां भी देनी पड़ती हैं. पर यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि समाज में सकारात्मक भावना से भरपूर लोग होंगे तो वह समाज विकासशील, प्रगतिशील व संस्कारयुक्त होगा. सकारात्मक सोच व्यक्ति की बहुत बड़ी ताकत है. इसे अपना हथियार बनाएं और बेहतर व सफल जीवन के लिए आगे बढ़ते जाएं.

6. **हीन भावना से मुक्त आचरण :** हीन भावना हमारे कैरियर को कुतरने वाला बहुत ही खतरनाक अवगुण है. यह हममें ही पनपती है. अनायास ही. यह व्यक्ति को नकारात्मक सोच और हताशा की ओर ले जाने का काम करती है. हीन भावना ऐसी स्थिति है, जो हमारी स्वयं की सोच के कारण ही पनपती है. हीन भावना की कई वजहें हो सकती हैं. मसलन, व्यक्ति बिना किसी ठोस तर्क और कारण के अपने मन में यह सोच बैठता है कि वह मुझसे

अधिक होशियार है, उसका बोलने व समझाने का तरीका मुझसे बेहतर है, वह मेरी तुलना में अच्छा पहनावा पहनता है, वह मुझसे अधिक स्मार्ट है, वह ज्यादा शिक्षित है, ऊँची जाति का है, बड़े परिवार से है, उसके संस्कार ज्यादा अच्छे हैं, उसके दोस्त, रिश्तेदार अमीर व उच्च शिक्षित हैं, उसका ओहदा मुझसे ज्यादा है, कम्प्यूटर की जानकारी ज्यादा है, बात को समझने की बुद्धि तीक्ष्ण है, बैंक के सॉफ्टवेयर / पैकेज जल्दी समझ लेता है, बॉस के काफी नजदीक है, अच्छी अंग्रेजी बोलता है, उसकी बीवी ज्यादा सुंदर है, उसके बच्चे अधिक स्मार्ट व पढ़ने में होशियार हैं, अच्छी कॉलोनी में अच्छे फ्लैट में रहता है, उसके घर में सामान, फर्नीचर आदि हमसे अच्छे हैं, आदि तमाम कारण हैं, जिनसे व्यक्ति खुद को दूसरे की तुलना में बिना कारणों के कमजोर समझने का भ्रम पाले रहता है. इसे त्यागना जरूरी है. खुद के प्रयासों पर भरोसा रखें और खुद सक्षम और स्वाभिमानी बनें, ताकि ऐसे कारण आप पर हावी न होने पाएं. हीनभावना से ग्रसित होकर खुद को कमजोर न बनाएं.

7. **अच्छा करने की धुन / जुनून :** कुछ लोग अच्छा करने की चाहत में अनुकूल अवसरों का इंतजार करते रहते हैं. वहीं कुछ अवसरों को ईजाद कर अच्छा करने का अवसर ढूंढ लेते हैं. यह एक बुनियादी फर्क है, सफलता और असफलता का. कइयों को हमने केवल अवसरों की राह देखते हुए वक्त बरबाद करते हुए देखा है और कुछ ऐसे लोग भी हमारे बीच में हैं, जो छोटे-छोटे अवसरों से बड़ा काम कर गए हैं. एक अच्छे इंसान के लिए यह जरूरी है कि जब भी नेक नीयत से मन में कोई जुनून पैदा हो तो वह उसे तुरन्त कार्यान्वित कर दे. कभी मन करता है कि इस समय हाथ में ठीक-ठाक पैसे हैं, क्यों न थोड़े पिता जी को दे दिए जाएं. यदि ऐसा जुनून मन में आया है तो इसे तुरन्त पूरा कर दीजिए. अन्यथा जरा भी देर होते होते, मन कहीं से भी ऊटपटांग विचार आपके दिमाग में भर देगा कि जब अभी उन्हें जरूरत नहीं है तो बेवजह देने से क्या फायदा. यहीं आप उस चंचल मन के अधीन हो जाते हैं, जो अच्छा कर गुजरने की चाहत को खत्म कर पछतावे की पैरवी करता है. मन करता है कि यह काम कर दूं तो बॉस खुश हो जाएगा. वहीं मन यह भी कहता है कि इससे आपको क्या मिलेगा. कुछ बुरा होते देख हारा, डरा मन यही समझाता है कि होने दे, तेरे बाप का क्या जाता है. और हम उसी को सच मानते हुए उसके जैसे होने लगते हैं, स्वार्थी, भीरु, कृतघ्न. अच्छा करने की धुन और जुनून को पनपने दो, उसका मन्तव्य पूरा करो. यह

एक ऐसा मानसिक आवेग है, जो आपको अच्छा व्यक्ति, समझदार व्यक्तित्व व सच्चा नागरिक बनने का अवसर देता है. इस अवसर को कभी न जाने दें.

8. **दूरदर्शी बनें :** ऐसा देखा गया है कि कुछ लोग जीवन में सफल होते रहने के बावजूद मन माफिक सफलता हासिल नहीं कर पाते. इसके पीछे एक ही कारण है, वे अपने लक्ष्यों के प्रति दूरदर्शी नहीं बन पाए. उन्होंने अपने लक्ष्य केवल छोटी-छोटी मंजिलें हासिल करने के लिए तय किए और पा लिए. पर बड़ा करिश्मा नहीं हो पाया. श्रेष्ठता का स्तर नहीं छू सके. मंजिलें तो मील के पत्थर होती हैं. दूरदर्शी लक्ष्य महायात्रा का गंतव्य स्थल है. दूरदर्शिता से सोच का दायरा बढ़ता है. सकारात्मक व गतिशील प्रयासों के लिए रणनीतियां बनती हैं. बच्चों का भविष्य, देश की दिशा और नागरिकों का जीवन स्तर दूरदर्शी लक्ष्यों से ही बेहतर ढंग से तय किए जा सकते हैं. दूरदर्शी होना हमारी सफलता के उपायों के लिए विस्तार देना है.

9. **खुद से बात करना सीखें, खुद के लिए शांति खोजें :** परस्पर संवाद हमें मुखर बनने का अवसर देता है. अपनी बात को बेहतर ढंग से रखने की कला सिखाता है. धीरे-धीरे हम इस कला में माहिर भी हो जाते हैं. हम अंदर से तभी मजबूत बन सकते हैं, जब हमें खुद से बात करने की कला आती हो. हम खुद से खुल कर बात करने में सक्षम हों. खुद से बात करना इतना सहज व आसान नहीं है. इसके लिए हमें अंदर से खुद को बुलावा देकर मन को बातचीत के लिए मनाना पड़ता है. ऐसे में मन अपनी मनमानी ही करता नजर आता है. पर बातचीत से बड़ी से बड़ी समस्याओं को हल किया जा सकता है. मन को भी मनाया जा सकता है. खुद से बात करने का तात्पर्य है - अपने किए कार्यों का सिंहावलोकन करना और भविष्य में किए जाने वाले कार्यों के लिए सही व नैतिक मूल्यों के अनुरूप रणनीति तय करना. खुद को जानने और खुद से बातचीत करने की कला सीखने के बाद ही हम अपने लिए शांति का ठिकाना ढूंढ सकते हैं. मन को शांति देने के लिए ध्यान सबसे कारगर और प्रभावी उपाय है. पर यह सबके वश की बात नहीं. फिर भी शांति के लिए ध्यान की जगह मौन और चिंतन भी फलदायी हो सकते हैं. मौन-चिंतन हमें खुद का, अंदर-बाहर का पूरा अवलोकन और पर्यवेक्षण करने का मौका देगा. इस प्रक्रिया में हम जो भी देख पाएंगे, उसमें जो भी निष्कर्ष लायेंगे, उसे मन अच्छी दिशा में ले जाने के लिए प्रयत्नशील हो जाएगा. यही

हमारे मन की शांति का लक्षण है. मन शांत होना सीख लेगा तो उतनी ही मजबूती और उत्साह उसमें उर्वरित होता रहेगा.

10. **खुद को जानें, अंदर से, बाहर से :** आदमी हमेशा दोहरे व्यक्तित्व में जीता है. एक जो दिखता है और दूसरा जो वह है. एक वह बाहर है दूसरा अंदर है. दोनों ही रूप उसके भलीभांति जाने पहचाने हैं. किसी गुण-अवगुण से वह अनजान नहीं है. सब उसकी परिधि में है. दो तरह से जीना कहीं उसकी मजबूरी है तो कहीं जरूरत. कहीं जानीबूझी चाल है तो कहीं स्वतःस्फूर्त भावों से प्रेरित क्रियाएं. कहीं मन में बसे कलुषित भाव हैं तो कहीं निर्मल हृदय में स्पंदित स्नेह, प्यार. कहीं चतुराई है, बेईमानी है, होशियारी है तो कहीं सहजता, सरलता भी. इन सबको जानने पर ही हम खुद को पहचान सकते हैं. एक बार धीरज के साथ आईने के सामने खड़े हो जाइए. आपकी स्मार्टनेस, खूबसूरती, तंदुरुस्ती, शारीरिक सौष्ठव, रंग-रूप, सूरत-सीरत सबकी बाहरी झलक आपको तुरन्त मिल जाएगी. यह आपका वह रूप है, जो बाहर से सबको दिखता है. आप ऐसे में सहज होने व दिखने का आभास देते हैं. लेकिन आप दूसरे रूप में भी हैं. यह रूप दूसरों से पूरी तरह छुपा है. हां इसका आभास या कयास लोग जरूर लगा लेते हैं. अब आईने में खुद को जरा गौर से देखिए और सोचिए, आप अंदर से क्या हैं. हां यह अंदर का आप केवल आपको ही सच से सामना करा सकता है, औरों को नहीं. और यह भी सच है कि इस अंदर के आप से बात कर पाना और उसका आंख मिला कर सामना कर पाना आसान काम भी नहीं है.

अच्छे-अच्छे आईने के सामने मुंह छुपा कर भागते नजर आते हैं. सच कहें तो यह आईना अंदर के आप के लिए बहुत बड़ा दुश्मन है, जो आपका सारा काला-सफेद चिट्ठा खोल कर आपके सामने रख देता है. इससे नजरें मिला कर बात करने की हिम्मत बिरले लोगों में ही है. जब-जब मन आपके वश में नहीं रहा, उसने अपना दूसरा रूप दिखाया और जब आपके कहे में रहा, अच्छाइयों का भण्डार भर दिया. इन अच्छाइयों पर आप गौरवान्वित हो सकते हैं, गर्व महसूस कर सकते हैं. मन की ऐसी दशा का साथ दें, ताकि आप अंदर की आवाज पर विचलित न हों. अपने दोनों रूपों में ऐसा सांमजस्य बनाएं कि अंदर के आप का प्रतिरूप ही बाहर परिलक्षित हो. हर वक्त अंदर के आप से बातें करते रहें, ताकि आपकी जानकारी के बिना अन्दर कुछ ऐसा लबादा न इकट्ठा हो जाए कि उसे हटाने में आपका चरित्र ही दांव पर लग जाए.

जो खुद को अंदर-बाहर से जानने में सचेत व सतर्क हैं, वे मन को सही दिशा में रखते हैं. जागृत बनें और खुद से परिचित रहें, यह आपकी सफलता की ठोस गारंटी का अचूक मंत्र है. क्योंकि ऐसे पारदर्शी व्यक्तित्व के सामने जमाना हमेशा नत-मस्तक रहता है और अपने बीच में उसका स्थान शिखर पर रखता है.

अंततः जीत आपकी है : ऊपर जितनी भी बातें हमने की हैं, मन को केन्द्र में रख कर की हैं. मन के मन माफिक है तो वह खुश है, अन्यथा आपको परेशान करने में उसे कोई गुरेज नहीं. यदि मन आपके वश में है, आपके साथ है तो मन हम ही हैं, आप ही हैं. मन की हार-जीत के लिए जो जिम्मेदार हैं, उनकी समीक्षा होनी जरूरी है. यदि हम हौसले से भरे और मनोबल से भरपूर हैं तो मन को उदास होने से बचा सकते हैं. मन को छोटा नहीं होने देंगे. यदि इंसान शुरुआत से ही ऐसे प्रतिकूल माहौल और परिस्थितियों का शिकार रहा हो या जहां उसे हमेशा हार, हताशा और पश्चाताप ही मिले हों, वहां वह खुद को असफल मान ही लेता है. उसके साथ भाग्यहीन समझ कर मन हार कर आगे के प्रयासों को तिलांजलि दे देता है. किन्तु सफलता या असफलता भाग्यशाली या भाग्यहीन होने का परिचायक कतई नहीं है. सफलता भाग्य से ज्यादा, सच्ची लगन से किए गए ईमानदार प्रयासों का प्रतिफल होती है, जिसमें सकारात्मक मानसिक अवस्था की सबसे अहम भूमिका होती है. असफलता को भाग्यहीन समझना भी नासमझी है, नादानी है. जहां मन से आप हार मान लेते हैं, असफलता वहीं पैर पसार लेती है. जहां मन ने जीत के लिए बीड़ा उठाया है, वहां जीत होनी ही है. अतः मन में यह संकल्प सदैव रखिए कि किसी भी प्रयास के परिणाम जो भी हों, मन से हार नहीं माननी है. मन को यही समझाना है, जताना है कि जब तक उसका साथ है, जीत को आज न सही कल तो आना ही होगा. जिन्होंने मन को जीत लिया, समझो जीत उसी की है. मन भी आप ही हैं तो अंततः जीत आपकी ही है, ''एक पत्थर की भी तकदीर बदल सकती है, शर्त इतनी कि उसे सलीके से तराशा जाए''.

रामगोपाल सागर, क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, कोलकाता में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

सुनीता वंजानी

सकारात्मक सोच का जादू

हम सबने नकारात्मक और सकारात्मक सोच के बारे में न केवल ढेर सारे लेख ही पढ़े होंगे, बल्कि जीवन-प्रबन्धन से जुड़ी छोटी-बड़ी और मोटी-मोटी किताबें भी पढ़ी होंगी. जब हम इन्हें पढ़ते हैं तो तात्कालिक रूप से हमें सारी बातें बहुत सही और प्रभावशाली मालूम पड़ती हैं और यह सच भी है. लेकिन कुछ ही समय बाद धीरे-धीरे वे बातें दिमाग से खारिज होने लगती हैं और हमारा व्यवहार पहले की तरह ही हो जाता है. लेकिन इसका मतलब यह नहीं होता कि किताबों में सकारात्मक सोच पर जो बातें कही गई थीं, उनमें कहीं कोई गलती थी. गलती मूलतः खुद हममें होती है. हम अपनी ही कुछ आदतों के इस कदर बुरी तरह शिकार हो जाते हैं कि उन आदतों से मुक्त होकर कोई नई बात अपने अंदर डालकर उसे अपनी आदत बना लेना बहुत मुश्किल काम हो जाता है. लगातार अभ्यास से इसको आसानी से पाया जा सकता है. हमारा जीवन मुख्यतः हमारी सोच का ही जीवन होता है. हम जिस समय जैसा सोच लेते हैं, कम से कम कुछ समय के लिए तो हमारी जिंदगी उसी के अनुसार बन जाती है. यदि हम अच्छा सोचते हैं तो अच्छा लगने लगता है और यदि बुरा सोचते हैं तो बुरा लगने लगता है. इस तरह यदि हम यह नतीजा निकालना चाहें कि मूलतः अनुभव ही जीवन है तो शायद गलत नहीं होगा.

इस बारे में एक कहानी है- एक सेठजी प्रतिदिन सुबह मंदिर जाया करते थे. एक दिन उन्हें एक भिखारी मिला. सेठजी ने उसके कटोरे में एक रुपए का सिक्का डाल दिया. सेठजी जब दुकान पहुँचे तो देखकर दंग रह गए कि उनकी तिजोरी में सोने की एक सौ मुहरों की थैली रखी हुई थी. रात को उन्हें स्वप्न आया कि मुहरों की यह थैली उस भिखारी को दिए गए एक रुपए के बदले मिली.

उनकी नींद जैसे ही खुली, वे यह सोचकर दुखी हो गए कि उस दिन तो मेरी जेब में एक-एक रुपए के दस सिक्के थे, यदि मैं दसों सिक्के भिखारी को दे

देता तो आज मेरे पास सोने की मुहरों की दस थैलियां होतीं. अगली सुबह वे फिर मंदिर गए और वही भिखारी उन्हें मिला. वे अपने साथ सोने की सौ मुहरें लेकर गए, ताकि इसके बदले उन्हें कोई बड़ा खजाना मिल सके. उन्होंने वे सोने की मुहरें भिखारी को दे दीं. वापस लौटते ही उन्होंने तिजोरी खोली और वहाँ कुछ भी नहीं पाया. सेठजी कई दिनों तक प्रतीक्षा करते रहे. उनकी तिजोरी में कोई थैली नहीं आई. सेठजी ने उस भिखारी को भी ढुँढवाया, लेकिन वह नहीं मिल सका. उस दिन से सेठजी दुखी रहने लगे.

स्पष्ट है कि सेठजी ने यह जो समस्या पैदा की, वह अपने लालच और नकारात्मक सोच के कारण ही पैदा की. यदि उनमें संतोष होता और सोच की सकारात्मक दिशा होती तो उनका व्यक्तित्व उन सौ मुहरों से खिलखिला उठता. फिर यदि वे मुहरें चली भी गईं तो उसमें दुखी होने की क्या बात थी, क्योंकि उसे उन्होंने तो कमाया नहीं था. लेकिन सेठजी ऐसा तभी सोच पाते, जब वे इस घटना को सकारात्मक दृष्टि से देखते. इसके अभाव में सब कुछ होते हुए भी उनका जीवन दुखमय हो गया.

आपको यदि सचमुच अपने व्यक्तित्व को प्रफुल्लित बनाना है तो हमेशा अपनी सोच की दिशा को सकारात्मक रखें. किसी भी घटना, किसी भी विषय और किसी भी व्यक्ति के प्रति अच्छा सोचें, उसके विपरीत न सोचें. दूसरे के प्रति अच्छा सोचेंगे तो आप स्वयं के प्रति ही अच्छा करेंगे. कटुता से कटुता बढ़ती है. मित्रता से मित्रता का जन्म होता है. आग से आग लगती है और बर्फ ठंडक पहुँचाती है.

सकारात्मक सोच बर्फ की डली है, जो दूसरे से अधिक खुद को ठंडक पहुँचाती है. यदि आप इस मंत्र का प्रयोग कुछ महीने तक कर सकें, तब आप देखेंगे कि आपके अंदर कितना बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन हो गया है. जो काम सैंकड़ों ग्रंथों का अध्ययन नहीं कर सकता, सैंकड़ों सत्संग नहीं कर सकते, सैंकड़ों मंदिरों की पूजा और तीर्थों की यात्राएँ नहीं कर सकतीं, वह काम सकारात्मकता संबंधी यह मंत्र कर जाएगा. आपका व्यक्तित्व चहचहा उठेगा. आपके मित्रों और प्रशंसकों की लंबी कतार लग जाएगी.

आप जिससे भी एक बार मिलेंगे, वह बार-बार आपसे मिलने को उत्सुक रहेगा. आप जो कुछ भी कहेंगे, उसका अधिक प्रभाव होगा. लोग आपके प्रति स्नेह और सहानुभूति का भाव रखेंगे. इससे अनजाने में ही आपके चारों ओर एक आभा मंडल तैयार होता चला जाएगा. यही वह व्यक्तित्व होगा, जो परीक्षा की कसौटी पर शत-प्रतिशत खरा उतरेगा - 24 कैरेट स्वर्ण की तरह. सकारात्मकता ही वह

अदृश्य शक्ति है, जो असंभव से दिखने वाले कामों को भी संभव कर दिखाती है.

सिकंदर जब विश्वविजय के अभियान पर निकला तो उसके राज्य में कोई भी उसके पक्ष में नहीं था, क्योंकि सभी को यह असंभव जान पड़ता था. लेकिन सिकंदर ने हार नहीं मानी और उसके बाद के इतिहास को फिर से दोहराने की जरूरत नहीं. सकारात्मक सोच के करिश्मों से अनगिनत पृष्ठ रंगे जा सकते हैं. इस दुनिया में सफलता की बुलंदियों को छूने वाले लोगों के भीतर क्या खास बात थी. किन तंतुओं से मिलकर बना था, उनका अंतर्मन. वह यही है, सकारात्मक सोच, ऊपर उठी हुई निगाह और अंधेरे में भी रोशनी की किरण ढूंढ लेने वाला नजरिया.

एक पुरानी रोमन कथा है कि एक बार एक आदमी ने अपने तीन बेटों को तीन अलग-अलग रास्तों पर जाने को कहा और बताया कि ये तीनों रास्ते सोने, चांदी और लोहे की गुफा की ओर जाते हैं. उन्हें वहां से खजाना लेकर आना था. पहले भाई को लोहे की गुफा मिली और दूसरा भी लोहे की गुफा तक ही पहुँचा. दोनों निराश होकर और यह सोचकर खाली हाथ लौट आए कि बाकी दोनों को तो सोने-चांदी की गुफा मिलेगी और वे ढेर सारा धन लेकर लौटेंगे. सबसे छोटा भाई भी चलते हुए लोहे की गुफा तक ही पहुँचा और यह देखकर कुछ देर के लिए निराश भी हुआ कि उसके हिस्से में लोहा आया है. लेकिन फिर उसने वहां से ढेर सारा लोहा लिया और शहर जाकर उससे हथियार बनाए और बाजार में बेचा. हथियार बेचकर उसने ढेर सारा धन कमाया और बहुत दिनों बाद घर वापस लौटा. पिता ने उसे गले से लगा लिया और बोले, मैं जानता था कि तीनों रास्ते लोहे की गुफा की ओर ही जाते हैं. मैं बस देखना चाहता था कि तुम तीनों में से कौन सबसे ज्यादा सकारात्मक सोचवाला और कर्मठ है. यह रोमन लोककथा बहुत सरल शब्दों में सकारात्मक सोच का सार समझा देती है.

विश्वास - सकारात्मक सोच के लिए जरूरी है, भीतर से उसपर विश्वास. सकारात्मक सोच का सिर्फ दिखावा नहीं किया जा सकता.

वस्तुनिष्ठता - सकारात्मक सोच का संबंध है, समझ और निर्णय की वस्तुनिष्ठता से. भावनाओं के अतिरेक में नहीं बहना चाहिए.

जब न हो मन का - अपने मन की विपरीत परिस्थितियों में परेशान होने के बजाय उसे सकारात्मक नजरिए से देखना चाहिए.

आशावाद जीवन में सकारात्मकता का प्रसार करता है, लेकिन कोरा आशावाद आपको पलायनवादी भी बना सकता है. अतः यह जरूरी है कि आप आशावादी तो बनें, लेकिन यथार्थवाद तथा कर्मठता की जमीन पर खड़े होकर. 'जो होता है भले के लिए ही होता है' या 'धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा', इसी तरह के अनेक वाक्य आपने सुने होंगे, पर यह एक आशावादी दृष्टिकोण नहीं कहा जा सकता. आपने देखा या सुना होगा कि लम्बी-लम्बी टाँगों वाले शुतुरमुर्ग को जब कोई दुश्मन खदेड़ता है तो वह उससे बचने के लिए अपना सिर जमीन खोदकर मिट्टी में धँसा देता है. ऐसा करके वह आश्वस्त हो जाता है कि अब दुश्मन उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता और वह पूर्णतः सुरक्षित है. कोरे आशावादी व्यक्ति का नजरिया भी काफी कुछ ऐसा ही होता है. इसे आशावादी नहीं, बल्कि पलायनवादी कहेंगे.

जिंदगी को सफल ढंग से जीने के लिए हमें आशावादी होने के साथ व्यावहारिक एवं यथार्थवादी भी होना पड़ेगा. जो व्यवहारकुशल होगा, वह यह अच्छी तरह जानेगा कि इस दुनिया में दुख, कठिनाई, अवसाद आदि सच्चाई है. यहाँ कभी खुशी है, कभी गम. इस किस्म के आशावादी अपनी असफलताओं को भी स्वीकारते हैं. जब एक रास्ता बंद हो जाता है तो वे दूसरा रास्ता अतिशीघ्र खोज लेते हैं.

जीवन के प्रति हम सभी इसी तरह का रवैया अपना सकते हैं. कुछ सुझाव आपको दृढ़, सक्षम, आशावादी बनाने में कारगर साबित होंगे :

दूरदर्शी बनें : 'धीरे-धीरे समय सब ठीक कर देगा', जैसी धारणा लेकर चलना ठीक नहीं है. जो लोग सिर्फ आशावादी होते हैं, वे प्रायः जीवन में आने वाली समस्याओं से अनजान बने रहते हैं. इसीलिए उनमें दूरदर्शिता का अभाव होता है. अतः आप जब भी कोई निर्णय लें, परिस्थितियों को अवश्य जान लें. यह सोच लें कि आपको कार्य करने में कौन-सी बाधाएँ आएँगी तथा उनसे कैसे निपटा जा सकता है. किसी कार्य को करने के लिए अनेक विकल्प मन में पहले ही सोच लें. यदि एक उपाय विफल होता है तो दूसरा तरीका अपनाएँ.

प्रयत्न जारी रखें : सच्चे आशावादी कोशिशों से कभी जी नहीं चुराते. नित नई जानकारी लें, सीखें, काम में अरुचि पैदा मत होने दें, नहीं तो जीवन रसहीन और बेमज़ा लगने लगता है और निराशा बढ़ने लगती है. जो लोग जिंदगी की तमाम परेशानियों के बीच भी स्व-उत्थान के लिए समय निकाल लेते हैं, उनका जीवन खुशहाल होता है. कुछ न कुछ सीखने की प्रक्रिया जारी रखनी चाहिए, जैसे कविता,

कहानी, लेख लिखें, पेंटिंग करें, स्वीमिंग करें, बागवानी करें, कोई समाजसेवी संस्था ज्वॉइन करें.

प्रेरणादायक व्यक्तियों से नाता जोड़ें : अपना अधिकांश समय आशावादी व्यक्तियों के साथ बिताएँ. ऐसे मित्र हमें हमारी खूबियों से परिचित कराते हैं. एक सशक्त आशावादी व्यक्ति बनकर आप अपने निराशावादी मित्रों को भी इस गर्त से निकाल सकते हैं.

आध्यात्मिक पहलू पर भी बल दें : अपने जीवन में आध्यात्मिकता को भी बराबर का स्थान प्रदान करें. उच्च कोटि का साहित्य पढ़ें. कुछ समय चिंतन, मनन, ध्यान को दें. अध्यात्म वास्तव में आत्म-ज्ञान ही है, वह व्यक्ति को अधिक उत्साही और आशावादी बनाता है.

दिनचर्या में भी परिवर्तन करें : परिवर्तन से जिंदगी और संबंधों दोनों में ताज़गी बनी रहती है. नए लोगों से मिलें, किसी होटल में खाना खाएँ, आसपास घूम आएँ, नई पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ें, योजना बनाएँ, पर यथार्थ के धरातल पर. कुछ रातें देर तक जागें, कभी जल्दी भी बिस्तर छोड़ दें. दिमाग को तरोताजा रखने के लिए परिवर्तन जरूरी है. यदि आप कोरे आशावादी हैं तो इन सुझावों को अपनाकर देखिए. इनकी मदद से आप एक यथार्थवादी व कर्मठ आशावादी बन सकेंगे.

सफलता की मौलिक आवश्यकता - सकारात्मकता :

- विनम्रता और शीलता सफलता के प्रयासों के परिणामों से प्राप्त होती है.
- अच्छा काम करने वाला हर काम से कुछ न कुछ सीख लेता है.
- हम महान व्यक्तियों की तरह आदर्श न भी बन पाएं, लेकिन उनके आदर्शों के प्रकाश से अपने जीवन की दिशा तो निर्धारित कर ही सकते हैं और आगे बढ़ सकते हैं.
- नकारात्मकता वह हथौड़ा है, जो हर किसी की शांति का शीशा तोड़-फोड़ डालता है और सकारात्मकता हीरे की वह कणी है, जो शीशे से बेकार के भाग को काट कर अलग कर देती है.
- नकारात्मकता विष है, तनाव और चिन्ता को बढ़ाने वाली प्रदूषित वायु है, सकारात्मकता सुबह की हवा है, जो हर समय एक उत्साह का संचार करती है.

- कीचड़ में चलेंगे तो धोना पड़ेगा, असफल लोगों के साथ रहेंगे तो रोना पड़ेगा.
- अपने कार्य का लक्ष्य बनाइये और पूरी ताकत को उसमें लगाकर जुट जाइये, लक्ष्य को मत भूलें, वरना जो कुछ मिलेगा, उसी में संतोष मानकर रुक जाएंगे.
- बिना लक्ष्य के किसी कार्य का उत्साह जंगल की आग की तरह है.
- क्या आप जानते हैं कि जिसे ट्रेन में बैठने के पहले अपने स्टेशन का पता नहीं होता, वह या तो भिखारी होता है या फिर बैरागी.
- बिना किसी उद्देश्य के मेहनत और साहस भी बेकार होते हैं.
- मनुष्य की सोच उसके खेत में बोया गया एक बीज है, अगर हम अच्छी सोच अपने मन के खेत में बोयेंगे तो अच्छे फल मिलेंगे और बुरे बीज बोने से बुरे फल.
- व्यक्ति के विचारों में नकारात्मक सोच लीडर डालते हैं और हर आदमी उनके भाषण सुनकर अपने को उनके आगे समर्पित कर देता है, लेकिन वे लीडर जल्दी बन जाते हैं, जो सकारात्मक सोच रखते हैं.

मनुष्य का दृष्टिकोण सकारात्मक हो तो वह दुख में भी सुख को तलाश कर लेता है और हानि में भी लाभ देखता है. किसी घटनाक्रम को सही परिप्रेक्ष्य में देखना भी एक कला होती है. यदि हम अपने देखने का ढंग ठीक कर लें तो सारी समस्याओं का समाधान होता रहेगा व मानसिक तनाव से मुक्ति मिलती रहेगी. जैसे एक व्यक्ति अपने प्रियजन के निधन से मोहवश अत्यंत दुखी हो रहा है तो दूसरा व्यक्ति यह सोचकर संतोष व्यक्त कर रहा है कि उसे कष्टों से मुक्ति मिल गयी. यह केवल अपने दृष्टिकोण का ही अंतर है. महाभारत के युद्ध को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है. एक आम आदमी की दृष्टि से इसे भारी नरसंहार कहा जा सकता है, किन्तु दूसरे व्यक्ति की दृष्टि से धर्म की रक्षा हेतु इसे उचित ठहराया जा सकता है. हम चाहें तो अपने नकारात्मक विचारों से अपने जीवन को नरक बना लें और चाहें तो अपने सद्विचारों से परिपूर्ण मन की शक्ति से अपने जीवन को स्वर्ग बना लें. फर्क सिर्फ सोच का है, हम नकारात्मक नहीं, बल्कि सकारात्मक दृष्टि से देखें.

सुनीता वंजानी, क्षेत्रीय कार्यालय, नागपुर में संगणक परिचालक हैं.

मुकेश भारती

नेतृत्व कला या विज्ञान

नेतृत्व शब्द मात्र के उच्चारण से मन में एक अगाध, अपार, अजान एवं अनवरत्-सा बोध होता है. इतना बृहत्, गूढ़, गंभीर एवं सारगर्भित विषय, जो मानवीय व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण पहलू को उसकी कार्य-शैली के रूप में प्रतिबिंबित करता है, को कला या विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र में परिसीमित करना निश्चित रूप से चुनौती भरा कार्य है.

नेतृत्व के अध्ययन से पहले यदि हम कला एवं विज्ञान को परिभाषित करना चाहें तो पाते हैं कि कला कई मायनों में अमूर्त एवं गूढ़ तत्वों का अध्ययन है, जबकि विज्ञान तथ्यों पर आधारित निर्णयात्मक विषयों के अध्ययन पर बल देता है. अब यदि हम नेतृत्व को परिभाषित करना चाहें तो अति सामान्य एवं साधारण शब्दों में "नेतृत्व एक ऐसी क्षमता है, जिसके द्वारा एक समूह को लक्ष्य, विजन या किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रेरित एवं प्रभावित किया जाता है".

आइए, अब हम नेतृत्व पर अलग-अलग विषय विशेषज्ञों की समय-समय पर दी गई अभ्यर्थनाओं एवं शोध कार्यों का आकलन करें. नेतृत्व का अध्ययन एक बहु आयामी विषय के रूप में प्रबंध-शास्त्र, मनोविज्ञान, समाज-शास्त्र, संगठनात्मक व्यवहारवाद एवं लोक-प्रशासन में किया जाता है.

संगठनात्मक व्यवहारवाद एवं प्रबंध-शास्त्र में नेतृत्व का अध्ययन चार अलग-अलग कालानुक्रम में किया जाता है :

- 1940 तक लक्षणात्मक थ्योरी का दौर
- 1960 तक व्यवहारवाद का दौर
- 1960 के बाद प्रासंगिकता पर आधारित सिद्धान्तों का दौर
- समकालिक परिवेश में नेतृत्व के बदलते आयाम

1. 1940 तक लक्षणात्मक थ्योरी का दौर :

नेतृत्व का यह सिद्धांत व्यवहार एवं व्यक्तिगत प्रवृत्तियों के आधार पर नेतृत्व हेतु प्रभावी व्यक्तित्व का अप्रभावी व्यक्तित्व से विभेद करता है. इस दृष्टिकोण के प्रस्तावक व्यक्तिगत गुणों जैसे महत्वाकांक्षा, उपलब्धि, उन्मुखता, ऊर्जा, फल की क्षमता, आत्मविश्वास, भावनात्मक स्थायित्व एवं संज्ञानात्मक कर्मठता को प्रभावी नेतृत्व हेतु स्पष्ट लक्षणों के रूप में देखते हैं.इन लक्षणों के अलावा कुछ परोक्ष लक्षण जैसे करिश्मा, रचनात्मकता और लचीलापन भी प्रभावी नेतृत्व वाले व्यक्तित्व के अभिन्न गुण होते हैं.

दुनिया के कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तित्व जैसे मार्गरेट थैचर, नेल्सन मंडेला, महात्मा गांधी एवं इंदिरा गांधी जैसे नेताओं को उनके व्यक्तित्व के आधार पर ही नेतृत्व की बागडोर मिली. मान लिया गया कि अग्रणी व्यक्तित्व में नेतृत्व विषयक कुछ विशेष लक्षण होते हैं. लेकिन विभिन्न उदाहरणों में अलग-अलग नेतृत्वकारी लक्षण पाए गए, अर्थात् प्राथमिक एवं अतिमहत्वपूर्ण लक्षणों की पहचान नहीं हो पा रही थी. इस समूह के विशेषज्ञों को महत्वपूर्ण सफलता तब हाथ लगी, जब इन्होंने 80 विभिन्न प्रकार के लक्षणों को 5 प्रमुख मॉडल में वर्गीकृत किया, इसी क्रम में आगे म्येर ब्रिग्ग टाइप इन्डीकेटर एवं बिग 5 मॉडल प्रस्तुत किए गए. दोनों विधियां व्यक्तित्व की पहचान हेतु महत्वपूर्ण साबित हुई हैं एवं विगत 20 वर्षों से विभिन्न प्रशासनिक एवं व्यावसायिक संस्थानों में इनका बहुतायत से प्रयोग हो रहा है.

2. व्यवहार विषयक सिद्धांतों का दौर (1940-1960) :

इस दौर की दो प्रमुख उपलब्धियां दो विश्वविद्यालयों के नाम से जानी जाती हैं, जहाँ इन्हें परिभाषित किया गया.

(i) ओहायो स्टेट युनिवर्सिटी का सिद्धांत

(ii) मिशिगन स्टेट युनिवर्सिटी का सिद्धांत

(i) ओहायो विश्वविद्यालय : 1940 के उत्तरार्ध में ओहायो स्टेट में नेतृत्व के 1000 विभिन्न आयामों का अध्ययन किया गया एवं 2 अति महत्वपूर्ण नेतृत्व दिशाओं की पहचान की गई.

(ए) प्रस्तावना संबंधी संरचना (Initiating Structure) :

ऐसे लीडर जो प्रस्तावना संबंधी संरचना में निपुण होते हैं, वे -

- समूह के सदस्यों हेतु कुछ कार्य निर्धारित करते हैं.
- अपने अधीनस्थों से एक विशेष मानक कार्यनिष्पादन की अपेक्षा करते हैं.
- नियत अवधि में निर्धारित मानदण्डों को पूरा करने को प्रेरित करते हैं.

(बी) भावनाशीलता संबंधी संरचना (Consideration Structure) :

ऐसे लीडर जो भावनाशील होते हैं, वे -

- अपने अनुयायियों को उनकी व्यक्तिगत परेशानियों में सहयोग करते हैं.
- उनका रवैया सहयोगात्मक एवं उपगम्यक होता है.
- अपने अधीनस्थों की सलाह एवं सुझाव की कद्र करते हैं.

(ii) मिशिगन विश्वविद्यालय का अध्ययन :

मिशिगन समूह के विशेषज्ञों ने नेतृत्व को दो विभिन्न आयामों में वर्गीकृत किया है-

(ए) कर्मचारी उन्मुख :

जो कर्मचारियों के साथ व्यक्तिगत एवं पारस्परिक संबंधों को ज्यादा महत्ता देते हैं. ऐसे लीडर अधीनस्थों की जरूरतों के विषय में व्यक्तिगत रुचि दिखाते हैं.

(बी) उत्पादन मुखी :

ऐसे लीडर कार्य के तकनीकी एवं उत्पादक पहलू पर केंद्रित होते हैं. इनका लक्ष्य नियत समय पर निर्धारित मानदण्डों पर खरा कार्य पूरा करना होता है.

ब्लैक एवं मोउटन ने दोनों विश्वविद्यालयों के निष्कर्षों के आधार पर प्रबंधकीय ग्रिड, जिसे लीडरशिप ग्रिड भी कहा जाता है, का प्रतिपादन किया. इस ग्रिड में नेतृत्व के दोनों आयामों - कर्मचारी उन्मुखता एवं उत्पादन/कार्य उन्मुखता को ग्राफिकल तरीके से दर्शाया गया है. ग्रॉफ के दोनों आयामों से 9 X 9 इकाइयों को प्रतिवर्तित (Permutate) करके कुल 81 संयोजन बनाए जा सकते हैं.

केवल सीमांत (Extreme) मापों के आधार पर 5 प्रकार के नेतृत्व की शैलियां सामने आती हैं.

क्र.	नेतृत्व का प्रकार	कार्य उन्मुखता	कर्मचारी उन्मुखता	संयोग
i)	सर्वोत्तम नेतृत्व	9	9	(9, 9)
ii)	मध्यम मार्गीय	5	5	(5, 5)
iii)	स्वच्छंदतावादी	1	9	(1, 9)
iv)	सत्ताशील/ प्राधिकृत लीडर	9	1	(9, 1)
v)	दीन-हीन / बेकार	1	1	(1, 1)

3. 1960 के बाद स्थितिजन्य एवं आकस्मिकता के सिद्धांतों का दौर :

स्थितिजन्य सिद्धांत नेतृत्व के लक्षण सिद्धांत के प्रतिक्रिया स्वरूप प्रतिपादित किए गए. समाज वैज्ञानिक कार्लाइल एवं हर्बर्ट स्पेन्सर ने सुझाव दिया कि परिस्थितियां एवं इतिहास व्यक्ति विशेष से ऊपर हैं. इस सिद्धांत के प्रस्तावकों का मानना है कि कोई एक अकेला मनोभौगोलिक (Psychographic) प्रोफाइल नहीं है, जो विभिन्न परिस्थितियों के लिए आदर्श है.

इस सिद्धांत के विशेषज्ञों का मानना है कि परिस्थितियां ही एक आम आदमी को महान बनाती हैं, न कि एक आम आदमी परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाता है. उदाहरणार्थ यदि संगठन एवं समाज में अनुशासनहीनता एवं संकट का समय है तो ऐसे में सत्तावादी नेतृत्व प्रभावी होता है. यदि संगठन में आम कर्मचारियों का बौद्धिक स्तर सामान्य से श्रेष्ठ है एवं लोग अपने कर्तव्यों से भली-भांति परिचित हैं तो ऐसे में सत्तावादी नेतृत्व आम सहमति बनाने में सफल नहीं हो पाता. साथ ही कर्मचारियों को कुछ असाधारण उपलब्धियों के लिए अभिप्रेरित नहीं कर पाता.

मूलतः इस सिद्धांत के लोगों का मानना है कि नेतृत्व की शैली परिस्थितियों के अनुरूप बदलनी चाहिए.

हाल के वर्षों में चार प्रमुख आकस्मिकता मॉडल सामने आए हैं -

i) फिडलर का आकस्मिकता का सिद्धांत

ii) विक्टर व्रूम एवं फिलिप येटॉन का प्रत्याशा का सिद्धांत

iii) राबर्ट हॉस द्वारा प्रतिपादित पथ लक्ष्य सिद्धांत

समसामयिक परिवेश में नेतृत्व के बदलते आयाम :

आज नेतृत्व की जिम्मेदारी न केवल संगठन को एक लक्ष्य की ओर उन्मुख और प्रेरित करने की है, वरन संगठन की बढ़ती जटिलताओं एवं विसंगतियों से भी निपटने की है. हार्वर्ड विश्वविद्यालय के परिवर्तन प्रबंधन के विख्यात गुरू जॉन कॉट्टर का मानना है कि "नेतृत्व परिवर्तन की प्रक्रिया कुशलता से संचालित करने की कला है Leadership is an Art of Managing Change Process".

व्यावहारिक (Transactional) नेतृत्व :

बर्नस महोदय ने 1978 में व्यावहारिक नेतृत्व को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है - यह प्रबंधक को समूह का नेतृत्व करने का अवसर देता है एवं समूह एक लक्ष्य की प्राप्ति हेतु नेतृत्व का पालन करने के लिए सहमत होता है. इस प्रकार के नेतृत्व में प्रबंधक को यह निहित अधिकार होता है कि वह आवश्यकता पड़ने पर अपने अधीनस्थों का मूल्यांकन कर उन्हें सही मार्गदर्शन एवं प्रशिक्षण उपलब्ध कराए. साथ ही जो अपेक्षित लक्ष्य की प्राप्ति करें, उन्हें पुरस्कृत भी करे.

रूपांतरणकारी / परिवर्तनकारी (Transformational) नेतृत्व :

परिवर्तनकारी नेतृत्व एक ऐसा नेतृत्व है, जो अपने समूह को प्रभावकारी एवं कुशल बनाने के लिए प्रेरित करता है. इस प्रकार का नेतृत्व एक बड़े परिवेश की परिकल्पना करता है एवं प्रभावी संप्रेषण के द्वारा अपने समूह को लक्ष्य की प्राप्ति हेतु दिशानिर्देश देता है.

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से यदि हम सारे अद्यतन सिद्धांतों एवं शैलियों का अवलोकन करें तो पाते हैं कि नेतृत्व की शैलियां कालानुक्रम में सैद्धांतिक से व्यावहारिक होती गईं एवं किसी मॉडल विशेष में निहित न होकर व्यक्ति विशेष के गत्यात्मक कार्य कुशलता, उसके संवेगात्मक कुशलता सूचकांक (Emotional Quotient) एवं उसकी परिस्थितियों से सामंजस्य बैठाने की कला पर निर्भर करती हैं.

इसका मतलब यह कतई नहीं है कि लक्षणात्मकता का सिद्धांत (Trait Theory) सही है एवं नेतृत्व एक जन्मजात एवं वंशानुगत क्षमता है. आज जब

व्यवसाय एवं प्रबंधन में विसंगतियां एवं जटिलताएं बढ़ती जा रही हैं, ऐसे में नेतृत्व की कोई एक शैली सभी परिस्थितियों के लिए उपयुक्त एवं सटीक नहीं हो सकती है. वर्तमान अर्थव्यवस्था प्राथमिक एवं द्वितीय गतिविधियों से परे तृतीयक क्षेत्रों की ओर अग्रसर हो रही है, अर्थात् प्राथमिक गतिविधियां जैसे कृषि, खनन, वनोत्पाद एवं द्वितीयक गतिविधियाँ जैसे विनिर्माण एवं अन्य उत्पादोन्मुखी व्यवसाय का अर्थव्यवस्था में योगदान घटता जा रहा है एवं सेवा पर आधारित तृतीयक क्षेत्र (Tertiary Sectors) का अर्थव्यवस्था में योगदान बढ़ता जा रहा है.सेवा क्षेत्र में ज्यादातर ज्ञान पर आधारित क्रिया कलाप जैसे बैंकिंग, बीमा, वित्त, साफ्टवेयर, सूचना-प्रौद्योगिकी, अनुसंधान एवं विकास एवं शिक्षा इत्यादि सम्मिलित हैं. इन तमाम ज्ञान पर आधारित सेवा क्षेत्रों में पारंपरिक प्राधिकृत/सत्ताशील नेतृत्व की प्रासंगिकता घटती जा रही है.

आज के नेतृत्व से ऐसी अपेक्षा है कि वे अपने लोगों को साथ लेकर एक वृहत् लक्ष्य की ओर अग्रसर हों. अगर हम प्रबंधकीय ग्रिड से तुलना करें तो आज हमें (9, 9) नेतृत्व जो कर्मचारी उन्मुखता एवं कार्यान्मुखता दोनों में उच्चतम हो, की आवश्यकता है.

अब जब समसामयिक परिवेश में गैर-पारंपरिक नेतृत्व की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है तो ऐसे में **करिश्माई नेतृत्व** की चर्चा से हम कैसे बच सकते हैं.

करिश्माई नेतृत्व की चर्चा एक शताब्दी पूर्व मैक्स वेवर, जो एक युगांतकारी समाजशास्त्री थे, ने की थी.करिश्मा ग्रीक शब्द है और जिसका शाब्दिक अर्थ उपहार है. मैक्स वेवर महोदय ने करिश्मा को एक दैवीय वरदान माना है, जो किसी व्यक्तित्व को साधारण लोगों से अलग बनाता है. यह करिश्माई व्यक्तित्व एक आदर्श प्रकार का प्राधिकार पैदा करता है. आधुनिक काल में रॉबर्ट हाउस ने करिश्माई नेतृत्व को संगठनात्मक व्यवहार में प्रासंगिक बनाया है. वर्तमान में विभिन्न अध्ययनों ने करिश्माई नेतृत्व के चार प्रमुख तथ्यों को महत्ता दी है :

i) विजन एवं संयोजना (Vision and Articulation) :

विस्तृत विजन को सरल तरीके से व्यक्त करना एवं वर्तमान यथा स्थिति को चुनौती देकर बेहतर भविष्य के लिए प्रस्तावना करना.

ii) वैयक्तिक जोखिम :

स्वयं पर जोखिम लेना और श्रेष्ठतम उद्देश्यों के साथ स्वयं को न्योछावर कर विजन को प्राप्त करने के लिए अग्रसर होना.

iii) अनुगामियों की आवश्यकताओं के लिए संवेदनशीलता :

अनुगामियों की क्षमता को पहचान कर उनकी आवश्यकताओं के लिए उत्तरदायी बनना.

iv) अपरंपरागत व्यवहार :

करिश्माई नेतृत्व रूढ़िवादिता के खिलाफ एक आदर्श परिकल्पना प्रस्तुत करते हैं.

विद्वानों का एक समूह करिश्माई नेतृत्व शैली को जन्मजात या वंशानुगत लक्षण मानने से मतभेद करता है. खासकर पाश्चात्य दर्शन में जहाँ भाग्यविधाता या पूर्वजन्म के कर्मों के गुण-दोष इत्यादि को ज्यादा प्रासंगिकता नहीं दी जाती है, ने तो यहाँ तक कहा कि कोई सामान्य व्यक्ति भी अभ्यास एवं सूझ-बूझ के द्वारा अपने व्यक्तित्व में करिश्माई नेतृत्व के लक्षण को अंतर्निविष्ट कर सकता है. कुछ विद्वानों का मत है कि करिश्माई नेतृत्व की सफलता परिस्थितिजन्य भी होती है. परिस्थितियाँ जहां आदर्श का भाव ज्यादा हो, अनिश्चितता का माहौल हो, वहाँ करिश्माई नेतृत्व ज्यादा सफल होते हैं.करिश्माई नेतृत्व को जब अतिशयोक्ति के स्तर की प्रतिष्ठा मिलती है तो एक नकारात्मक पहलू भी उजागर होता है.

कई करिश्माई नेतृत्व के निर्णयों के अवलोकन एवं अंकेक्षण के बाद यह एहसास होता है कि उन्होंने न केवल अपने प्राधिकार का दुरूपयोग किया है, वरन् कई बार निदेशकों से मिले अगाध संसाधन एवं निर्बाध शक्ति का व्यक्तिगत स्वार्थों की प्रतिपूर्ति हेतु इस्तेमाल किया है. कई अवसरों पर इन्हें मिलने वाली प्रतिपूर्ति एवं अन्य भत्ते उनके कार्यानुदान से कहीं ज्यादा होते हैं. अब समकालीन वित्तीय संकट एवं वैश्विक मंदी का अवलोकन करें तो हम पाते हैं कि कई अमेरिकी बैंकों ने जहां अपने को दिवालिया घोषित किया, वहीं उनके मुख्य कार्यकारी अधिकारी अपने लिए खासी बोनस की रकम का प्रावधान कर रहे थे. अंततः राष्ट्रपति बैरक ओबामा ने ऐसे कर्मचारियों के व्यक्तिगत खर्चों की उच्चतम सीमा निर्धारित की और इन्हीं शर्तों के साथ बेल आउट के लिए सरकारी सुविधा मुहैया कराई. जी.ई. के विश्वविख्यात कार्यकारी अधिकारी जैकवेल्च, जिन्हें शताब्दी का एक महानतम नेतृत्वकारी हस्ती का दर्जा मिला, के कार्य-कलापों की विवेचना करें तो हम पाते हैं कि कई बार उनके निर्णय एक समन्वयकारी कार्य माहौल के विरूद्ध थे. प्रत्येक वित्तीय वर्ष के अंत में 10% कर्मचारियों की छंटनी का मामला ही लें तो ऐसी परिपाटी कर्मचारियों को आपस में गला-काट प्रतिस्पर्धा के लिए प्रेरित करती है.

जैकवेल्च ने प्रभाव में आते ही अपने दूसरे स्तर के नेतृत्व की पूरी तरह से छंटनी कर अपना रास्ता लंबे समय के लिए निर्बाध कर लिया. इस प्रकार का नेतृत्व एक साजिशपूर्ण कूटनीति का ही अंग है. इसमें कोई दो राय नहीं कि जैकवेल्च के दिशानिर्देशन में जी.ई. ने असाधारण तरक्की की एवं शेयरधारकों के हिस्से में निर्बाध वृद्धि हुई. परन्तु आज के संदर्भ में कंपनी की जिम्मेदारी केवल अपने शेयरधारकों के लिए नहीं है. कंपनी के निरंतर एवं टिकाऊ विकास के लिए एक अच्छे एवं कुशल नेतृत्व की जिम्मेदारी शेयरधारकों, कर्मचारियों, ग्राहकों एवं समाज के प्रतिस्पर्धी हितों के बीच सामंजस्य स्थापित करने की भी है.

आज का नेतृत्व एक चौराहे पर खड़ा है, जिसे केवल व्यावहारिक या नियमबद्ध फॉर्मूलों में सीमित नहीं किया जा सकता. नेतृत्व आज कई अंतर्द्वन्द्वों का सामना कर रहा है. ऐसे में उत्कृष्ट प्रबंधकीय संस्थानों में साहित्य के कुछ उत्कृष्ट ग्रंथों एवं महाकाव्यों के द्वारा नेतृत्व का प्रशिक्षण दिया जा रहा है.

कुछ चुनिंदा उदाहरण इस प्रकार हैं :

(1). प्रो. जिम फिशर रॉटमेन प्रबंधन विद्यालय, टोरेंटो विश्वविद्यालय :

प्रो. फिशर नेतृत्व के प्रशिक्षण हेतु शेक्सपियर द्वारा लिखे नाटक हैनरी पंचम से अगिन कोर्ट की लड़ाई वाले दृश्य का मंचन करते हैं. अगिनकोर्ट की लड़ाई एक ऐसी विषम परिस्थिति में लड़ी गई थी, जहाँ ब्रिटिश सेना की हार फ्रांसिसियों के हाथों तय थी. इस विषम परिस्थिति में जब थके-मांदे ब्रिटिश सैनिक वापस लौट आना चाहते थे, हेनरी पंचम की प्रभावशाली एवं चुनौतीपूर्ण ललकार ने ब्रिटिश सेना को विजय दिलाई. हेनरी पंचम ने अपनी सेना को स्पष्ट शब्दों में कह दिया, "जो थोड़ा भी आशंकित या भयभीत हैं, वे वापस जा सकते हैं, मैं कायरों के साथ मरना पसंद नहीं करूंगा".

प्रो. फिशर का मानना है कि व्यावसायिक नेतृत्व में भी सारे अनुगामी स्वैच्छिक कार्यकर्ता होते हैं. प्राधिकार एवं वेतन के द्वारा हम न्यूनतम आवश्यक कार्य तो करवा सकते हैं. लेकिन असाधारण योगदान के लिए अनुगामियों का अपने कार्य, उद्देश्य, उसकी महत्ता एवं नेतृत्व की समग्रता एवं सत्यनिष्ठा पर अटूट विश्वास होना चाहिए. प्रो. फिशर गीता का भी उद्धरण देते हैं. उनका मानना है कि गीता में भी परिणामों से ज्यादा कार्य के उद्देश्य की महत्ता पर बल दिया गया है. अब नेताजी सुभाष चंद्र की आजाद हिन्द फौज को ही लें, यहाँ कार्य का उद्देश्य इतना पवित्र था कि लोगों ने ब्रिटिश सेना में मिलने वाली ज्यादा पगार की नौकरी को छोड़कर आजाद हिन्द फौज में शामिल होना बेहतर समझा.

(2). भारतीय प्रबंध संस्थान - अहमदाबाद में प्रो. मणिकुट्टी भी बर्नार्ड शॉ के संत जोआन बरटोल्ट ब्रेची के लाइफ ऑफ गैलीलियो, विशाखदत्त का नाटक मुद्रा राक्षस, गिरीश कर्नाड का लिखा तुगलक इत्यादि ग्रंथों का प्रयोग नेतृत्व प्रशिक्षण के लिए करते हैं. प्रो. मणिकुट्टी महाभारत के विभिन्न चरित्रों, विशेषकर भगवान श्री कृष्ण के नेतृत्व क्षमता की भी प्रेरणा देते हैं. उनका मानना है कि भगवान श्री कृष्ण हमेशा नियत लकीर पर नहीं चलकर परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेते थे. भगवान श्रीकृष्ण ने कम और ज्यादा बुराइयों के अंतर को पहचाना एवं आवश्यकतानुसार कम बुराइयों वाले पहलू का साथ देकर उसका इस्तेमाल ज्यादा बुराइयों वाले तत्वों के निवारण हेतु किया. खासकर भगवान श्रीकृष्ण के गीता का मूलमंत्र **"निष्काम कर्म"** आज के नेतृत्व के लिए प्रेरणा का स्रोत है.

(3) भारतीय प्रबंधन संस्थान, बेंगलूर के प्रो. रामनाथ नारायणस्वामी ने महाभारत को नेतृत्व का पाठ पढ़ाने के लिए अतुल्य ग्रंथ बताया है. प्रो. नारायणस्वामी ने नेतृत्व को विसंगतियों का प्रबंधन बताया है. उनका मानना है कि महाभारत के चरित्रों की तरह ही हर नेतृत्व एक अंतर्द्वन्द्व में जीता है और यह आंतरिक द्वन्द्व-बाह्य द्वन्द्व से ज्यादा चुनौती पूर्ण होता है.

अब तक के तमाम अध्ययनों एवं शोध-कार्यों से यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि नेतृत्व कला या विज्ञान की सीमा-रेखा से परे है. नेतृत्व से संबंधित समकालीन शोधकार्यों पर विहंगम दृष्टि डालें तो हम इस निष्कर्ष की ओर पहुंचते हैं कि नेतृत्व कलात्मक है. यह गतिशील होता है. नेतृत्व अभिप्रेरणा का स्रोत है. यह रूपांतरकारी एवं परिवर्तनकारी होता है. यह युगांतर एवं अनवरत प्रभाव उत्पन्न करता है. नेतृत्व गणित, ज्यामिती या भौतिकी के प्रमेयों एवं सिद्धांतों की तरह, निश्चित एवं नियत नहीं होता. नेतृत्व प्रासंगिक है. यह स्थितिजन्य एवं आकस्मिक है. यह समकालीन परिस्थितियों से सामंजस्य रखते हुए बदलाव की दिशा निर्धारित करता है. यह परंपरा एवं यथास्थिति को चुनौती देकर संस्था में असाधारण क्षमता पैदा करता है. अंततः हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि - **"महाजनो येन् गताः सा पंथाः"** अर्थात् Leaders don't follow a set Path, wherever they walk Path is set".

मुकेश भारती, वैयक्तिक बैंकिंग एवं परिचालन विभाग,केन्द्रीय कार्यालय में वरिष्ठ प्रबन्धक हैं.

कल्याण कुमार

संगठन में मूल्य आधारित प्रणाली

किसी भी संगठन के लिये ग्राहक और कार्मिक सबसे बड़ी आस्ति होते हैं. यह उक्ति हम लोग काफी समय से सुनते आ रहे हैं. साथ ही किसी भी संगठन की विश्वसनीयता और सफलता मूल्य आधारित कार्य-प्रणाली पर ही निर्भर है. मूल्य आधारित मानवीय गुणों जैसे कि महत्वाकांक्षा, सक्षमता, वैयक्तिकता, समानता, ईमानदारी, सेवा, जिम्मेदारी, बिना चूक कार्यनिष्पादन, सत्य, निष्ठा, आदर, समर्पण, विविधता, उन्नति, संवेदना, आनंद, सहानुभूति, समानुभूति, ईमानदारी, विश्वसनीयता, बेदाग छवि, नया करने की क्षमता, समूह में काम करने की ललक, उत्तमता, प्रतियोगितात्मक सक्षमता, गुणवत्ता, कार्य संपन्न करने की सजगता, मानमर्यादा, सहयोग, लगाव, जुड़ाव, दृढ़ता, साहस, बुद्धि, विवेक, स्वतंत्रता, सुरक्षा, चुनौती, प्रभाव, सीखना, काम करने की लगन, मित्रता, अनुशासन, सहृदयता, पारदर्शिता, आशावादिता, निर्भरता, परिस्थिति के अनुसार अपने को बदलने की क्षमता इत्यादि के बिना क्या किसी भी संस्था की कल्पना करना संभव है? क्या कोई भी संस्था इन गुणों के अभाव में सफल हो सकती है?

मूल्य आधारित गुणों से किसी भी संस्था की कार्यप्रणाली साफ परिलक्षित होती है. यह कार्मिकों की कार्यशैली से भी परिलक्षित होती है. यही कार्यशैली किसी भी संस्था की छवि का निर्माण करती है.

इन गुणात्मक मूल्यों पर आधारित रोज के लिये गये निर्णयों से न केवल कार्मिकों वरन् ग्राहकों में भी एक आत्मीय जुड़ाव पैदा होता है. आज के प्रतिस्पर्धात्मक माहौल में किसी भी संस्था की सफलता के लिये यह बहुत ही आवश्यक है.

मूल्य आधारित कार्यप्रणाली का उदाहरण :

जो संस्था गुणात्मक मूल्यों यथा सत्यनिष्ठा एवं पारदर्शिता को महत्व देती है, वह ग्राहकों को सही सूचना भी देती है. ग्राहकों की समस्याओं का त्वरित निराकरण करती है. यदि कोई चूक हो जाती है तो पारदर्शी व्यवहार करते हुये ग्राहकों को सही जानकारी देती है. साथ ही चूक सुधार हेतु त्वरित कदम भी उठाती है.

प्रत्येक संस्था का अपना दर्शन (Vision) होता है और जीवन-लक्ष्य (Mission) भी होता है. ये मूल्य आधारित गुणों पर ही टिके होते हैं.

विज़न वक्तव्य (Vision Statement)

विज़न वक्तव्य मूल्यों पर आधारित होता है. संस्था अपने ग्राहकों, वितरकों, कार्मिकों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करेगी, यह इसमें वर्णित रहता है.

जीवन-लक्ष्य विवरण (Mission Statement)

इसमें संस्था का लक्ष्य निर्धारित रहता है, किसी भी संस्था की दिशा इसी पर निर्भर करती है.

संगठन द्वारा नैतिक मूल्यों की पहचान और उन्हें इस्तेमाल में लाना क्यों ज़रूरी है?

प्रभावी और सफल संगठन, नैतिक मूल्यों पर आधारित कार्यप्रणाली के चयन द्वारा कार्मिकों को स्पष्ट निर्देश देता है, जिससे हर कोई संगठन के लक्ष्यों से अवगत हो सके. प्रत्येक संस्था की सफलता इन नैतिक मूल्यों पर आधारित कार्यप्रणाली पर ही संभव है. संगठन द्वारा सिर्फ नैतिक मूल्यों की बातें करने से ही काम नहीं चलेगा. वरन् यह संस्था की कार्यप्रणाली एवं व्यवहार से परिलक्षित होना होगा.

यदि कोई संस्था इन नैतिक गुणों पर आधारित होगी तो निम्नलिखित लक्षण निश्चित रूप से परिलक्षित होंगे :

1. कर्मियों के व्यवहार से, निर्णय लेने के तरीकों से, योगदान से, आपसी व्यावहारिक रिश्तों से नैतिक गुण परिलक्षित होंगे.

2. संस्थागत नैतिक मूल्य हरेक व्यक्ति को उनके रोजमर्रा के जीवन में प्राथमिकता तय करने का मौका देते हैं.
3. संस्था का वैल्यू स्टेटमेंट संस्था के प्रत्येक निर्णय को दिशा प्रदान करता है.
4. जो व्यक्ति संस्था के नैतिक मूल्यों पर दृढ़ प्रतिज्ञ रूप से कार्य करते हैं, उनको संस्था द्वारा अलग पहचाना और पुरस्कृत किया जाना.
5. संस्था का लक्ष्य नैतिक मूल्यों पर आधारित होना.
6. फीडबैक द्वारा नैतिक मूल्यों का निरंतर अनुश्रवण.
7. संस्था द्वारा जो व्यक्ति नियुक्त किये जायें, वे भी नैतिक मूल्यों के प्रति निष्ठावान हों.

किसी भी संगठन के लिये नैतिक मूल्य आधारित कार्यप्रणाली क्यों जरूरी है, यह निम्न तुलनात्मक तालिका से स्पष्ट होगा :

परंपरागत 20वीं सदी की संस्था	गुण आधारित और जीवंत संस्था
• आर्थिक परिणाम ही संस्था की सफलता का आधार, तानाशाही कार्यप्रणाली, अस्वस्थ कार्यप्रणाली का विकास होता है.	• केवल गुणों का बखान ही नहीं करते, बल्कि इन्हें लागू भी करते हैं. जब इस तरह से काम होता है तो उत्साह और उत्पादकता बढ़ती है.
• **सामुदायिक भाव का अभाव :** अविश्वास, एक दूसरे के प्रति घृणा, आशा और सम्मान का अभाव, संस्था से लगाव में कमी.	• **सामुदायिक भावना प्रबल :** आपसी विश्वास की जड़ें काफी मज़बूत, सक्रिय सहभागिता, एक दूसरे के लिये आदर का भाव, संस्था से अत्यधिक लगाव.
• **संवादहीनता :** केवल आदेश ही संदेश का माध्यम.	• **अच्छा संप्रेषण वातावरण :** संप्रेषण का अच्छा वातावरण फीडबैक से निर्णय लेने में आसानी.
• **गुणों की तकरार :** गुणों पर केवल भाषण, व्यवहार में नहीं.	• **गुणों का क्रियान्वयन :** स्वस्थ गुणों का कार्यप्रणाली में सतत इस्तेमाल.
• **संस्था की कठोर रचना :** कई स्तरों में कार्मिक की उत्पादकता, कम उत्पादकता और कार्मिकों के विभिन्न स्तरों के मध्य अविश्वास का माहौल.	• **स्व संस्था :** हर कोई अपने-आप में संस्था के हित से जुड़ा हुआ, अधिक उत्पादकता, आपसी सद्भावना का माहौल.
परिणाम उपर्युक्त चारों पारंपरिक संस्थाओं की अल्प समूह बुद्धि परिलक्षित करते हैं. इससे संस्था में कोई परिवर्तन आसान नहीं होता.	**परिणाम** उपर्युक्त चारों तथ्य गुण आधारित संस्था की अधिक सह बुद्धि को परिलक्षित करते हैं. इससे संस्था जीवंत, अधिक उत्पादकता से पूर्ण और समय के अनुसार परिवर्तन के लिये तैयार रहती है.

तालिका के अवलोकन से नैतिक मूल्यों पर आधारित संस्था का महत्व साफ परिलक्षित होता है. भतृहरि ने अपने नीति शतकम् में कहा है, **निन्दन्तु नीति निपुणाः यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्। अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा, न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।**

नीति निपुण विद्वान निंदा करें अथवा स्तुति, लक्ष्मी प्राप्त हो अथवा पास की भी चली जाये, आज ही मृत्यु हो अथवा एक युग के बाद, परंतु नैतिक मूल्यों पर निष्ठावाले व्यक्ति कभी नीति का मार्ग नहीं छोड़ते.

हेनरी वणके ने सफल जीवन के चार नियम बताये हैं :

- **स्पष्ट सोच**
- **साथ के लोगों से प्यार भरा व्यवहार**
- **नैतिक मूल्यों में एकनिष्ठ होना**
- **ईश्वर में दृढ़ विश्वास.**

सभी इस बात से सहमत होंगे कि मानवीय गुण जैसे कि सत्य, सदाचार, शांति, प्रेम और अहिंसा किसी भी सफल, जागृत और जीवंत संस्था का आधार होते हैं, क्योंकि -

1. सत्य विश्वास और ईमानदारी से लबरेज संप्रेषण को बढ़ावा देता है.

2. सदाचारिता अच्छी गुणवत्ता वाले कार्य को बढ़ावा देती है. शांति से सर्जनात्मक व बौद्धिक निर्णय को बढ़ावा मिलता है.

3. अहिंसा लाभकारी सहयोग को बढ़ावा देती है.

इन गुणों को किसी को सिखाने की ज़रूरत नहीं है. लोगों को खुद अपने अंतर में वर्तमान इन गुणों को जागृत करने की ज़रूरत है. यदि कार्मिकों में ये मानवीय गुण जागृत होंगे तो संस्था में निम्नलिखित स्थितियां परिलक्षित होंगी :

- एक पेशेवर कार्मिक ग्राहकों को गलतियों और विलंब के बारे में सही जानकारी देता है.
- लिपिक अपने कार्यनिष्पादन में गुणवत्ता सुनिश्चित करेगा, चाहे अनुश्रवण हो रहा हो अथवा नहीं.
- कार्यपालकों के द्वारा कार्यनिष्पादन में नये-नये तरीके अपनाकर ग्राहकों पर बिना ज्यादा भार दिये सृजनात्मक कार्य करना.
- विक्रय से जुड़े व्यक्ति ईमानदारी से ग्राहकों की सेवा करेंगे.
- प्रबंधक कार्य के माहौल को साफ-सुथरा और प्रदूषण मुक्त रखेंगे.

मानवीय नैतिक मूल्यों को संस्था में कैसे व्यवहार में लाया जायेगा?

1. सत्यता- साथी कर्मचारियों और ग्राहकों से ईमानदारी से पेश आना.
2. सदाचारिता- प्रबंधक, साथी कार्मिकों तथा ग्राहकों से किये गये वादों को अच्छी तरह से निभाना.
3. आंतरिक शांति- समचित्त धैर्यवान रहना, संकटकाल, नफा या नुकसान, तारीफ या शिकायत सभी में धैर्य रखना.
4. प्रेम- लोगों की बात सहानुभूतिपूर्वक एवं उदारतापूर्वक सुनना, न कि फैसला सुनाना.
5. अहिंसा- समस्या का हल सभी के हितों को ध्यान में रखकर करना, न कि किसी के हित को नुकसान पहुंचाकर.
6. इन नैतिक मूल्यों को व्यवहार में लाकर एक विश्वासपूर्ण, सौहार्दपूर्ण माहौल बनेगा, जो कि किसी भी संस्था की उन्नति के लिये अच्छा आधार पैदा करेगा.

ऐसा विचार करें कि यदि कार्यस्थल में नैतिक मानवीय गुणों का समावेश हो जाये तो संगठन का कायाकल्प संभव है.

- यदि आप ईमानदारी बोयेंगे तो विश्वास की उपज प्राप्त करेंगे.
- यदि अच्छाई बोयेंगे तो मित्र पायेंगे.
- यदि विनम्रता बोयेंगे तो महानता पायेंगे.
- यदि सौहार्द बोयेंगे तो संतोष पायेंगे.
- यदि समानुभूति बोयेंगे तो सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण पायेंगे.
- कठिन परिश्रम बोयेंगे तो सफलता पायेंगे.
- यदि क्षमा बोयेंगे तो समाधान पायेंगे.

अपने-आप से प्रश्न करें कि आप निम्न गुणों में से किन गुणों यथा प्रेम, खुशी, शांति, धैर्य, दया, उदारता, विश्वसनीयता, भद्रता और स्वनियंत्रण को, अपने कार्यक्षेत्र में लागू कर रहे हैं. साथ ही इन गुणों को कार्यक्षेत्र में लागू करने पर आप किस तरह के परिणाम की आशा करते हैं?

एक बार यदि ये गुण आपके अंदर समाविष्ट हो जायें तो ये संक्रामक हो जाते हैं और यही गुण लोगों का कायाकल्प भी कर देते हैं. इन गुणों से ओतप्रोत कार्मिकों से कार्यक्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन भी लाये जा सकते हैं. वह भी बिना किसी अतिरिक्त आग्रह और निर्देश के. कल्पना कीजिये कि किसी संस्था की कार्यप्रणाली में सेवा, त्याग, अच्छी संतुलित व्यवस्था, सहनशक्ति, ग्राहक केंद्रीकरण, एक दूसरे के सुखदुख में साथ देना, वादा निभाना, एक दूसरे के प्रति आदर इत्यादि गुण समाविष्ट हो जायें तो उस संस्था को सफल होने से कोई नहीं रोक सकता.

इस तरह से हमने देखा कि कोई भी संस्था अपने जीवन-दर्शन या मिशन के बिना मूल्य आधारित प्रणाली को प्राप्त नहीं कर सकती है.

कल्याण कुमार, स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, लखनऊ में वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय) हैं.

बृजेश तिवारी

टकराव प्रबंधन एवं नेतृत्व

प्रायः हम टकराव को लड़ाई - झगड़े के रूप में लेते हैं तथा हमेशा हमारे समाज में टकराव को बुरी दृष्टि से देखा जाता है. हम अपने रोज की दिनचर्या में बहुत तरह के टकराव देखते हैं, फिर चाहे वह वैयक्तिक टकराव हो या संस्थागत. प्रायः हम टकराव से बचने की या फिर उससे दूर रहने की कोशिश करते हैं. वास्तविकता में क्या टकराव हमेशा बुरा होता है. ज्यादातर लोगों के जवाब होंगे शायद हां, परंतु यह हकीकत नहीं है. कहा जाता है - हर सिक्के के दो पहलू होते हैं. उसी तरह से टकराव के भी अपने फायदे एवं नुकसान होते हैं. बस जरूरत है सोच समझ के साथ काम करने की तथा परिस्थितियों के अनुरूप निर्णय लेने की.

किसी भी संस्था में टकराव एक साधारण सी बात है. प्रायः वर्ग विशेष के बीच में टकराव होते हैं. कभी-कभी तो वैयक्तिक टकराव भी होता है, जो प्रायः संघर्ष में बदल जाता है. इस तरह के संघर्ष कभी-कभी विकराल रूप धारण कर लेते हैं, जो किसी भी संस्था के अस्तित्व एवं विकास के लिए विनाशकारी हो सकते हैं. परंतु यदि नेतृत्व प्रगतिशील एवं महत्वाकांक्षी हो तो इस टकराव को संस्था के फायदे के रूप में इस्तेमाल कर सकता है. बस जरूरत है, सही वक्त पर इस टकराव को समझने की और समुचित निर्णय लेने की.

टकराव की परिभाषा : टकराव शब्द का अर्थ अलग अलग व्यक्तियों के लिए अलग अलग होता है. हम इसे व्यक्तियों या वर्गों के बीच परस्पर असहमति मान सकते हैं. इसे हम दुश्मनी या प्रतिस्पर्धा का भी रूप मान सकते हैं. प्रायः संस्थाओं में टकराव से तनाव एवं चिन्ता बढ़ती है, एक दूसरे के बीच परस्पर संबंधों में बिखराव आ जाता है. लोग एक दूसरे की निन्दा करने में तथा खामियां निकालने में व्यस्त हो जाते हैं, जो कि किसी भी संस्था के विकास के मार्ग में बहुत बड़ा बाधक

है. परंतु टकराव कभी कभी संस्थाओं के विकास में सकारात्मक भूमिका अदा करता है.

टकराव के कारण : किसी भी संस्था में टकराव का होना या न होना उस संस्था की नीतियों एवं कार्यप्रणाली पर निर्भर करता है. टकराव की तीव्रता का स्तर क्या है तथा उससे संस्था की सामान्य कार्यप्रणाली पर क्या प्रभाव पड़ेगा. यह सब संस्था के नियोजन, कार्यनीति तथा पारदर्शिता पर निर्भर करता है. प्रायः संस्थाओं में टकराव व्यक्ति विशेष के बीच या फिर विभिन्न वर्गों के बीच होता है. संस्थागत टकराव के प्रमुख कारण कुछ इस प्रकार हैं:

1. **भूमिका में अस्पष्टता :** जब किसी संस्था में कार्य करने वाले किन्हीं दो व्यक्तियों या वर्गों की भूमिका स्पष्ट नहीं होती है तो अक्सर टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है. भूमिका में अस्पष्टता से वे एक दूसरे के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप करके अपना वर्चस्व स्थापित करने की कोशिश करते हैं, जिससे कभी - कभी संस्था में ही भयावह स्थिति उत्पन्न हो जाती है. कभी-कभी लोग अपनी भूमिका के बारे में संशय की स्थिति में रहते हैं, जिससे वे उस दिशा में उचित तैयारी नहीं कर पाते हैं तथा उनसे जिस तरह की भूमिका की अपेक्षा होती है, उस पर खरे नहीं उतर पाते हैं, तब भी प्रबंधन एवं लोगों के बीच में टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है.

2. **संसाधनों की कमी :** संसाधनों की कमी किसी भी संस्था के टकराव का सबसे बड़ा कारण है. खास कर जब किन्हीं दो व्यक्तियों या वर्गों को अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक ही तरह के संसाधन की आवश्यकता हो तो वे ऐसी स्थिति में अधिक से अधिक संसाधन अपने लिए चाहते हैं. संसाधनों को बांटने में हर वर्ग अधिक से अधिक हिस्सा अपनी तरफ खींचना चाहता है. संसाधनों का अभाव एवं उसका कुप्रबंधन किसी भी संस्था में टकराव का सबसे बड़ा कारण है. ऐसी स्थिति में हर एक वर्ग या व्यक्ति एक दूसरे पर दबाव डालना चाहता है तथा अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य का प्रदर्शन करते हुए अपने ओहदे का भरपूर फायदा उठाने की कोशिश करता है.

3. **संस्थागत स्थिति (ओहदा) :** किसी संस्था में कार्य करनेवाला व्यक्ति संस्था में किस ओहदे पर है, यह बहुत कुछ उसकी भूमिका का निर्धारण करता है. कभी - कभी उसकी स्थिति ऐसी होती है कि उसे उसके नीचे काम करने वाले तथा उसके ऊपर नियंत्रण रखने वाले दोनों को खुश रखना पड़ता है. ऐसा

न कर पाने की स्थिति में वो किसी एक की नजर में गिर जाता है, अर्थात् एक वर्ग उस पर दूसरे के प्रति पक्षपात का आरोप लगा बैठता है, जिससे टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है. खासकर सुपरवाइजर स्तर के कर्मचारियों की स्थिति अक्सर ऐसी हो जाती है. कभी-कभी तो वो दोनों तरफ की उम्मीदों पर खरे नहीं उतर पाते हैं, जिससे बड़ी भयावह स्थिति उत्पन्न हो जाती है.

4. **व्यक्तिगत चरित्र :** किसी भी संस्था या वर्ग या समूह में टकराव बहुत कुछ व्यक्तिगत चरित्र एवं गुणों पर निर्भर करता है. कभी - कभी लोग अपने आप को अपने सहकर्मियों से श्रेष्ठ समझने लगते हैं तथा उनकी अवहेलना करते हैं, जिससे सहकर्मियों में असंतोष पनपता है और टकराव का कारण बन जाता है. कभी-कभी लोग संस्था में अपने ओहदे का इस्तेमाल करके सहकर्मियों को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं. ऐसे में कभी कभी आंतरिक टकराव भी उत्पन्न हेाता है. हालांकि ऐसे तनाव प्रायः दिखते कम हैं, परंतु ये संस्था या समूह के लिए बहुत ही नुकसानदायक होते हैं.

5. **व्यक्तिगत फायदे :** व्यक्तिगत फायदे किसी भी संस्था में टकराव का बहुत बड़ा कारण होते हैं. लोग अपने व्यक्तिगत फायदे के लिए संस्था की नैतिक एवं प्रशासनिक नीतियों का उल्लंघन करते हैं, जिससे संस्था में नैतिकता का ह्रास होता है. ऐसी स्थिति में नैतिक एवं अनैतिक नीतियों एवं क्रिया कलापों में भयावह टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और लोग एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं, जिससे संस्था की शांति एवं सामंजस्य बहुत बुरी तरह प्रभावित होता है. व्यक्तिगत फायदे कभी-कभी संस्था के समूचे ढांचे को हिलाकर रख देते हैं.

6. **अनैतिक प्रतिस्पर्धा :** कभी-कभी संस्थानों में अनैतिक प्रतिस्पर्धा का वातावरण उत्पन्न किया जाता है. लोग किसी भी तरीके से अपना लक्ष्य हासिल करना चाहते हैं, जिससे विभिन्न वर्गों में असंतोष पनपता है और विभिन्न वर्गों में आपस में टकराव के साथ साथ कर्मचारियों एवं प्रबंधन में भी टकराव पैदा करता है.

7. **संस्थाओं की नीतियाँ :** प्रायः हर संस्था की अपनी नीतियाँ होती हैं, जिसके अनुसार उस संस्था का कारोबार चलता है. परंतु कभी कभी ये नीतियां कर्मचारियों एवं प्रबंधन के बीच टकराव का बहुत बड़ा कारण बनती हैं. संस्थाओं की नीतियाँ समय के अनुसार बदलनी चाहिए, परंतु कभी कभी

अपेक्षाओं के अनुसार बदलाव न होना, कर्मचारियों एवं प्रबंधन के बीच टकराव का कारण बन जाता है.

टकराव के प्रकार : संस्थानों में टकराव एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है. इसको हम मात्र एक घटना या एक दो दिन चलने वाली क्रिया नहीं मान सकते हैं. संस्थानों का टकराव से बहुत गहरा रिश्ता है. संस्थानों में होने वाले प्रमुख टकराव इस प्रकार हैंः

1. **व्यक्तिगत टकराव :** इसमें प्रायः लोगों के व्यक्तिगत टकराव होते हैं, जिसमें लोगों के घमंड, आत्मसम्मान की भूमिका ज्यादा होती है तथा लोग एक दूसरे को नीचा और अपने से कम स्तर का दिखाने की कोशिश करते हैं. यह बहुत ही खतरनाक टकराव है. ऐसे टकराव बढ़ते - बढ़ते कभी-कभी विकराल रूप धारण कर लेते हैं तथा संस्थानों को कई वर्गों में बाँट देते हैं तथा हर वर्ग एक दूसरे के विरोधाभास में काम करता है.

2. **अंतःकरण टकराव :** इस तरह का टकराव व्यक्ति विशेष के खुद के अंदर होता है. व्यक्ति विशेष की अंतरात्मा में विभिन्न विचारधाराएं उत्पन्न होती रहती हैं, जिसके कारण वे दुविधा में पड़ जाते हैं और उचित निर्णय नहीं ले पाते. ऐसे टकराव भी कभी कभी संस्था के लिए नुकसानदायक होते हैं. लोग कभी कभी संस्थाओं में अपनी अपनी भूमिकाओं एवं लक्ष्यों को लेकर दुविधा में रहते हैं, जिससे वे उचित निर्णय सही समय पर नहीं ले पाते हैं और संस्था को इसका परिणाम भुगतना पड़ता है.

3. **समूहों के मध्य टकराव :** समूहों के मध्य टकराव किसी भी संस्था में बहुत ही साधारण सी बात है. यह टकराव अक्सर समूहों के लक्ष्य एवं भूमिका में परस्पर निर्भरता के कारण होता है. जैसे कि विपणन एवं उत्पादन विभाग तथा मानव संसाधन विकास जैसे विभागों के मध्य अक्सर टकराव होते रहते हैं तथा ये टकराव अक्सर भूमिकाओं में विभिन्नता के कारण होते हैं. कभी कभी विभिन्न समूहों में टकराव समूहों के व्यक्तिगत फायदे एवं नुकसान के कारण भी होते हैं.

4. **कर्मचारियों एवं प्रबंधन में टकराव :** कर्मचारियों एवं प्रबंधन के बीच संस्थाओं में अक्सर टकराव होते हैं. इसके पीछे कभी-कभी गलत नीतियां जिम्मेदार होती हैं तो कभी कुछ लोगों के निहित स्वार्थ होते हैं. ये टकराव कभी कभी भीषण रूप धारण कर लेते हैं, जिससे हड़ताल, कर्मचारियों का

निष्कासन इत्यादि होने लगता है. कर्मचारियों एवं प्रबंधन के मध्य टकराव कभी-कभी दोनों वर्गों के लिए नुकसानदायक होता है, परंतु कभी-कभी फायदेमंद भी होता है.

टकराव से फायदे : टकराव से अक्सर हम सोचते हैं कि नुकसान ही होता है, परंतु यदि टकराव का सुनियोजित प्रबंधन किया जाये तो इससे बहुत सारे फायदे भी होते हैं. टकराव से होनेवाले कुछ फायदे इस प्रकार से हैं:

1. **सुअवसर प्राप्त होना :** टकराव से लोगों में एवं समूहों को सोचने एवं परिस्थतियों को अलग अलग ढंग से भांपने एवं विश्लेषण करने का अवसर प्राप्त होता है, जिससे वे समयानुसार उचित निर्णय ले सकते हैं तथा लोग किसी समस्या को ज्यादा तत्परता से देखते हैं तथा उसे हल करने की कोशिश करते हैं.

2. **नये विचारों का जन्म :** टकराव की स्थिति हमेशा कार्य करने के तरीके एवं विभिन्न नीतियों के लिए हमेशा खतरे से भरी रहती है, जिससे लोगों का ध्यान नये-नये तरीकों की तरफ जाता है और दिमाग में नयी-नयी विचारधाराएं उत्पन्न होती हैं. इस भय से बचने के लिए लोग कार्य करने के नये नये तरीके ढूंढते रहते हैं. इससे नया आविष्कार होता है.

3. **समूहों में एकता :** टकराव से समूहों में एकता बढ़ती है. खासकर जब विभिन्न समूहों में आपस में टकराव होता है तो लोगों की समूह के प्रति निष्ठा बढ़ती है. इससे समूहों में आपस में एकता बढ़ती है और लोग अपने समूह की भलाई के लिए काम करते हैं. इससे समूह के साथ-साथ संस्था का भी फायदा होता है.

4. **प्रतिस्पर्धा में बढ़ोत्तरी :** टकराव से प्रतिस्पर्धा बढ़ती है. लोगों में तथा समूहों में एक दूसरे से बेहतर प्रदर्शन दिखाने की होड़ बढ़ती है, जिससे बहुत ही प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण पैदा होता है.

5. **कमियों को दूर करने के अवसर :** टकराव से संस्थाओं की नीतियों में होने वाली कमियों के बारे में आसानी से पता लग सकता है. संस्था की कार्यप्रणाली तथा उसकी नीतियों में पायी जाने वाली कमियों को प्रबंधन विश्लेषण करके उचित समय पर समुचित कदम उठा सकता है, जिससे संस्था को आनेवाले नुकसान एवं विपरीत परिस्थितियों से बचाया जा सकता है.

6. **निराशा एवं तनाव दूर करने का यंत्र :** टकराव कर्मचारियों की निराशा एवं तनाव दूर करने का एक प्रमुख यंत्र है. कर्मचारीगण टकराव के माध्यम से अपने तनाव एवं निराशा को प्रदर्शित करके अपने मानसिक तनाव को कम कर देते हैं, जिससे उनकी कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता पर विपरीत असर नहीं पड़ता है और वे अपना कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न करने में सफल होते हैं.

7. **टकराव प्रतिस्पर्धा बढ़ाने का यंत्र :** कभी कभी टकराव के माध्यम से कर्मचारियों में प्रतिस्पर्धा बढ़ाई जा सकती है. प्रबंधन एक वर्ग को दूसरे वर्ग से तुलना करके उन्हें अच्छा प्रदर्शन करने के लिए उकसाता है. कभी-कभी प्रबंधन अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए भी संस्था में टकराव का वातावरण पैदा करता है, जिससे वे विभिन्न वर्गों या लोगों से अपनी आवश्यकता के मुताबिक कार्य करवाने में सफल हो जाते हैं, अर्थात् टकराव के माध्यम से संस्था में प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण उत्पन्न किया जाता है.

टकराव से नुकसान : टकराव किसी भी समाज, संस्था एवं वर्ग के लिए सामान्यतया फायदेमंद नहीं माना जाता है. अक्सर इसे संस्थाओं एवं व्यक्ति की प्रगति में बाधा माना जाता है. टकराव से होने वाले प्रमुख नुकसान इस प्रकार हैं :

1. **तनाव का वातावरण :** टकराव से अक्सर संस्थाओं में तनाव का वातावरण बना रहता है. किसी भी संस्था एवं वर्ग की उन्नति के लिए आवश्यक है कि वहां का वातावरण संस्था की जरूरतों एवं नीतियों के अनुरूप हो. परंतु तनाव से संस्था का वातावरण संस्था की नीतियों के विपरीत हो जाता है तथा तनाव की स्थिति में कर्मचारी अपने कार्य में पूरी तरह समर्पित नहीं हो पाते हैं और संस्था अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल हो जाती है.

2. **संस्थान एवं वर्ग के लक्ष्य प्राप्ति में बाधक :** टकराव कभी कभी संस्थान के लिए मूल्यवर्धक हो जाता है, अर्थात् टकराव संस्था के लिए बहुत मंहगा हो जाता है. कभी कभी प्रबंधक अपने कर्मचारियों में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करने के लिए जानबूझकर तनाव उत्पन्न करते हैं. परंतु कभी-कभी यह संस्था के लिए बहुत महंगा हो जाता है और संस्था या वर्ग अपने लक्ष्य से भटक जाता है, अर्थात् संस्था इस टकराव की बड़ी कीमत अदा करती है.

3. **टकराव असंतुलन का स्रोत :** टकराव किसी भी संस्था में संतुलन को प्रभावित करता है. किसी भी संस्था में संतुलन भागीदारी एवं फायदे के रिश्ते पर निर्भर करता है. जब तक कर्मचारी के कार्यों में भागीदारी फायदेमंद होती

है, तब तक सब ठीक-ठाक चलता है. परंतु जब भागीदारी फायदे से ज्यादा हुई तो टकराव उत्पन्न हो जाता है तथा कर्मचारी कभी-कभी ज्यादा फायदे में इस संस्था को छोड़कर या फिर ज्यादा फायदे के लिए टकराव का आश्रय लेते हैं. परंतु कर्मचारी के संस्था छोड़ देने से कभी-कभी संस्था की क्षमता कम हो जाती है.

4. **अराजक तत्वों को फायदा :** टकराव का उपयोग कभी-कभी लोग अपने व्यक्तिगत फायदे के लिए करते हैं. लोग टकराव की आग को भड़काकर अपना राजनीतिक वर्चस्व स्थापित करते हैं. ऐसी स्थिति में नेतृत्व को बहुत ही सावधानी एवं सतर्कता से स्थिति को संभालने की आवश्यकता है, जिससे ऐसे अराजक तत्वों को व्यक्तिगत लाभ लेने से रोका जा सके.

टकराव रोकने के उपाय और नेतृत्व की भूमिका : टकराव प्रायः संस्था को नुकसान पहुंचाते हैं. परंतु कभी-कभी इसका उपयोग संस्था के फायदे के लिए किया जा सकता है. आवश्यकता है एक ऐसे नेतृत्व की, जो सही समय पर सही निर्णय लेकर टकराव की दिशा को बदलकर फायदेमंद बना सके. टकराव एक बहुत ही नाजुक विषय है. इसको बहुत ही सावधानीपूर्वक देखने की आवश्यकता है. टकराव कम करने अथवा रोकने के कुछ उपाय इस प्रकार हैं.

1. **उभयनिष्ठ लक्ष्य निर्धारित करना :** अगर वर्गों या लोगों का लक्ष्य एक ही हो तो उन्हें इसे प्राप्त करने के लिए एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता होगी, जिससे लोगों में प्यार एवं सद्भावना बनी रहेगी एवं टकराव कम होगा. टकराव की स्थिति में भी वे लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में कार्य करेंगे, जो संस्था या वर्ग के लिए फायदेमंद है. नेतृत्व की नीतियाँ बनाते समय एवं उसका कार्यान्वयन करते समय इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि संस्था का लक्ष्य एक ही हो और वे सभी उसे प्राप्त करने की दिशा में कार्य करें.

2. **संस्था में संरचनात्मक बदलाव :** संस्था में कुछ संरचनात्मक बदलाव लाकर या इसके किसी हिस्से में बदलाव लाकर टकराव को कम किया जा सकता है. संस्था में विकेन्द्रीकरण एवं ओहदे के अंतर में कमी इत्यादि लाकर और कर्मचारियों को अधिक कार्य करने एवं उन्नति के सुअवसर प्रदान करके टकराव में कमी लायी जा सकती है. कुछ संरचनात्मक बदलाव इस तरह से लाये जा सकते हैं.

3. **निर्भरता में कमी करना :** संस्था में कार्यप्रणाली इस प्रकार होनी चाहिए कि लोगों को अपना कार्य करते समय दूसरों पर निर्भर न रहना पड़े.

4. **संसाधनों की भागीदारी में कमी :** किसी भी वर्ग या व्यक्ति को अपने कार्य करने के लिए संसाधनों की कमी नहीं होनी चाहिए और न ही किसी के साथ भागीदारी होनी चाहिए. एक ही तरह का संसाधन दो विभिन्न प्रकार के लोगों के उपयोग के लिए नहीं होना चाहिए. अगर हो भी तो वह न्यूनतम होना चाहिए.

5. **कर्मचारियों की अदला-बदली :** ऐसे कर्मचारी, जो टकराव में सक्रिय हों, उनके वर्गों या कार्यक्षेत्र को बदल देना चाहिए.

6. **विशेष आर्बिट्रेटर की नियुक्ति :** कर्मचारियों के बीच विवाद को सुलझाने के लिए विशेषाधिकार युक्त आर्बिट्रेटर की नियुक्ति होनी चाहिए, जो समय समय पर हस्तक्षेप करके टकराव को कम कर सके या फिर खत्म कर सके.

7. **समस्या का समाधान :** नेतृत्व या प्रबंधन को चाहिए कि वे विभिन्न वर्गों के बीच टकराव के कारण का समाधान करें. उन्हें विभिन्न वर्गों की समस्याओं को रचनात्मक दृष्टिकोण से सुनकर उसे हल करने की कोशिश करनी चाहिए.

8. **बचाव :** टकराव से बचने का एक सबसे बड़ा उपाय है - बचाव अर्थात् अगर एक पक्ष वहां से हट जाए तो टकराव खत्म हो सकता है. नेतृत्व को इस दिशा में ज्यादा प्रयास करना चाहिए तथा कभी-कभी लक्ष्य एवं जिम्मेदारियों में बदलाव लाकर दो वर्गों या व्यक्तियों को टकराव से बचाया जा सकता है.

9. **विचारधाराओं में अंतर को कम करना :** प्रबंधन या नेतृत्व को चाहिए कि वे व्यक्तियों या वर्गों के उभयनिष्ठ लक्ष्यों या विचारधाराओं को ज्यादा बढ़ाएं तथा जहां पर अंतर हो, उसे कम करने की कोशिश करें. समानता को बढ़ावा देकर एवं असमानताओं को कम करके टकराव को कम किया जा सकता है.

10. **समझौता :** समझौता टकराव कम करने या फिर खत्म करने की सबसे अच्छी तकनीक है. समझौता किसी बाहरी व्यक्ति या संस्था के माध्यम से या फिर आपस में विचार कर या फिर प्रतिनिधियों के द्वारा किया जा सकता है.

11. **झगड़ा :** कभी-कभी सुझाव विभिन्न वर्गों के बीच टकराव को खत्म नहीं कर पाते हैं. ऐसी स्थिति में वर्गों को उसी स्थिति में छोड़ देना चाहिए तथा टकराव को चरमसीमा पर पहुंचने देना चाहिए. ऐसी स्थिति में लोग अपनी शक्ति

का भरपूर इस्तेमाल करके एक दूसरे पर अपना प्रभुत्व जमाने की कोशिश करेंगे. अपनी शक्ति एवं क्षमता के बल पर वे अपना-अपना उद्देश्य प्राप्त करने में सफल होंगे. यह तकनीक अक्सर संस्था के विकास एवं उसका वर्चस्व बढ़ाने के लिए प्रयोग में लाई जा सकती है.

टकराव प्रबंधन के विभिन्न तरीके नेतृत्व की स्थिति के अनुसार विभिन्न प्रक्रियाएं अपनाने का अवसर प्रदान करते हैं. नेतृत्व को उपलब्ध संसाधनों का एवं परिस्थितियों का समुचित लाभ उठाने के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए. एक सजग नेतृत्व एवं कुशल प्रबंधन टकराव का इस्तेमाल संस्था के विकास के लिए कर सकता है. टकराव हमेशा नुकसानदायक ही नहीं होता है, यह फायदेमंद भी होता है.

उपर्युक्त विचारों को ध्यान में रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि टकराव किसी भी संस्था का अटूट हिस्सा है. इसको खत्म करना नामुमकिन है, परंतु इसे कम करके तथा संरचनात्मक परिवर्तन करके इसके प्रभाव से संस्था में बदलाव लाया जा सकता है. टकराव का कुशलता से प्रबंधन करके हम इसका उपयोग संस्था, वर्ग तथा समाज के उत्थान एवं फायदे के लिए कर सकते हैं.

एक कुशल एवं सक्रिय नेतृत्व टकराव की दिशा बदलकर इसका उपयोग संस्था के विकास एवं उत्थान के लिए कर सकता है.

बृजेश तिवारी, क्षे.का., हैदराबाद में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

मोहन बोधनकर

मानसिक तनाव प्रबंधन - विसंगति में जीने की कला

ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है 'मनुष्य'. ईश्वर ने ही हमें अन्य प्राणियों से अलग और बेहतर बनाया है. क्या हम इस बात को स्वीकारते हैं? यदि हां, तो आइए हम सब इस मनुष्य के जीवन चक्र पर विचार करें.

हम श्रेष्ठ हैं, क्योंकि हममें सोचने और विचार करने की शक्ति है, हमें भाषा का वरदान मिला है. इसी विचार शक्ति ने मनुष्य में आगे बढ़ने की इच्छा को जन्म दिया है. इसी इच्छा-शक्ति ने मनुष्य की विकास यात्रा प्रारंभ की है. यह भी मानव स्वभाव है कि जब कुछ मिल जाता है तो और की चाह होने लगती है. इसी और की चाह अथवा यूं कहें कि चक्र ने मनुष्य को कभी अपार सुख दिया, तो कभी दुःख. सुख-दुःख के इस प्रवाह में कभी मनुष्य आनंद के सागर में गोते लगाता है तो कभी दुःख के भंवर में उलझकर रह जाता है.

'सुख-दुःख', 'स्वर्ग-नरक', 'विसंगति-कला' परस्पर विरोधाभासी शब्द हैं, परन्तु हैं तो एक ही सिक्के के दो पहलू. जो उत्तम है, उदात्त है, सौन्दर्यपूर्ण है और जो हमें पसंद है - वही सुख है, वही स्वर्ग है और वही कला है. जो उदास है, जो वीभत्स है, जो कुरूप है और जो हमें पसंद नही है, वही दुःख है, वही नरक है, वही विसंगति है.

विसंगति में कैसा सौन्दर्य? इसी प्रश्न का उत्तर आज हमें खोजना है. जीवन की विसंगतियां क्या हो सकती हैं? एक व्यक्ति की मूल आवश्यकताएं होती हैं-रोटी, कपड़ा और मकान. इन्हीं मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्णता के लिए व्यक्ति को इतना संघर्ष करना पड़ता है कि वह शरीर और मन दोनों से थक जाता है. यही थकान धीरे-धीरे तनाव का रूप ले लेती है. किसी भी स्थिति पर अत्यधिक सोचना मानसिक तनाव है. उसी सोच में घुल-घुल कर जीना शारीरिक तनाव उत्पन्न करता है.

मानसिक तनाव के अनेक कारण हो सकते हैं - पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक अथवा व्यावसायिक. व्यक्ति के क्रिया-कलाप का केन्द्र बिन्दु परिवार होता है. परिवारों से समाज बनता है. पारिवारिक संबंधों में तनाव व्यक्ति की कार्यकुशलता पर प्रभाव डालते हैं. यदि हम सोचें कि हमारे घर अथवा कार्यालय में तनाव न हो तो यह एक आदर्श स्थिति होगी, जो कि संभव नहीं है. विसंगतियां तो होंगी ही, उनसे निकलकर काम करना ही कला है, चुनौती है.

एक अत्यन्त साधारण परिवार का व्यक्ति, जिसे दो वक्त की रोटी कमाना भी मुश्किल है, उसका बेटा उससे कहता है 'पापा कॉफी हाऊस क्या होता है'? 'ये सब अपने लिए नहीं है, जिनके पास पैसा है, वो ही जाते हैं, वहां अलग-अलग प्रकार का खाना मिलता है'. किसी तरह से पैसों की व्यवस्था कर, वह अपनी पत्नी बच्चे को कॉफी हाऊस ले जाता है. चम्मच-प्लेट से खटर-पटर करते, कॉफी सुड़कते बच्चे की आंखों की चमक से उसे जो अपूर्व शांति मिलती है, उसका कोई मोल नहीं है. इस कॉफी हाऊस के कारण उसने और उसकी पत्नी ने न जाने कितने दिनों से पैसे जोड़ने का प्रयत्न किया होगा, शायद आधे पेट रहकर भी.....? लेकिन यहां पर एक बात तो तय है कि तमाम आर्थिक विसंगतियों को झेलते हुए उस व्यक्ति ने जीना सीख लिया है.

मानसिक तनाव प्रबंधन पर वर्षों से अनेक शोध कार्य चल रहे हैं. इसमें से कुछ तथ्य अब स्वीकार्य और मान्य हो गये हैं और कुछ पर अभी भी शोध और विवाद चल रहा है. मानसिक तनाव आवश्यक नहीं कि हमेशा ही बुरा हो. अनेक बार इससे सृजनात्मक कार्य भी हो जाते हैं. यह इस बात पर निर्भर करता है कि एक व्यक्ति कितना मानसिक तनाव सह सकता है. परंतु अत्यधिक मानसिक तनाव, जो एक व्यक्ति की सहनशीलता से बाहर है, स्वस्थ शरीर को बीमार कर सकता है.

कुछ वर्ष पूर्व एक युवा प्रतिभावान आई. टी. मैनेजर से मेरी मुलाकात हुई. वह बहुत ही तेज कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग करने में महारथ रखता था. जब उसे एक अच्छी कम्पनी में नौकरी मिली, तब वह बहुत ही खुश, स्वाभिमानी और संतुष्ट व्यक्तित्व का मालिक था. कुछ समय पश्चात् ही उसकी इस योग्यता के कारण उसे टीम - लीडर की पदोन्नति प्राप्त हुई. इस पद पर उसे केवल टीम के सदस्यों के द्वारा की गई प्रोग्रामिंग में सुधार करना होता था. उसके इस पद पर भी अच्छा कार्य करने पर पुनः पदोन्नति देकर कंम्पनी ने प्रोजेक्ट मैनेजर बना दिया, वह युवा इस पद को पाने पर संतुष्ट था, परंतु अब उसे अपना पसंदीदा काम यानी प्रोग्रामिंग करने का कार्य नहीं मिल रहा था. उसे अब अपने अधीनस्थ स्टाफ सदस्यों को, जिसमें से कुछ कम

योग्यता वाले भी थे, प्रेरित करना था. उसे अब अनेक व्यक्तियों से संबंधित समस्याओं से जूझने में ही पूरा समय बिताना पड़ता था. उसकी योग्यता कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग थी ना कि सहकर्मियों को प्रेरित करने में. जो कार्य वह कर रहा था, वह उसकी रुचि का नहीं था. परिणामस्वरूप वह युवा कुछ ही दिनों में एक हताश व्यक्ति बन कर रह गया.

कुछ वर्षों बाद उसी प्रोग्रामर से मेरी मुलाकात फिर हुई. अब वह बहुत खुश व आत्मसंतुष्ट दिखाई दे रहा था. उसने बताया नौकरी छोड़कर वह दूसरी कम्पनी में नौकरी कर रहा है. उसे अपनी योग्यता का काम मिल गया है. नौकरी छोड़ना एक बहुत महत्वपूर्ण निर्णय साबित हुआ. यहाँ पर एक बात निश्चित है कि अगर आपको अपने-आप पर विश्वास है तो कठिन से कठिन स्थितियों से निकलकर सफलता प्राप्त की जा सकती है.

मानसिक तनाव के दुष्परिणाम : अत्यधिक मानसिक तनाव के कारण हमारे शरीर की पाचन क्षमता कमजोर होने लगती है.शरीर को बैक्टीरियल एलर्जी से बचाने वाली प्रतिरोधक क्षमता कम होने लगती है और नर्वस सिस्टम कमजोर पड़ने लगता है तथा अनेक बीमारियां व्यक्ति को जकड़ सकती हैं. मानसिक तनाव से ग्रसित व्यक्ति अपने शरीर का ध्यान नहीं रख पाता. मानसिक तनाव के कारण हृदय - गति और ब्लड- प्रेशर तेजी से बढ़ जाता है. ऐसी स्थिति में शरीर से पसीना निकलता है, व्यक्ति के हृदय पर अत्यधिक दबाव पड़ता है, वह बहुत घबराहट महसूस करता है और उत्तेजित हो जाता है. इससे हमारी दूसरे व्यक्तियों के साथ काम करने की क्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है. यहां तक कि जो बात हम सोच रहे हैं, वह बात हम अपनी जुबान से बोल नहीं पाते हैं और शब्दों का सही चयन नहीं कर पाने के कारण अनजाने में अपने ही विरुद्ध विषम परिस्थितियां पैदा कर लेते हैं. हमें ऐसी परिस्थितियों का सामना करने के लिये शांत एवं संयमित रहने की योग्यता आनी चाहिए. मानसिक तनाव का असर शरीर पर ही नहीं पड़ता, बल्कि इस तनाव के कारण व्यक्ति की जीवन-शैली भी प्रभावित होती है.

तनाव कम करने हेतु सुझाव : कहते हैं, दर्द बांटकर बोझ हल्का किया जा सकता है. कई बार ऐसा होता है कि इस बोझ को हल्का करने के चक्कर में व्यक्ति स्वयं ही अपने जीवन में विसंगतियां निर्माण करता है. मुझे दुःख है, मेरे साथ कुछ भी अच्छा नहीं हो रहा है और इस समस्या का समाधान वह ढूंढता है - नशे में. क्या यह सही है? नशे से क्षणिक सुख, तात्कालिक राहत तो मिल जाती है, पर समस्या का वास्तविक समाधान मिलता है क्या? नशा उतरने पर जो शून्य है, उसका क्या करें ?

यहां एक बात और है, व्यावसायिक क्षेत्र में कार्यरत सभी व्यक्ति, चाहे वो स्त्री हो या पुरुष, उन्हें अपने अधिकारों के कारण बड़े-बड़े निर्णय लेने पड़ते हैं. पर क्या कारण है कि एक स्त्री अधिकारी अपने तनावों को दूर करने के लिए नशे का सहारा नहीं लेती? क्या यह परम्परागत संस्कार हैं, जिन्होंने उसे जीवन की तमाम विसंगतियों से निकलने का मार्ग स्वयं में खोजने का बल दिया है? क्यों एक पुरुष ऐसा नहीं कर पाता?

सर्वप्रथम हमें अपनी योग्यताओं का आकलन करते रहना चाहिए. दूसरा हमें अपनी प्राथमिकताओं का निर्धारण भी स्पष्ट तौर पर कर लेना चाहिए. व्यक्ति को अपनी भावनात्मक, शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, मानसिक आवश्यकताओं को जानना अति आवश्यक है. एक बार यदि हमने इन प्राथमिकताओं को क्रमवार सूचीबद्ध कर लिया, तब निश्चित मानिये कि हमने आधी जंग तो जीत ही ली. व्यक्ति को विषम परिस्थितियों में भी मानसिक संतुलन बनाये रखकर सामने वाले व्यक्तियों से उचित व्यवहार करना चाहिए. हमें अपनी प्राथमिकताओं का चुनाव स्वयं करना चाहिए और उसका समाधान भी शांतिपूर्ण ढंग से खोजना चाहिए. अनेक बार हम अपने-आप को रोक नही पाते हैं और असमय ही बगैर सोचे-समझे कुछ शब्द बोल देते हैं. हमें यह सोचना चाहिए कि क्या इस विवाद में पड़ने से कुछ लाभ होगा, यहां तक कि क्या मैं इस विवाद को जीत पाऊंगा.

व्यावसायिक क्षेत्र में व्यक्ति को अनेक तनावों का सामना करना पड़ता है. पदोन्नति न होना, पदोन्नति होकर भी सही अवसर न मिलना, किसी काम का समय पर पूर्ण न होना, जोखिम भरे निर्णय लेने के बावजूद उसका सही फल न निकलना, सारी स्थितियां ऐसी होती हैं, जो किसी भी व्यक्ति को हताश कर सकती हैं. क्या करें? मैं काम तो करना चाहता हूं, अपने लक्ष्य को भी प्राप्त करना चाहता हूं, परन्तु परिस्थितियां ही अनुकूल नहीं हैं. निराशा और सिर्फ निराशा.

इस निराशा से कैसे निकलें? इसका एक ही हल हो सकता है, 'आदमी को चाहिए कि वह परिस्थितियों से जूझे, संघर्ष करे और यदि इसके बावजूद एक स्वप्न टूट जाता है तो दूसरा स्वप्न गढ़े और उसे पूरा करने का प्रयास करे'.

इसके अतिरिक्त व्यवसाय/नौकरी को सिर्फ काम समझकर निपटाने के स्थान पर उसका आनंद लेकर काम किया जाना चाहिए. कर्म को उत्सव समझकर करें. जो लोग कर्म को केवल काम समझकर करते हैं, वो अपने जीवन को तनाव से भर लेते हैं. इस दौर में हर व्यक्ति जल्दी में है, धन और सफलता के लिए धैर्य और प्रतीक्षा

मूर्खता लगती है. आज के भागते जीवन में अत्यधिक कर्म आवश्यक है, ऐसे समय में तनाव व दबाव स्वाभाविक है.

मीरा नाचती थी उत्सव के रूप में. कृष्ण बांसुरी बजाते या हनुमान लंका जला रहे थे, प्रत्येक स्थिति में उनके भीतर उत्सव का भाव था. जब हम उत्सव में जीते हैं तो हमारे लक्ष्य बहुत ही शुद्ध होते हैं. उत्सव का अर्थ ही हमारे भीतर की उदासी को विदाई देना होता है. उत्सव की पूर्णता पर भी थकान की जगह उत्साह बना रहता है. सबके साथ सबकी इच्छा का सम्मान रखते हुए जीना या कुछ करना चुनौती का काम है, लेकिन उत्सव वृत्ति इसे सरल बना देती है.

डिस्कवरी चैनल पर आपने देखा होगा कि 'सायमन' नाम की एक मछली है, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसके प्रजनन के अनुकूल सारी परिस्थितियां प्रवाह के विरुद्ध होती हैं. केवल वंश बढ़ाने, जीवित रहने के संघर्ष के कारण वह सारा जीवन प्रवाह के विरुद्ध अर्थात् उल्टे तैरकर जीती है. बहुत बड़ा सबक है हमारे लिए - विषम परिस्थितियां होंगी, जो स्थितियां हमारे हाथ में नहीं, उन्हें स्वीकार कर आगे मार्ग निकालना. इस मार्ग निकालने की प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण बात है **'आत्म-परीक्षण'**. पूर्णतः मानसिक संतुलन बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है.

आधुनिक जीवन शैली को संवारना

आज की इस भागदौड़ भरी जीवनशैली में एक और महत्वपूर्ण बात है हमारे investments यानि निवेश - जब मैं कई दिनों तक अपने निवेशों की देखभाल नहीं करता हूँ तो मानसिक तनाव महसूस करता हूँ. ऐसा लगता है कि कुछ समय के लिए सब कुछ छोड़-छाड़कर सब कुछ ठीक करना चाहिए. आजकल के दौर में यह एक आम बात है कि हर व्यक्ति के अनेकों प्रकार के निवेश होते हैं, जैसे - एलआईसी, म्यूचुअल फंड, सावधि जमाएं, एसआईपी, बॉंड, शेयर्स, फ्यूचर्स इत्यादि. इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के भुगतान जैसे आयकर, संपत्ति कर, सोसायटी, विभिन्न प्रकार के ऋणों की किश्त, इन्श्यूरेन्स प्रीमियम का भुगतान आदि.

पहले के समय में व्यक्ति सिर्फ नाम से पहचाना जाता था, लेकिन टेक्नॉलाजी के इस दौर में इन्सान कई नम्बरों से पहचाना जाने लगा है, जैसे कर्मचारी संख्या, व्यक्तिगत पहचान संख्या (PAN), इंटरनेट बैंकिंग एवं अन्य ई-खातों में यूजर आईडी एवं पासवर्ड, डीमैट नम्बर, एटीएम कार्ड नम्बर, क्रेडिट/डेबिट कार्ड नम्बर, मोबाईल नम्बर आदि. उपर्युक्त सभी सूचनाओं को हमने कितने अच्छे से संवार कर रखा है? क्या हमारे हर निवेश का पूरा ब्यौरा सुव्यवस्थित रूप से हमारे पास उपलब्ध

है. इस प्रश्न का उत्तर ही सब कुछ कह देगा. यदि आपका उत्तर नकारात्मक है तो आज ही एक डायरी में इन्हें सूचीबद्ध कर लें, फिर देखिए आपको इनका प्रबंधन करने में कितनी राहत मिलती है.

इसी सन्दर्भ में एक बहुत पुरानी कहावत याद आती है, 'जितनी चादर हो, उतने ही पैर पसारना चाहिए'. आज के इस भौतिकतावादी युग में हम अक्सर अपने पड़ोसियों से, मित्रों से या सहकर्मियों से अपनी तुलना करते रहते हैं. अनेकों लोग केवल दिखावे के लिए बहुत बड़े खर्च कर्ज लेकर कर देते हैं और फिर दैनिक जीवन-यापन में परेशानियों का सामना करते हैं. दूसरों के कहने पर अनेकों लोग अपने-आप को उस अंधेरे कुएं में धकेल देते हैं, जहां केवल निराशा और असंतोष के अलावा कुछ नहीं होता. इन विषम परिस्थितियों में व्यक्ति को अपना आत्मविश्वास बनाये रखने एवं अपने परिवार के सदस्यों में विचारों का आदानप्रदान एवं उनमें तालमेल बनाये रखना आवश्यक है, अन्यथा अच्छे पद और अच्छा वेतन होने के बाद भी व्यक्ति हमेशा निराश रहेगा.

हम अक्सर यह बात करते हैं कि सरकार अगले दस वर्षों में क्या-क्या करने वाली है, लेकिन क्या हमने अपने परिवार के बारे में अगले दस वर्षों की कोई योजना बनाई है. कब मकान लेना है? कब वाहन लेना है? कब बच्चों का विवाह करना है? बच्चों की पढ़ाई के लिए व्यवस्था करनी है? कब परिवार को छुट्टियों पर ले जाना है? आदि. यदि इन बिन्दुओं पर योजना बनाकर अमल किया जाये तो खर्च को समयवार बांटने से आने वाले समय में तनाव से बचा जा सकता है और वर्तमान में भी अपने और परिवार पर व्यतीत करने के लिए अधिक समय मिलेगा. हम अपने तनावों को अपने मित्रों एवं शुभचिंतकों से संवाद कर अथवा / एवं पुस्तकें पढ़कर भी दूर कर सकते हैं.

आत्म-निरीक्षण के इस दौर में साहित्य हमारा पाथेय बन सकता है. साहित्य का अर्थ है 'सत् + हित' अर्थात् हित सहित. जिसमें हित निहित है, वह निश्चय ही हमारा मार्गदर्शक बन सकता है. जब किसी ऐसे व्यक्ति का आत्मचरित्र पढ़ते हैं, जिसने अत्यन्त विषम परिस्थितियों से निकल कर सार्थक और सफल जीवन जिया है. वह व्यक्ति, उसका संघर्ष हमारे लिए **प्रेरणा** बन जाता है.

वर्तमान में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं, जिनके द्वारा लिखा गया साहित्य हमें संघर्षों से निकलने के प्रेरणा देता है. सुश्री किरण बेदी का आय-डेयर, श्री ए.पी.जे.अब्दुल कलाम जी का - अग्नि की उड़ान, इन्फोसिस के श्री नारायणमूर्ति व श्रीमती सुधा मूर्ति का वाइज़ एंड अदरवाइज़, पुण्य-भूमि भारत आदि, श्री टी.एन.शेषन की जीवनी, ये

ऐसे व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने व्यवस्था में रहकर, व्यवस्था से लड़कर, व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन करने का प्रयास किया और सफलता की मिसाल कायम की है.

एक ऐसा ही उदाहरण है मुंबई के 'ऑर्किड' नामक पंचसितारा होटल के मालिक श्री व्यंकटेश कामत का, पारिवारिक कलहों के कारण सारी सम्पत्ति छिन गई थी, क्षण भर में राजा से रंक हो गये. उसी निराशा से आत्महत्या का विचार मन में आया. हताशा के उन क्षणों में ऑफिस के केबिन के सामने वाली बहुमंजिला इमारत पर नजर पड़ी. 14-15 वीं मंजिल पर रस्सी के झूले पर बैठ कर एक व्यक्ति उस इमारत पर पुताई का काम कर रहा था. वह व्यक्ति जान जोखिम में डालकर काम कर रहा था, क्योंकि वह जानता है कि उसके काम करने से ही आज घर में चूल्हा जलेगा. और मैं, मैंने जरा भी नहीं सोचा, मेरे मरने के बाद मेरी पत्नी, बच्चों का क्या होगा? एक क्षण, बस एक ही क्षण जीवन की दिशा बदलने वाला साबित हुआ.

अपने तनाव को कम करने के लिए आप 'हरिवंशराय बच्चन' की इन पंक्तियों का सहारा भी ले सकते हैं:

''असफलता एक चुनौती है, इसे स्वीकार करो ।
क्या कमी रह गई है, देखो और सुधार करो ।
जब तक सफल न हो, नींद चैन को त्यागो तुम ।
संघर्षों का मैदान, छोड़ मत भागो तुम ।
कुछ किए बिना ही जय-जयकार नहीं होती ।
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती ।''

मोहन बोधनकर, क्षे.का., जबलपुर में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

महेन्द्र एस. मड़के

समय नहीं वरन् स्वयं का प्रबंध करें

मानव जीवन जिन कणों से बना है, उन्हें हम समय के मोती कहते हैं. हम अपने अस्तित्व को पारिभाषित करने के लिए समय का प्रयोग करते हैं. हमारा जीवन भूतकाल की संतान है. हमारे विचार एवं आचरण हमारे साथ विगत में घटी विभिन्न घटनाओं एवं उनसे प्राप्त अनुभवों का ही परिणाम हैं, लेकिन हम वर्तमान में जीने की बजाए भूत और भविष्य में जीने में अधिक विश्वास रखते हैं. परिणामवश हम वर्तमान के आनंद से वंचित रहकर भविष्य की चिंता में खोए रहते हैं, जबकि भविष्य कभी आता ही नहीं है. जीवन जिस सामग्री से बना है, उसे समय कहते हैं और समय का जीवंत हिस्सा वर्तमान है. भूतकाल मृत है और भविष्य काल अजन्मा है, अर्थात् दोनों का ही कोई अस्तित्व नहीं.

इन सभी विचारों को यदि हम आधुनिक युग के परिप्रेक्ष्य में देखें तो हम पाएंगे कि मनुष्य जीवन के आनंद से वंचित हो चुका है, क्योंकि उसे भूत एवं भविष्य में जीने की आदत पड़ चुकी है. उसकी असीमित अपेक्षाएं, आकांक्षाएं उसे सदैव समय की कमी का एहसास दिलाती हैं. एक दिन में चौबीस घंटे होते हैं, लेकिन वे भी अगर हमें कम लगने लगें तो यह हमारे नियोजन एवं प्रबंधन योग्यता पर प्रश्नचिह्न है.

मानव मस्तिष्क एवं शरीर इस सृष्टि की महानतम कृतियों में से एक है, क्योंकि इसमें ऐसी अप्रतिम शक्ति है, जो दुनिया में किसी को भी आश्चर्यचकित कर सकती है. अगर इसकी क्षमता का संपूर्ण दोहन करने के लिए इनसे निरंतर काम लिया जाए तो वे अपना काम ठीक ढंग से नहीं कर पाएंगे, क्योंकि कोई कितना भी कार्यकुशल क्यों न हो, वह निरंतर काम नहीं कर सकता. इसलिए अपने मस्तिष्क एवं शरीर को पुनर्जीवन और नवयौवन प्रदान करने के लिए उन्हें आराम देना ही होगा.

हमारा मस्तिष्क किसी झील के पानी की तरह है और हम उसे नदी समझकर निरंतर प्रवाहित रखते हैं, जिससे मस्तिष्क के थकने पर शरीर भी थकान महसूस करता है. थका हुआ शरीर और मस्तिष्क अपना कार्य परिपूर्ण ढंग से नहीं कर सकते और उनके सामने सदैव समय का अभाव बना रहेगा.

हमें यदि आंतरिक शांति और अगाध शक्ति प्राप्त करनी है तो मस्तिष्क को प्रतिदिन कुछ समय के लिए विश्राम देना होगा. हमें इस बात का प्रबंध करना होगा कि यह बात हमारे रोजमर्रा के कार्यों में शामिल हो जाए. इसके लिए हम कई प्रकार की ध्यान क्रियाओं एवं योग क्रियाओं का सहारा ले सकते हैं. प्रतिदिन की जाने वाली ध्यान एवं योग क्रियाएं व्यक्ति को जीवन में बड़े-बड़े उद्देश्यों को पूरा करने की ताकत दे सकती हैं. आज के व्यस्ततम जीवन चक्र में हमारे पास इनके लिए कोई वक्त ही नहीं है, क्योंकि हम सोचते हैं कि जब हमारे रोजमर्रा के कार्यों के लिए ही वक्त नहीं है तो इस नए उपक्रम के लिए वक्त कहां से आएगा. लेकिन जब हम अपने जीवन में कई कार्यों को कुशलता से नहीं कर पाते तो समय-प्रबंधन की बातें करते हैं. कम समय में अधिक से अधिक काम करने के लिए समय प्रबंधन से ज्यादा जरूरी है कि हम जो भी काम करें, उसे पूरे मनोयोग से करें. किसी भी कार्य को मन लगाकर करने के लिए आवश्यकता है समय प्रबंधन की, जिससे कि उस कार्य में शरीर के भौतिक इस्तेमाल के साथ ही साथ मस्तिष्क का भी पूरा इस्तेमाल हो, क्योंकि मनुष्य का मस्तिष्क ही सभी गतिविधियों का केन्द्र है. इसके बारे में चीन के शासक माओत्से तुंग के बाल्यकाल की एक घटना याद आती है.

माओत्से तुंग अपनी मां के पास रहा करता था. उसके घर पर फूलों की एक बगिया थी, जिसे उसकी मां सींचा करती थी और उसकी बगिया के पौधे सदैव हरे-भरे दिखाई देते थे. उसे अपनी बगिया से अगाध प्रेम था. कोई भी राहगीर उस बगिया को देखकर अनायास ही रुक जाता था और प्रशंसा के मोह से नहीं बच पाता था. एक बार उसकी मां बीमार पड़ गई और उसे बगिया की चिंता सताने लगी. जब माओत्से तुंग को इस बात का पता चला तो उससे मां की यह चिंता देखी नहीं गई और उसने बगिया का ख्याल रखने की हामी भर दी. मां कई दिनों तक बीमार रही. जब वह ठीक हुई तो उसने देखा कि बगिया कुम्हला गई है, न कोई फूल हैं और न ही किन्हीं पत्तों में जान है. उसने माओत्से तुंग को बुलाया और बहुत डांटा. उसने उससे पूछा कि जब वह दिन भर व्यस्त रहता था तो वह क्या करता था. तब उसने कहा कि मैं हर फूल, हर पत्ते को चूमा करता था, उन पर पड़ी धूल को अपने हाथों से साफ किया करता था. मां ने कहा, "मूर्ख, पौधों की जान फूलों और पत्तों में नहीं, वह तो जड़ों में होती है. अगर तुमने जड़ों को सींचा होता तो तुम्हें फूल और पत्तों

की चिंता करने की जरूरत नहीं पड़ती''. मां की डांट सुनकर माओ रो पड़ा. उसे अपनी गलती का अहसास भी हुआ.

जीवन भी इसी तरह है. यदि हम जीवन की आंतरिक शक्तियों को सींचें तो दुनिया की सारी मुश्किलों का आसानी से सामना किया जा सकता है. हमारा अस्तित्व जो है, वह आंतरिक है और जो बाहर है, वह उस अस्तित्व की अभिव्यक्ति है. जो बाहर को जीवन समझते हैं, वे जीवन को मृत्यु की तरह जीते हैं और हरदम समयाभाव, संसाधनों के अभाव, भौतिक सुख-सुविधाओं के अभाव आदि का रोना रोते रहते हैं.

स्वयं प्रबंधन के लिए सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि जीवन का उद्देश्य आनंद उठाना है. आनंद से आशय भौतिक सुख-सुविधाओं का उपभोग करना, मौज-मस्ती करना आदि नहीं है, बल्कि अपने सभी कार्यों या गतिविधियों को अंजाम देते समय उसमें ही तल्लीन हो जाना है, जिससे आप अपना सर्वश्रेष्ठ उसे प्रदान कर सकें. निश्चय ही ऐसा कर आप विस्मयकारी परिणाम प्राप्त कर सकते हैं. हमारा यह जीवन एक उत्सव है, इसलिए इसके प्रत्येक क्षण का आनंद उठाना ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए, क्योंकि हमें जीवन को जीने का मौका कल मिले या न मिले, इसे कोई नहीं जानता. जब हम जीवन को उत्सव का रूप देंगे, तभी हम जीवन को जैसा है, वैसा स्वीकार कर पाएंगे. हमारी उम्र कितनी भी हो, हमारे मन के किसी कोने में एक छोटा बच्चा जिंदा होना चाहिए, जो जीवन को निर्विकार दृष्टि से देख कर उसका आनंद उठा सके. इसके लिए आवश्यक है, अपने दृष्टिकोण एवं सोच में बदलाव लाना. क्योंकि जितना हम बदलते हैं, दुनिया उतनी ही बदलती जाती है. मशहूर वैज्ञानिक रेने डेस्कार्ट्स ने कहा है ''मैं हूं, क्योंकि मैं सोचता हूं''. हम जो सोचते हैं, वही हम बनते हैं. यदि हम जीवन में समय के अभाव के विषय में सोचते रहेंगे तो हमें समय कभी मिलेगा ही नहीं. ऐसे में आवश्यक है, स्वयं प्रबंधन द्वारा अपने जीवन के उद्देश्यों की प्राथमिकता का निर्धारण कर उनका नियोजन करना. नियोजन एक सोच है, आने वाले समय के समुचित इस्तेमाल की. नियोजन का एक महत्वपूर्ण पहलू है, दूरदृष्टि एवं उपयुक्त समय का चुनाव. विंस्टन चर्चिल ने कहा है, 'हमें आगे देखना चाहिए, जितना आगे हम देख सकते हैं. उससे भी आगे देखें तो यह मूर्खता होगी, क्योंकि तब यह सोच, सोच न रहकर सपना बन जाती है. सपने भी तभी साकार होते हैं, जब उनकी ओर सुनियोजित तरीके से बढ़ा जाए'.

समयाभाव के विषय में सोचकर जो जीता है, वह बोझिल मन से इस तरह जीता है, जैसे किसी ने तीर छोड़ने से पहले उसमें पत्थर बांध दिया हो. तीर को

जितना दूर जाना हो, उतना ही तीर में वजन कम होना चाहिए. इसी प्रकार, किसी कार्य निष्पादन में जितनी तीव्र गति, क्रियाशीलता एवं कुशलता चाहिए, उतना ही हलका एवं भारहीन मन भी होना चाहिए. जिसे जितना ऊंचा पहाड़ चढ़ना होता है, उसे उतना ही कम वज़न साथ में रखना होता है. सबसे बड़ा बोझ दुख और उदासी का है. जिसके पास यह होता है, उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो जीने की आरजू में लोग मरे जा रहे हैं. आज काफी लोग उदास और दुखी दिखाई देते हैं. उनके अतीत के बारे में पता लगाने से ऐसा पाया जाता है कि बहुत से लोगों के जीवन में विफलता का कारण ही यही है कि वे अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक नहीं कर पाते हैं.

कई लोगों को देखने पर लगता है कि वे कार्य के बोझ से ऐसे दबे जा रहे हैं, जैसे उनके सिर पर भारी बोझ रखा हुआ है. इस बोझ को नीचे फेंक कर प्रसन्नता का आह्वान करें और यह बता दें कि जीवन कैसा भी हो, उसमें भी खुशी अनुभव की जा सकती है और जिन्दगी गीत बनाई जा सकती है.

मनुष्य को जो शरीर प्राप्त हुआ है, यह पृथ्वी पर सबसे बड़ा चमत्कार है. आप जो भी खाते हैं, शरीर के अंदर की संरचना एवं क्रियाएं उसे पचा देती हैं एवं उसका एक भाग खून में बदल जाता है, जबकि अनावश्यक भाग विभिन्न क्रियाओं से बाहर निकल जाता है. यह एक अद्‌भुत क्रिया है. विश्व में इतना वैज्ञानिक विकास हुआ है, परंतु हम चाहे जितने वैज्ञानिक लगा दें, वे एक रोटी को पचाकर खून नहीं बना सकते. इस प्रकार, हमारी शारीरिक क्रियाएं चौबीसों घंटे चमत्कार ही करती हैं. जब इतना बड़ा चमत्कार चौबीसों घंटे हमारे साथ है तो उसके प्रति हमें कृतज्ञ होना चाहिए. क्या आपने अपने शरीर से कभी प्रेम किया है. कभी अपने हाथों को चूमा है. कभी अपनी आंखों से प्रेम किया है. कभी यह सोचा है कि क्या अद्‌भुत घटित हो रहा है. अपने शरीर के प्रति सबसे पहले कृतज्ञ हो जाइए. यह कृतज्ञता का भाव ही आपको स्वयं प्रबंधन की प्रेरणा देगा.

महेन्द्र एस. मड़के, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, पवई में सहायक प्रबंधक हैं.

सुलभा कोरे

विसंगतियों का प्रबंधन - कुशल नेतृत्व की पहचान

पिछले दिनों दूरदर्शन पर प्रसारित एक विज्ञापन लोगों द्वारा काफी सराहा गया. वह विज्ञापन था, रेनॉल्ड फायटर पेन का!

जिंदगी है तो ख्वाब है, ख्वाब है तो मंजिलें हैं.
मंजिले हैं तो फासले हैं, फासले हैं तो रास्ते हैं.
रास्ते हैं तो मुश्किलें हैं, मुश्किलें हैं तो हौसला है.
हौसला है तो भरोसा है, क्योंकि फाइटर हमेशा जीतता है.

यह विज्ञापन सही मायने में जिंदगी की जद्दोजहद और मानवीय प्रयासों को रेखांकित करते हुए जिंदगी के पूरे परिप्रेक्ष्य को सामने लाकर खड़ा करता है.

जिस तरह हम जिंदगी की बात करते हैं, ठीक उसी तरह संगठन की बात भी हम कर सकते हैं. जिस तरह जिंदगी का नेतृत्व हम, हमारा काम करता है, ठीक उसी तरह संगठन का नेतृत्व भी, उस संगठन का ऐसा एकाध व्यक्ति करता है, जिसे नेतृत्व में कुशलता हासिल है या यूं कहिए जिसका कुशल नेतृत्व उस संगठन का प्रबंधन करते हुए उसे प्रगति की राह पर अग्रसर करता है. यही व्यक्ति उस संगठन का लीडर होता है. अब जब हम लीडर और नेतृत्व की बात कर रहे हैं तो लीडर क्या होता है, इस बात को समझना भी उतना ही आवश्यक हो जाता है.

कौन होता है, लीडर?

लीडर किसी संगठन का मालिक नहीं होता. यदि कभी किसी स्थिति में वह उस संगठन का मालिक भी होता है, तब भी उसे इस बात का हमेशा एहसास होना

चाहिए कि वह सही मायने में इस संगठन का पहला नौकर है. इसलिए निरंतर कार्यशीलता, अपने संगठन के लिए अच्छे लोगों को प्राप्त करना, उनकी कुशलता, होशियारी के अनुसार उन्हें मौका देना, यदि वे काम अच्छी तरह व तरीके से करते हैं तो उन्हें प्रोत्साहन देना, आदि कार्य उसे करने होते हैं. लीडर की यह विशेषता होनी चाहिए कि उसकी टीम के साथ उसकी यात्रा (प्रगति, सफलता) की शुरुआत हो तथा उन्हीं पर खत्म हो!

''मैं राह चलने लगा था. कुछ देर बाद और लोग मेरे साथ चलने लगे. मैं उनका तहे दिल से शुक्रगुजार था कि वे मेरे साथ चल रहे हैं. मेरी यात्रा के वे हमसफर थे. इन लोगों ने मुझे कुछ न कुछ दिया. उनमें से हर एक व्यक्ति के व्यक्तित्व ने मेरे व्यक्तित्व में ऐसा कुछ जोड़ दिया कि मेरा व्यक्तित्व अधिक विकसित होता गया. 'हम एक साथ कुछ करेंगे', यह सोच लेकर चलनेवाले इसमें कम लोग थे, लेकिन वे सभी लोग मेरे लिए मूल्यवान थे. इस यात्रा में कुछ लोग ऐसे भी थे, जिन्होंने इस यात्रा का सही आनंद उठाना मुझे सिखाया. 'एक साथ चलो, खुशी मनाओ, प्यार करो और यात्रा का आनंद उठाओ', यह उनका कहना था. सफलता पाना उनका अंतिम ध्येय था और यह बात मैंने उनमें बो दी थी. सफलता पाने के लिए अनेक लोगों की सहायता आवश्यक होती है और यह सहायता इन लोगों से मुझे मिल रही थी.'' यह कहना किसी संस्था के सच्चे लीडर का हो सकता है, जो उसकी मानसिकता, सोच को स्पष्ट करता है.

संस्था का प्रबंधन करना और संस्था में कार्यरत लोगों का नेतृत्व करना, ये दो मुख्य बातें लेकर हम 'लीडर' या 'नेतृत्व' को परिभाषित कर सकते हैं.

आप सफल लीडर हो सकते हैं या आप कुशल, सफल नेतृत्व दे सकते हैं या नहीं, इस बारे में वैसे हम क्या जानते हैं? यह बात तभी साबित होगी, जब आप एक लीडर होने के बावजूद अन्य लोगों को आगे बढ़ने में मदद करते हैं. लीडर होने के नाते आपका अनुसरण करनेवाले भी अनेक लोग होंगे, लेकिन जिनमें लीडर बनने की क्षमता है उन्हें आगे बढ़ाना, आप स्वयं आगे बढ़ना और ऐसा काम करना, जो सबसे अलग-थलग हो, यह आपकी नेतृत्व क्षमता और लीडर होने की विशिष्टता है.

लीडर और नेतृत्व की पहचान तथा प्रबंधन

आइए, अब लीडर कौन हो सकता है, इस बारे में बात करें :

- लीडर विजन के जरिए हर बात को पहले देख सकता है, उसके अपने सपने

होते हैं या उसे सपने देखना आना चाहिए. साथ ही 'फोकस' निर्माण करने की उसमें क्षमता होनी चाहिए.

- लीडर में सिर्फ सपने देखने की क्षमता ही नहीं, बल्कि संप्रेषण के जरिए उन सपनों को दूसरों को समझाना आना चाहिए. 'तुम यह कर सकते हो', इस बात का दम अपने सहकर्मियों में फूंकने का माद्दा और क्षमता उसमें होनी चाहिए.
- अपने सहयोगियों को सही स्थिति में रखना या उनकी क्षमता के अनुसार उन्हें कार्यभार सौंपना उसे आना चाहिए. उसमें धीरज होना चाहिए.
- स्वयं की क्षमता को जानना, पहचानना और उसे बढ़ाना, विकसित करना भी उसे आना चाहिए.
- मानवीय संबंधों के जरिए स्वयं को विकसित करना.
- स्वयं के बारे में सकारात्मक सोच रखना.
- अपनी ही हानि के लिए जिम्मेदार बनने से बचना.

इसके साथ-साथ अच्छा लीडर होने के लिए यदि आप लोगों को अपने साथ आगे ले जा सकते हैं तो आप अच्छे लीडर साबित हो सकते हैं.आप में नेतृत्व गुण तथा नेतृत्व करने से संबंधित विशेषताएं होनी चाहिए. आप में धैर्य, साहसिक भूमिका होनी चाहिए. उसी के साथ 'आगे क्या हो सकता है?' इस बात को जानने, पहचानने की क्षमता भी आप में होनी चाहिए. वैसे नेतृत्व की शुरुआत घर से होती है. घर में आपकी पत्नी / पति होता है, आपके बच्चे होते हैं. बच्चे आपका अनुकरण करते हैं, परिवार आपकी ओर अपेक्षाओं से देखता है और एक लीडर के लिए सबसे बड़ी चुनौती वह खुद होता है. उसे अपना मुकाबला खुद करना होता है. स्वयं से होड़ होती है. उसी के साथ ही लीडर में यदि निम्नलिखित विशेषताएं होंगी तो वह एक अच्छा नेता साबित हो सकता है :

- लीडर जब सफल होने लगता है, तब उस पर लोगों का भरोसा भी बढ़ने लगता है. व्यक्तिगत सफलता के रहते समग्र सफलता की ओर बढ़ने का रास्ता अपने-आप प्रशस्त होता जाता है.
- अपने सहकर्मियों के साथ लीडर के संबंध परिवार सदस्य जैसे होने चाहिए. समूह या संगठन का कोई भी व्यक्ति हो, वह हमारा है, यह भावना पूरे संगठन में होनी चाहिए. साथ में यह भावना भी कि संस्था का प्रमुख किसी भी स्थिति में हमारे साथ है, यह बात सभी सहकर्मियों के मन में ठोस रूप से होनी चाहिए.

- किसी भी काम को अंजाम देने के लिए स्व-अनुशासन की आवश्यकता होती है. यदि व्यक्ति स्वयं अनुशासित नहीं होगा तो वह अन्य लोगों को अनुशासन में क्या रखेगा? वस्तुतः अनुशासन के बिना कोई भी संस्था सुचारू रूप से नहीं चल सकती.
- यदि आप किसी भी संस्था का नेतृत्व करते हैं तो आप में धीरज, संयम जैसे गुणधर्मों का होना आवश्यक है. कहा जाता है, जो दुनिया पर आक्रमण करना चाहता है, वह मूर्ख होता है. जबकि जो स्वयं पर जीत हासिल करता है, वह सयाना होता है.
- इन्सान वैसे तो अपनी जिम्मेदारियों को समझते हुए कार्य करता है, लेकिन औरों को भी जिम्मेदारियों का वहन करने के लिए प्रेरित करना, लीडर और नेतृत्व की जिम्मेदारी होती है.
- एक अच्छे लीडर में सहसंवेदना और धीरज से सुनने की क्षमता होनी चाहिए तथा समस्याओं को धैर्य से सुनकर उनका हल ढूंढने की कोशिश करनी चाहिए.
- पुराने लोगों का यह मानना है कि लीडर को लोगों से अंतरंगता नहीं बनानी चाहिए. लेकिन एक अच्छा लीडर नजदीकी भी रखता है और साथ में दूरी का एहसास दिलाये बिना कुछ अंतर भी कायम रखता है.
- अपने लोगों की क्षमताओं को जानने के साथ ही लोगों के शक्ति-स्थानों या गुणों का पता होना, एक अच्छे लीडर की विशिष्टता होती है.
- अपनी विशिष्टताओं व संभावनाओं को जानना और अपने जुनून के अनुसार सफलता को प्राप्त करना.
- हमारी सफलता या असफलता हमारे प्रयासों पर निर्भर करती है, अतः उसे अपने नियंत्रण में कर लेना, एक अच्छे लीडर की खासियत होती है.
- वास्तविकता का सामना करना : स्थितियां जैसे भी सामने आती हैं, उनका सामना करना सीखना होगा, क्योंकि उन स्थितियों पर जीत हासिल करने के बाद ही आगे बढ़ना हो सकता है.

- सभी के साथ सहृदयता, सहिष्णुता से पेश आना, सही नेतृत्व की विशिष्टता है.
- स्थितियों, समस्याओं का प्रबंधन करने के बजाय उनका नेतृत्व करना. जब भी लगे कि स्थितियां या समस्याएं आप पर हावी हो रही हैं, आप उन पर हावी हो जाइए.
- परिवर्तन हर स्थिति में आवश्यक होता है. एक लीडर को हर स्थिति में बदलाव के लिए तैयार होना चाहिए. परिवर्तन की आवश्यकता के अनुसार बदलने के बजाय भविष्य की स्थितियों के मद्देनजर पहले ही बदलना लीडर की दूरदृष्टि का परिचायक है.
- जहाँ प्रतिस्पर्धात्मक लाभ नहीं है, वहाँ अपनी सहभागिता न देना, लीडर की समझबूझ का परिचायक है.

लीडर कौन बन सकता है?

लीडर बनने की यात्रा बड़ी कठिन है. काफी तकलीफों, समस्याओं तथा मानसिक मजबूती की मांग करता है लीडर की तरफ बढ़नेवाला रास्ता. चोटी पर लीडर अकेला होता है और उसे हर बार चुनौतियों का सामना करना पड़ता है. जब कोई लीडर औरों से खुद को अलग साबित करने की कोशिश करता है और वह खुद क्या है, यह दिखाने की कोशिश करता है, तब उसे कड़े समय, परिवेश का मुकाबला करना पड़ता है.

समय जब कठिन और कड़ा होता है, तब जोखिम भी उठानी पड़ती है. किसी ध्येय को प्राप्त करना है तो वह जोखिम के साथ ही प्राप्त किया जा सकता है. यदि लीडर जोखिम नहीं उठा सकता तो कोई कार्य पूरा भी कर नहीं सकता. कठिन कार्य का समय यानी लीडर के लिए आंतरिक युद्ध का समय! एक लीडर के रूप में अनेक समस्याओं के अलावा अपने भीतर की समस्या ज्यादा अहम् होती है. जब कोई कठिन कार्य करना होता है, तब हो सकता है कि अपने ही लोगों का विरोध सहना पड़े, अपने ही लोगों के विरोध में निर्णय लेना पड़े, तब इस आंतरिक लड़ाई की शुरुआत हो जाती है. यह आंतरिक लड़ाई नेतृत्व की चमकती रोशनी से बहुत दूर अंधेरी सुरंग में अंदर ही अंदर चलती है. यहां आवाज नहीं, कोलाहल नहीं, बस शांति ही शांति! हर बार चीजें सही तरीके से हों, यह संभव नहीं और आसान भी नहीं. लेकिन यदि लीडर एकता या परिणाम चाहता है, तब सही करना आवश्यक होता है.

कभी-कभार, बाहरी लड़ाई भी करनी पड़ती है. लेकिन बाहरी लड़ाई लड़ने से पूर्व अंदर की लड़ाई पर जीत हासिल करना आवश्यक होता है. किसी मुद्दे पर सर्वप्रथम आपकी अपनी सहमति होना आवश्यक है. कोई भी निर्णय लेने से पूर्व लीडर को चाहिए कि वह सर्वप्रथम खुद को समझाने का प्रयास करे. खुद सहमत होने पर ही अब आगे क्या करना है, इस बारे में सोचा जा सकता है, क्योंकि एक बार निर्णय के पश्चात् उससे वापस लौटा नहीं जा सकता, न ही परिणामों की चिंता की जाती है.

किसी संगठन का नेतृत्व करते समय लीडर्स कठिन समय के बारे में हर बार शिकायत करते पाये जाते हैं. संस्था यदि अच्छी है, प्रगतिपथ पर अग्रसर है, तब कोई भी व्यक्ति लीडर बन सकता है. लेकिन जब स्थिति विपरीत है, तब अच्छे लीडर को चाहिए कि वह लोगों को दिशा दे, प्रगति हेतु उन्हें मार्गदर्शन दे, उन्हें सही-गलत का फर्क महसूस करा दें और आवश्यकता पड़ने पर कठोर निर्णय लेकर स्वयं को अन्य लीडरों से अलग साबित कर दे. छोटी-छोटी कठिनाइयों का सामना करना बड़ी कठिनाइयों का सामना करने के लिए तैयार करता है. एक सही लीडर वही होता है, जो चुनौतियों का सामना करने में विश्वास रखता है और हर बार सुरक्षित न खेलते हुए जोखिम भी उठाता है.

सही लीडर जब सही तरीके से, कुशलतापूर्वक नेतृत्व करता है, तब संस्था की प्रगति होना अनिवार्य है. संस्था की प्रगति और उन्नति तब सही मायने में हो सकती है, जब संस्था में मौजूद विसंगतियों का प्रबंधन, उस संस्था का लीडर उचित तरीके से तथा समय रहते करता है. उसके कुशल नेतृत्व की पहचान भी उसी से की जा सकती है. लेकिन विसंगतियों का प्रबंधन एक कुशल नेतृत्व किस तरह से करता है, यह जानने से पूर्व संस्था में मौजूद विसंगतियों के बारे में जानना जरूरी है.

विसंगतियां क्या होती हैं?

संस्था में विसंगतियों की शुरुआत अनेक कारणों से हो सकती है :

लोगों द्वारा एक दूसरे को पसंद न करना : संस्था में अनेक लोग कार्य करते हैं. इन सब लोगों की मानसिकता, आदतें अलग अलग होती हैं. कुछ लोग दूसरे लोगों को पसंद नहीं करते. इसके कारण भी अलग अलग हो सकते हैं. बताने के और वास्तविक कारण में भी अंतर हो सकता है. किसी को पसंद न करने के कारण भी विविधता से सामने आते हैं. किसी को किसी का व्यक्तित्व, बातचीत का ढंग, कार्य करने की पद्धति के साथ कभी कभार उठने-बैठने का ढंग भी पसंद नहीं आता.

एक दूसरे को प्रतिस्पर्धी के रूप में देखना भी एक दूसरे को पसंद न करने का कारण हो सकता है.

ऐसे में 'सराहना के दो शब्द' जादू का काम कर सकते हैं. नीति-नियमों के तहत कभी कभार नेतृत्व, अपने अच्छे कर्मचारी को भी कुछ सहूलियत या लाभ नहीं दे सकता. ऐसे में ये 'सराहना के दो शब्द' बड़ा काम करते हैं. अपने वरिष्ठों से सराहना, प्रशंसा न पाने के कारण लोग उस संगठन या संस्था को छोड़कर दूसरी संस्था में चले जाते हैं. सराहना, प्रशंसा वैसे सूर्य की किरणों जैसी होती है. जितनी अधिक सराहना दो, लोग आपकी तरफ ज्यादा बढ़ते जाते हैं. एक चुंबकीय आकर्षण जैसे! आपके मन की उदारता आपको सराहना, प्रशंसा करने के लिए प्रेरित करती है और ये मुफ्त सराहना जब नेतृत्व की ओर से संस्था के कर्मचारियों तक पहुंचती है, तब विसंगतियों को आसानी से दूर किया जा सकता है.

संस्था में विसंगतियां तथा उन्हें दूर करना :

- मतभेद : संस्था में अनेक लोग काम करते हैं. विभिन्न परिवेश, माहौल, आबोहवा में पले बढ़े और शिक्षित ये लोग काम करने के लिए या अपना कैरियर बनाने, कमाने के लिए एक संस्था में आते हैं, ऐसे में इन लोगों के बीच अपनी अलग सोच को लेकर मतभेद होना जायज है. यदि मतभेद होते हैं तो उन्हें समय रहते दूर करना, संस्था के लिए अत्यंत आवश्यक होता है, अन्यथा ये मतभेद संस्था में भयंकर पेचीदा स्थिति लाने के कारण बन सकते हैं. कुशल नेतृत्व इन मतभेदों को पहचानकर स्थिति को नियंत्रण में लाने की कोशिश करेगा.
- अंतर व्यक्तिगत संबंधों को बनाये रखना : हमारी जागृतावस्था का अधिकतर समय हमारी संस्था में ही गुजरता है. जिंदगी का महत्वपूर्ण सक्रिय हिस्सा भी हमारी संस्था में ही बीतता है. ऐसे में अंतर व्यक्तिगत संबंध काफी मायने रखते हैं. जिनके साथ हम जिंदगी का सबसे बड़ा हिस्सा गुजारते हैं, उन लोगों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखना और तदनुसार लोगों को प्रेरित करना, कुशल नेतृत्व का परिचायक है.
- संयम बरतना : संस्था के कर्मचारी अनेक व्यक्तिगत एवं संगठनागत समस्याओं को लेकर नेतृत्व के पास आते हैं. नेतृत्व के लिए भी यह हरदम संभव नहीं होता कि सबका समाधान उसके पास उपलब्ध हो, लेकिन आये हुए व्यक्ति को संयम के साथ पूरी तरह से सुनना, काफी मायने रखता है.

- लोगों की भावनाओं की कद्र न करना : भावनाओं के बगैर हम व्यक्ति के बारे में सोच नहीं सकते. यदि भावनाएं नहीं होंगी तो इन्सान इन्सान नहीं कहलाएगा. काम करते समय व्यक्ति कभी कभार भावुक हो जाता है, ऐसे में उसकी भावनाओं को न समझकर उससे कठोरता या गैर संवेदनात्मक रवैये से पेश आना, संस्थागत विसंगतियां पैदा कर सकता है.
- तुनकमिजाजी होना : नेतृत्व के लिए संयत और संतुलित रहना बड़ा मायने रखता है. 'इस शख्स का मूड कभी भी बदल सकता है', कर्मचारियों द्वारा इस तरह की टिप्पणी नेतृत्व के लिए अच्छी नहीं है. अतः स्थिति कोई, कैसी भी हो, संयत और संतुलित रहना, नेतृत्व की विशिष्टता को दर्शाता है.
- मानवी कमजोरियों को न समझना : इन्सान में अनेक गुण तथा विशिष्टताएं होती हैं तथा उसकी कुछ कमजोरियां भी होती हैं. उन कमजोरियों के होते वह कभी-कभार गलतियां भी करता है. ऐसे में उन गलतियों को समझना, हो सके तो नजरअंदाज करना या फिर एहसास दिलाने के साथ समझाना, कुशल नेतृत्व को प्रतिबिंबित करता है.
- गलती के लिए माफ न करना : "जो काम करता है, वही गलतियां करता है", ठीक उसी तरह संस्था में काम करनेवाले लोगों से गलतियां भी हो सकती हैं. गलतियां, फिर वह व्यवहार में हों या काम में, कुशल नेतृत्व को उसे माफ करना आना चाहिए.
- कार्य योजना न बनाना : किसी भी काम को पूरा करने के लिए योजना बनाना आवश्यक होता है. किसी भी मामले में स्पष्ट नजरिया होना कुशल नेतृत्व की विशिष्टता को दर्ज करता है. संस्था के काम को अंजाम देने के लिए कुशल नेतृत्व के पास निम्नलिखित कार्यप्रणाली होनी चाहिए :

➢ कार्य को पूरा करने के लिए करारनामा तैयार करना : इस करारनामे के जरिए कार्य की रूपरेखा, ढांचा स्पष्ट किया जाएगा. उसमें कौन-कौन सहभागिता करेगा, इस बारे में भी बताया जाएगा.

➢ कार्य को किस तरह से पूरा किया जाना है, इस बारे में मार्गदर्शी सिद्धांत भी दिये जाएंगे.

➢ कार्य को पूरा करने के लिए निर्धारित समय-सीमा क्या है या फिर कार्य को अंजाम देने के लिए कौन, किस तरह से जिम्मेदार है, इसकी पूरी जानकारी भी दी जाएगी.

- कार्य को अंजाम देने की अंतिम तिथि की जानकारी उस कार्ययोजना में होनी चाहिए.
- कार्य को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध लोगों की जानकारी भी कार्ययोजना में दी जाए.

संक्षेप में, कार्ययोजना बनाकर उसे तदनुसार पूरा करना, कुशल नेतृत्व का परिचायक है. जबकि ऐसी कार्ययोजना न बनाना, विसंगतियों का सही प्रबंधन न होने की स्थिति का परिचायक है.

कोई भी संस्था उसमें कार्यरत लोगों के परस्पर विश्वास तथा भरोसे पर चलती है. यह विश्वास और भरोसा ही संस्था को चलाता है तथा उसे प्रगति की राह पर ले जाता है. संस्था में कार्यरत लोगों को यह विश्वास होना चाहिए कि किसी भी स्थिति में नेतृत्व उनका समर्थन कर रहा है तथा आवश्यकता पड़ने पर एक अडिग साथी की तरह वह उनके पीछे होगा. नेतृत्व को भी यह भरोसा होना आवश्यक होता है कि जब जरूरत पड़ेगी, उसके सहकर्मी उसके साथ हैं. यह विश्वास पैदा करना ही कुशल नेतृत्व का महत्वपूर्ण काम होता है.

कुल मिलाकर एक कुशल नेतृत्व, नेतृत्व तो करता ही है, उसके साथ ही नेतृत्व की विपरीतता को झेलने के साथ धैर्य की अदम्यता तथा भविष्य के प्रति विश्वास को भी आपके सामने खड़ा करता है. साथ ही, हर बात का दृढ़ता के साथ मुकाबला करना, परिवर्तन को अपनाना, भविष्य को जान पहचानकर तदनुरूप कार्यप्रणाली तैयार करना, साहसिक निर्णय लेना, प्राप्त जानकारी का सही उपयोग करना, स्वयं तथा संस्था के हर एक व्यक्ति का सशक्तीकरण करना, विश्वास प्राप्त करना तथा नियमों में परिवर्तन करने का लचीलापन जैसे पाठ अपनाने होते हैं. हालांकि किसी भी विसंगति का प्रबंधन आसान बात नहीं होती, लेकिन जैसा कि हमने शुरू में कहा था, "... फाइटर कभी नहीं हारता", ठीक उसी तरह कुशल नेतृत्व अपनी कुशलता का परिचय देते हुए विसंगतियों का प्रबंधन करता है.

सुलभा कोरे, यूनियन बैंक की गृह पत्रिका ''यूनियन धारा'' की संपादक हैं.

ए.वी. कृष्ण कुमार

कर्मचारी ब्रांडिंग-नई दृष्टि

अपनी हवाई यात्रा के लिए आप टिकट बुक कर रहे हैं. आप एयरलाइन का चुनाव कर रहे हैं, यदि आप अन्य हवाई कम्पनियों की तुलना में किसी विशेष एयरलाइन का चयन करते हैं तो उसके क्या आधार हैं? क्या आप उस हवाई कम्पनी का चयन करेंगे जो आपको बैगेज भत्ते का पूरा लाभ देती है? क्या सुरक्षा मानदंड का महत्व है? अथवा सिर्फ आंखों को प्रभावित करने वाली स्टीवार्ड्स को पंसद करेंगे? अपने वर्तमान एवं भावी ग्राहकों पर निश्चित प्रभाव सुनिश्चित करने के लिए, जो उनके भविष्य की खरीददारी संबंधित निर्णयों को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं. यद्यपि विशेषज्ञों के अनुसार आज के इस कठिन परिदृश्य में, कम्पनी की ब्रांड छवि को बनाये रखने के लिए आंतरिक दृष्टिकोण से कर्मचारियों को विभिन्न भूमिकाओं के माध्यम से ब्रांड एम्बैसेडर के रूप में कार्य करने की अनुमति दी जानी चाहिए, ताकि वे स्वयं को सफल जीवंत "कर्मचारी ब्रांड" के रूप में साबित करके अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें.

सबसे पहले यह जान लें कि ब्रांड पहचान तथा कर्मचारी ब्रांड क्या होता है.

आमतौर पर "ब्रांड पहचान" शब्द का प्रयोग यह बताने के लिए किया जाता है कि ग्राहक किसी ब्रांड को उसके लोगो, पैकेजिंग, आकृति आदि के माध्यम से किस प्रकार पहचानते हैं. जब ग्राहक अपनी धारणा बनाने अथवा दूसरे को अपनी धारणा बताने के लिए ब्रांड की पहचान का प्रयोग करते हैं तो स्वतः ब्रांड सम्पर्क विद्यमान होता है. कर्मचारियों द्वारा अपनी संस्था के साथ स्थापित किया गया स्वतः सम्पर्क ही कर्मचारी ब्रांडिंग है.

मिंशिंगटन (2005) ने कर्मचारी ब्रांडिंग की परिभाषा "कर्मचारियों द्वारा अपने व्यवहार, आचरण एवं कृत्यों द्वारा प्रदर्शित की गई छवि" के रूप में की है. यह छवि

नियोजक की ब्रांड छवि के प्रति कर्मचारियों के रुझान एवं जुड़ाव के द्वारा संगठन की प्रचारित संस्कृति पर प्रभाव के द्वारा प्रदर्शित होती है. कर्मचारी ब्रांडिंग का प्रभाव वर्तमान एवं भावी कर्मचारियों को प्रस्तावित किये गये रोजगार अनुभव की अवधारणा पर पड़ता है.

कर्मचारी ब्रांडिंग के क्षेत्र में किये गये अनुसंधान से नियोजक ब्रांड तथा कर्मचारी ब्रांड की स्पष्ट परिभाषा तथा अन्तर की प्राप्ति हुई है. इस शब्द की स्पष्ट व्याख्या माइल्स तथा मैनगोल्ड द्वारा 2004 में की गई है, जब उन्होंने कर्मचारी ब्रांडिंग अवधारणा को समझने के लिए एक परिभाषा तथा ढांचा प्रस्तुत किया. यह लेख Journal of Relationship Marketing, Vol. 3 (2/3), पृष्ठ 65-87 द्वारा प्रकाशित किया गया. इस लेख में, कर्मचारी ब्रांडिंग को "कर्मचारी द्वारा उस प्रक्रिया के रूप में, जिसके द्वारा कर्मचारी वांछित ब्रांड छवि को आत्मसात् करते हैं तथा ग्राहकों तथा अन्य सहयोगी संगठनों के समक्ष छवि को प्रदर्शित करने के लिए अभिप्रेरित होते हैं", के रूप में परिभाषित किया गया है.

हाल के दिनों में, माइल्स एवं मैनगोल्ड ने कर्मचारी ब्रांडिंग और कर्मचारी ब्रांड शब्द में अंतर को पुनः स्पष्ट किया है. Business Horizons (2007), 50, पृष्ठ 423-433, employee में प्रकाशित लेख के अनुसार ब्रांड वह छवि है, जो संगठन के ग्राहकों एवं संगठन के सहयोगियों के समक्ष प्रस्तुत की जाती है. यह छवि सकारात्मक अथवा नकारात्मक हो सकती है तथा संभव है कि हमेशा वैसी छवि प्रतिबिम्बित न हो सके, जैसा कि संगठन की अपेक्षा है.

कर्मचारी ब्रांडिंग एक अप्रत्यक्ष ब्रांडिंग प्रभाव है, जिसमें कम्पनी के कर्मचारियों का संप्रेषण कम्पनी के नियोजक ब्रांड के चरित्र को दर्शाता है. इस शब्द का आशय कम्पनी के कर्मचारियों का उनके नियोजक की छवि एवं नियोजक ब्रांड पर प्रभाव से भी है, जिसे वे अपने कार्यस्थल पर जोर से व्यक्त करते रहते हैं.

नियोजक बनाम कर्मचारी की ब्रांडिंग

कभी-कभी दोनों शब्दों के मध्य अन्तर अप्रासंगिक हो जाता है; इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता है. किन्तु कर्मचारी ब्रांडिंग तथा नियोजक ब्रांडिंग के बीच अन्तर में ऐसा नहीं है. सिर्फ एक अक्षर का हेरफेर तथा संगठन के फोकस में परिवर्तन से भारी अन्तर पड़ता है.

नियोजक ब्रांडिंग का अर्थ एक महत्वपूर्ण स्थान बनाने से है. किसी संगठन को कार्य योग्य स्थान बनाने के लिए उसकी प्रतिष्ठा अथवा चरित्र स्थापना की प्रथा

है, प्रारंभ में संबद्ध करके, भर्ती करके और "ब्रांड" के द्वारा पहचान प्रतिष्ठित करके, बाहरी मानव संसाधन प्रक्रिया के द्वारा, जिसकी अपेक्षा कम्पनी को रहती है. इसके पीछे भावना यह है कि ऐसा भाव उत्पन्न किया जाए कि यहां ऐसी क्या विशेषता है कि यहां कार्य किया जाये, जिसके माध्यम से न केवल संभावित कर्मचारियों को आकर्षित किया जाये, वरन यह भी कि ऐसे कर्मचारी विशेष रूप से चुने जाएं, जो संगठन के लिए उपयुक्त हों.

नियोजक ब्रांडिंग एक समझदार प्रथा है. कहा जाता है कि अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए सही लोग मिलना कितना कठिन है तो संभवतः यह अपरिहार्य भी है. जब कोई संगठन सही कर्मचारियों को आकर्षित करता है तो इन नये कर्मचारियों का चयन करने, समाहित करने तथा उन्हें प्रशिक्षित करने की लागत घट जाती है.

यह कार्य करने की अच्छी प्रमाणित प्रथा है, जिससे अपने संगठन को कार्य योग्य स्थान बनाने के लिए सही दृष्टिकोण का सृजन होता है. आदर्श रूप में यह निरूपण अथवा नियोजक ब्रांड उस तत्व के समुचित निकट होगा, जो एक संगठन में कार्य करने के लिए आवश्यक होता है. यदि नहीं तो आप, एक व्यापक आम प्रतिष्ठा युक्त संगठन, एक बड़े तकनीकी प्रतिष्ठा एवं प्रगतिमान कम और सकारात्मक प्रतिष्ठा युक्त कार्यस्थल के रूप में पहचाने जायेंगे और आप, ऐसे संगठन के रूप में जाने जायेंगे, जहां कर्मचारियों ने इस विचार के साथ कार्य ग्रहण किया था कि वे एक अलग तरह के कार्य स्थल पर कार्य करने के लिए आये थे. नियोजक ब्रांडिंग का अर्थ इस अवधारणा से है, जहां नियोजक सही कर्मचारियों का चयन करते हैं.

कर्मचारी ब्रांडिंग एक बिल्कुल भिन्न प्रक्रिया है. यह संगठन के सदस्यों के व्यवहार को प्रभावित करने के संबंध में है. कर्मचारी ब्रांडिंग, कर्मचारी के व्यवहार और प्रायः उस छवि के संबंध में कर्मचारी के दृष्टिकोण को, जो संगठन अपने ग्राहकों एवं आन्तरिक हितधारकों में प्रचारित करना चाहता है, को सुव्यवस्थित करने की प्रथा है. कर्मचारी ब्रांडिंग में संगठनात्मक ब्रांड - संगठन जो विशिष्टताएं एवं गुण संगठन स्वयं के बारे में प्रदर्शित करना चाहता है तथा कर्मचारियों को प्रभावित करना चाहता है, शामिल हैं.

"ब्रांड पर" व्यवहार सृजन करने की विधि ही कर्मचारी ब्रांडिंग है, वह व्यवहार जो संगठन के उन गुणों को व्यक्त करता है, प्रस्तुत करता है तथा निष्पादित करता है, जिसे वह अपनी ख्याति या ब्रांड के रूप में चाहता है. यह संगठन के भीतर कर्मचारियों के व्यवहार के साथ साथ कर्मचारियों तथा बाहरी हितधारकों के मध्य व्यवहार को भी प्रभावित करता है. तात्पर्य यह है कि एक संगठन अपने कर्मचारियों

द्वारा प्रदर्शित गुणों के आधार पर अपने उन गुणों का दावा कर सकता है, जिसकी उसे अपेक्षा है.

कर्मचारी ब्रांड निर्माण में अन्य बातों के साथ-साथ सदाशयता, उत्तरदायित्व, भरोसा, सहयोग एवं समानुभूति शामिल हैं. ऐसे व्यवहार सेवा गुणवत्ता के बारे में ग्राहक की अवधारणा में सहायक हो सकते हैं तथा इससे अधिक संख्या में ग्राहकों को रोकने तथा उनका विश्वास जीतने में सहायता मिलती है.

कर्मचारी ब्रांडिंग में नियमित कार्य प्रशिक्षण, ग्राहक सेवा में प्रशिक्षण अथवा ग्राहक संपर्क कारपोरेट अभिमुखीकरण तथा कारपोरेट ब्रांड में शिक्षा शामिल है. भलीभांति विकसित कर्मचारी ब्रांडिंग कार्यक्रम में अनवरत प्रशिक्षण, कार्यनिष्पादन मूल्यांकन तथा पुरस्कार प्रणाली भी शामिल है, जिससे कर्मचारियों के "ब्रांड पर" व्यवहार प्रदर्शन में सहायता मिलती है.

कर्मचारी ब्रांडिंग कार्यक्रम का इरादा सदैव एक ही रहा है - आने वाले तथा जाने वाले कर्मचारी का व्यवहार प्रदर्शन, निष्पादन, "ब्रांड" के अनुरूप होना. किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने के कई तरीके हैं. संगठन अपने कर्मचारियों को उनके व्यवहार पर कुछ अपेक्षाओं का अनुपालन करने के लिए कह सकते हैं तथा उन्हें उन अपेक्षित गुणों को आत्मसात् करने का प्रशिक्षण दे सकते हैं अथवा इसके बारे में शिक्षित कर सकते हैं, ताकि यह गुण कर्मचारी के आचरण में इस प्रकार परिलक्षित हो सकें, जैसेकि वे उनके अपने गुण हैं.

आगे जैसे-जैसे "कार्य" शारीरिक श्रम से बौद्धिक एवं भावनात्मक श्रम की ओर बढ़ता है, संगठनात्मक प्रणाली अधिकाधिक अनुपालन अभिमुखीकरण से आन्तरिकीकरण अभिमुखीकरण की ओर बढ़ती है. आमतौर पर ऐसा माना जाता है कि अनुपालन की अपेक्षा अधिक होती है (संगठन के दृष्टिकोण से), क्योंकि संगठन को पर्यवेक्षण की चिंता कम होती है. और, जब गुणों को आत्मसात् कर लिया जाता है, वे नियोजक के व्यवहार से व्यक्त होते हैं, जिसके लिए संगठन तथा कर्मचारी दोनों को कम प्रयास करने पड़ते हैं.

कभी-कभी, व्यवहार को प्रभावित करना ही पर्याप्त नहीं होता है और संगठन द्वारा अपेक्षा की जाती है कि कर्मचारी संगठन के दृष्टिकोण से सोचे. वे सिर्फ "ब्रांड पर" व्यवहार में नहीं, वरन "ब्रांड पर" सोच पर भी चाहते हैं. संगठन "ब्रांड पर" सोच कर्मचारियों को संगठन की प्राथमिकताओं एवं उनके मूल्यों को अपना मूल्य समझने की शिक्षा दे कर प्राप्त करते हैं. कुछ संगठन कर्मचारियों को कहते हैं कि

वे ऐसी भावना विकसित करें कि जैसे वे ही संगठन हैं (वैसे ही गुणों के द्वारा). संगठन के साथ ऐसी पहचान इस सीमा को तोड़ देती है कि "संगठन कौन है" और "मैं कौन हूं". यह पूछने के बजाय कि "संगठन के लिए क्या अच्छा है"? कर्मचारी यह पूछना सीखते हैं, "हमारे लिए क्या अच्छा है"? इस प्रकार, कर्मचारी स्वतः संगठन के हित के बारे में पहले सोचते हैं.

संगठन के साथ स्वयं की यह पहचान अथवा संगठन के मूल्यों का व्यक्ति पर पड़ने वाला प्रभाव, उस दशा में उचित हो सकता है, जब संगठन एवं कर्मचारी दोनों के हित एक दूसरे के पूरक तथा आपस में जुड़े हुए हों. किन्तु प्रायः व्यक्ति एवं संस्था में उतना जुड़ाव नहीं होता है, जैसा कि लोग समझते हैं.

"ब्रांड" के लिए व्यवहार महत्वपूर्ण है और कर्मचारी ब्रांडिंग से इसे प्राप्त करने में सहायता मिल सकती है. कर्मचारी ब्रांडिंग, समभाव में, समाजीकरण एवं प्रशिक्षण का एक प्रभावशाली भाग है. लेकिन कर्मचारी ब्रांडिंग की अधिकता से शोषण की स्थिति उत्पन्न होती है.

एक कर्मचारी से दूसरे कर्मचारी में ब्रांड पहचान प्रदर्शित किये जाने से पहले, संगठन द्वारा कर्मचारी के मस्तिष्क में एक ब्रांड संदेश का प्रवेश कराया जाना चाहिए (माइल्स एंड मैनगोल्ड, 2004). इसलिए, कर्मचारी ब्रांडिंग का पहला कदम प्रत्येक कर्मचारी को ब्रांड के बारे में बताना है. पारंपरिक रूप से, ब्रांड पहचान तथा डिजाइन, विज्ञापन, संवर्द्धन एवं पैकेजिंग के बारे में विपणन निर्णयों के माध्यम से इसे कैसे संप्रेषित किया जाये, के लिए कर्मचारियों के लिए तैयार किये गये कार्यक्रम से इसको समझने में मदद मिलती है. ये प्रशिक्षण कार्यक्रम कर्मचारी तथा ब्रांड के मध्य एक अन्तर रखते हैं तथा ब्रांड को कर्मचारियों के प्रयासों के लक्ष्य के रूप में मानते हैं. इसके विपरीत, कर्मचारी ब्रांडिंग कार्यक्रम कर्मचारियों को इस प्रकार प्रशिक्षित करते हैं कि वे स्वयं को ब्रांड से जुड़ा हुआ अनुभव करते हैं तथा स्वयं को अपना तथा अपने संगठन के ब्रांडिंग प्रयासों का लक्ष्य मानते हैं.

कर्मचारी ब्रांडिंग कार्यक्रम में चार आधारभूत तरीके अपनाये जाते हैं : (1) कर्मचारियों को ब्रांड के बारे में शिक्षा देना, (2) उनको इस बात की शिक्षा देना कि वे अपने व्यवहार के द्वारा ब्रांड का प्रतिनिधित्व किस प्रकार करें, (3) स्वयं को इस बात का अवसर देना कि वे ब्रांड का प्रतिनिधित्व कर सकें, (4) लगातार कर्मचारी ब्रांड गुणों को अपनी पहचान के साथ जोड़ कर रखें. प्रथम दो तरीके ब्रांड के साथ कर्मचारी के व्यवहार संबंधी सम्पर्क को विकसित करते हैं और कर्मचारी ब्रांडिंग तथा ब्रांड

प्रशिक्षण के पहले के तरीके में केवल यह अन्तर है कि यह प्रशिक्षण प्रत्येक कर्मचारी को प्राप्त होता है. अन्तिम दो तरीके ब्रांड के साथ हस्तांतरण के अर्थ के विपणन तर्क का उपयोग करके कर्मचारी के मनोवैज्ञानिक सम्पर्क को विकसित करते हैं.

यहां घटक के अनुसार बताया गया है कि कठिन समय में भी कर्मचारी किस प्रकार कर्मचारी ब्रांडिंग के माध्यम से लाभान्वित हो सकते हैं: (I) संभावित कार्य की तलाश करने वाले ऐसे संगठनों को आदर्श नियोजक के रूप में देखते हैं जो चैम्पियन का निर्माण करने में सक्षम हैं. ऐसी कम्पनी के साथ जुड़ कर क्या आप गर्व का अनुभव नहीं करेंगे? (II) एक कर्मचारी संगठन से अलग होकर बाहर सफल हो कर अप्रत्यक्ष रूप से पिछली कम्पनी की ब्रांड वैल्यू बढ़ाता है, ऐसे लोग सदा ब्रांड एम्बैसेडर के रूप में बने रहते हैं, जिसमें उन्हें गर्व होता है और (III) इससे आपके बाजार मूल्य में भी वृद्धि होती है.

कर्मचारी ब्रांडिंग प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल कर्मचारी कम्पनी के लिए आस्ति होते हैं, क्योंकि वे इसके लिए काम करने वाले मात्र एक कर्मचारी नहीं होते हैं, वरन इसकी प्रगति में सहयोगी भी होते हैं. कर्मचारी ब्रांड का विकास कर्मचारियों द्वारा संगठन की ब्रांड छवि को आत्मसात करने तथा ग्राहकों एवं अन्य सहयोगी संगठनों में छवि को प्रदर्शित करने की इच्छा की तीव्रता पर निर्भर करता है. वांछित ब्रांड छवि का आत्मसातीकरण उस समय सर्वश्रेष्ठ होता है, जब कर्मचारी उस संगठन के बारे में अधिकतम विश्वास का अनुभव करता है, जिसमें वह कार्य करता है. जिस संगठन के लिए कर्मचारी कार्य करता है, उसके लिए उच्च स्तर का विश्वास अर्जित करने के संबंध में उसकी मनोवैज्ञानिक संविदा की पूर्ति की प्रक्रिया संवेदनशील है. जब कर्मचारी यह संकल्पना करते हैं कि संगठन ने उनके साथ किया गया वादा भंग कर दिया है, तो उनके मन में प्रश्न उठता है कि क्या वह ग्राहकों से किया गया अपना वादा पूरा करेगा. परिणामस्वरूप, कर्मचारी ग्राहकों के साथ ऐसा कोई भी वादा करने के प्रति उदासीन रहेंगे, जिसे पूरा न किया जा सके. ऐसा होने पर, विश्वास भंग हो जाता है, ब्रांड छवि के साथ किसी न किसी रूप में समझौता किया जाता है तथा कर्मचारी अपेक्षित ग्राहक सेवा प्रदान करने में चूक कर सकते हैं.

दूसरी ओर, यदि कर्मचारियों को लगता है कि उनके साथ मनोवैज्ञानिक संविदा को कायम रखा गया है तो संभावना है कि वे संगठन को वादा निभाने वाले संगठन के रूप में देखें. ऐसी परिस्थिति में, कर्मचारी एक सकारात्मक ब्रांड छवि प्रदर्शित करके तथा उच्च स्तरीय ग्राहक सेवा प्रदान करके संगठन की अपेक्षाओं को पूरा करने का प्रयास करेंगे.

कर्मचारी टर्नओवर का पैमाना संगठन की मानव संसाधन प्रणाली है तथा ग्राहक रोक का आकलन संगठन की विपणन सूचना प्रणाली से किया जा सकता है. इसके अतिरिक्त, कर्मचारी तथा ग्राहक संतोष एवं सेवा गुणवत्ता के संबंध में ग्राहक की अवधारणा को मापने के लिए विशिष्ट रूप से वैध पैमाने उपलब्ध हैं. यदि कर्मचारी की अवधारणा तथा रुझान में परिवर्तन को तुरंत पहचानने में प्रबंधक सक्षम नहीं हो सकते हैं, वे आम तौर पर कर्मचारी के व्यवहार, जिससे कर्मचारी की अवधारणा तथा रुझान का अंदाज लग जाता है, पर नजर रख सकते हैं. कर्मचारी के व्यवहार को औपचारिक या अनौपचारिक रूप से परखा जा सकता है.

जब ग्राहक संतुष्टि जैसा एक संकेतक मिलता है तो इसके कारणों की छानबीन से एक अतिरिक्त अनुसंधान आवश्यक हो जाता है. उदाहरण के लिए ऐसे बैंक जहां से बड़ी संख्या में ग्राहक जाते हैं, कभी-कभी ग्राहकों के जाने के कारणों की तलाश के लिए कर्मचारी वातावरण का सर्वेक्षण कराते हैं. संगठन के मामलों पर ध्यान देते हुए, जैसे ग्राहक की आवश्यकता एवं पसंद के प्रति कर्मचारियों का ध्यान खींचना आदि पर बल दिया जाता है. बहुत से मामलों में, मानव संसाधन प्रबंधन प्रणाली समस्या समाधान प्रक्रिया को शुरू करने के लिए उपयुक्त बिन्दु है और जब कर्मचारी सफल **"कर्मचारी ब्रांड"** निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं तो संगठन बाहरी संसाधनों पर होने वाले खर्च से बच सकता है.

ए.वी. कृष्ण कुमार, स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय) हैं.

के.एस. वेंकटेश

अभिप्रेरित करने की कला

इस संसार में सिर्फ एक रहस्य है, जिससे हम दूसरों से काम करवा सकते हैं और वह रहस्य है उस व्यक्ति में काम करने की इच्छा पैदा करना.

आम आदमी नीचे दी गई वस्तुओं से प्रबलता से आकर्षित होता है, जिन्हें पाने की इच्छा वह रखता है :

1. स्वास्थ्य और जीवन का संरक्षण
2. भोजन
3. नींद
4. परलोक सुधारना
5. बच्चों का कल्याण
6. शारीरिक आवश्यकताएं
7. पैसा एवं पैसों से क्रय की जाने वाली वस्तुएं
8. महत्व की भावना

उपर्युक्त सभी इच्छाएं साधारणतया पूर्ण हो जाती हैं. एक इच्छा जो इन सब से प्रबल होती है वह है महान बनने की इच्छा, अपने आपको महत्वपूर्ण साबित करने की इच्छा. हर एक व्यक्ति को अपनी प्रशंसा अच्छी लगती है. हर एक की दिली ख्वाहिश होती है कि उसकी सराहना की जाए. यह प्रत्येक व्यक्ति की ऐसी "भूख" है, जो स्थायी है. जो व्यक्ति, लोगों की इस "भूख" को शांत करता है, वह उन्हें अपने वश में कर सकता है. इन्सानों और जानवरों में यही अंतर है कि इन्सानों में महत्वपूर्ण बनने की इच्छा होती है. अगर इन्सानों के पूर्वज ऐसी इच्छा नहीं

रखते तो आज भी हम असभ्य ही रहते तथा सभ्यता का विकास संभव नहीं हो पाता.

आज की दुनिया में सच्ची तारीफ दुर्लभ हो गई है. लोग सिर्फ चापलूसी करने को तारीफ समझते हैं. हम अच्छे अंक लाने पर अपने पुत्र या पुत्री की प्रशंसा करना अक्सर भूल जाते हैं. बच्चा अगर पहली बार अपनी तरफ से कुछ नया करता है तो उसे अपने माता-पिता की प्रशंसा से जो आनंद मिलता है, उससे अधिक किसी और चीज़ में नहीं मिलता है.

अक्सर ऐसा सुना जाता है फलां अधिकारी बहुत क्रूर है, खडूस है अथवा पिछ-लग्गू है. दरअसल अधिकारी को अपने कर्मचारियों पर नियंत्रण रखना पड़ता है. यदि वह सबको मनमानी करने दे तो अव्यवस्था फैल जाएगी. विभाग का कामकाज सुचारू रूप से नहीं चल पाएगा.

एक सरकारी विभाग में एक अधिकारी बड़ा ही अच्छा इन्सान था. सब का दु:ख-दर्द सुनता और उचित सलाह देते हुए उसके अधिकार-क्षेत्र के तहत् समस्या का निदान करने का भी प्रयत्न करता. उसके एक मातहत कर्मचारी की एक व्यक्तिगत समस्या को सुलझाने के लिये उसने उसे रोज़ाना एक घंटा देर से आने की छूट दी. इस शर्त पर कि मध्यावकाश पर जब सब भोजन करें तो वह बैठकर काम करे. इस तरह वह कर्मचारी पारिवारिक जिम्मेदारी को निभाते हुए दफ्तर का काम भी मुस्तैदी से करने लगा.

कुछ दिन तक तो सब ठीक चला. बाद में वह कर्मचारी लापरवाही बरतने लगा. वह साढ़े दस बजे आता, लेकिन मध्यावकाश पर गप्पें मारने लगता. फिर उसने 11 बजे आना शुरू किया तथा अधिकारी की सहानुभूति का लाभ उठाते हुए कभी-कभी बिना सूचना के घर बैठने लगा. इस कर्मचारी को इतनी छूट मिलते देख अन्य कर्मचारी भी ऐसा चाहने लगे, जिससे दफ्तर का अनुशासन बिगड़ने लगा. फलस्वरूप अधिकारी को सख्ती बरतते हुए उस कर्मचारी को समय पर आने की हिदायत देनी पड़ी तथा निर्देश दिया गया कि वह कभी बिना सूचना के अनुपस्थित नहीं रहेगा. इस तरह उस कर्मचारी ने छूट का नाजायज़ लाभ उठाकर अपने को मिली सुविधा को खो दिया.

हर पद के साथ कुछ जिम्मेदारियां, कर्तव्य व अधिकार जुड़े होते हैं तथा कोई भी सर्वोच्च नहीं होता. अधीनस्थों के मध्य जो अधिकारी हैं, वही अपने वरिष्ठों के सामने अधीनस्थ. यदि आपका अधिकारी आपकी समस्या को सुने तो मातहत को भी

अपनी सीमा को समझना चाहिए. ऐसा न हो कि समस्या को सुलझाते हुए वह सहृदय अधिकारी स्वयं किसी समस्या में उलझ जाए.अगर आपको समझदार अधिकारी मिला है तो उसकी छूट का नाजायज फायदा न उठाएं, अन्यथा जायज लाभ भी नहीं उठा पाएंगे.

अपनी कार्य कुशलता को बनाने रखना चाहिये. यह नौकरी-पेशा लोगों के लिये ही जरूरी नहीं है, वरन् हर एक पेशे के व्यक्तियों के लिये, मसलन व्यापारियों, गृहिणियों, कारीगरों आदि के लिये भी आवश्यक है. काम को सही ढंग से करने और सफलता-प्राप्ति के लिये निम्न कुछ बातों पर ध्यान देना आवश्यक है :

- आज का काम कल पर कभी न छोड़ें.
- काम करते समय बातचीत न करें.
- कोई भी काम करने से पहले उसकी रूपरेखा बना लें कि उसे कब तक एवं कैसे करना है.
- अगर कुछ घंटे का काम है तो उसे निपटाकर ही उठें.
- काम को एकाग्रता से करें, इससे कार्य कुशलता में वृद्धि होती है.
- हड़बड़ी में किये गये काम में गड़बड़ी हो जाती है. निश्चित समय के पहले काम को पूरा कर लें.
- अगर कोई नया काम करना हो तो उसके संबंध में संबंधित व्यक्तियों से विचार विमर्श कर लें या नियमों के बारे में अच्छी तरह से जानकारी प्राप्त कर लें.
- क्रोध की अवस्था में काम न करें.
- काम के दौरान वाद-विवाद से बचें.
- अपने कार्य-क्षेत्र में नयी-नयी जानकारी प्राप्त करते रहें.
- आपके द्वारा किये गये जिस काम को सराहा जाता है, उसे और अच्छी तरह करने का प्रयास करें. इससे कार्यकुशलता ही नहीं बढ़ती, वरन् आत्मविश्वास भी बढ़ता है.

आम तौर पर सरकारी दफ्तरों में देखा जाता है कि लोग काम से बचने की कोशिश करते हैं. अंततः उस काम को उन्हें ही करना पड़ता है. अतः काम और मेहनत से बचने का प्रयत्न बेकार है. किसी भी काम को अनमने ढंग से न लेकर मजा लेते हुए करें. अपने सोच-विचार को बदलते हुए अपना महत्व बढ़ाने का प्रयास करें. अपना काम पूरा होने के बाद उसे स्वयं जांचें कि उसमें कोई कमी तो नहीं है.

अगर आपके काम में कोई गलती है तो उसे तुरन्त मान लें. अपनी गलती मान लेने वाले भीड़ से अलग हो जाते हैं और इसमें आनंद तथा प्रतिष्ठा का अनुभव होता है. जब हम सही होते हैं तो आहिस्ता और कूटनीति से लोगों से अपनी बात मनवाने का प्रयास करना चाहिये और अगर गलत हों तो तत्काल उसे स्वीकार कर लेना चाहिये.

याद रखें कि दूसरे लोग पूरी तरह गलत हो सकते हैं, मगर अपनी नज़रों में वे गलत नहीं होते. उनकी आलोचना न करें, उन्हें समझने की कोशिश करें. सामने वाला ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है, उसे जानने का प्रयत्न करें. खुद से पूछिए, अगर मैं उसकी जगह होता तो क्या करता, ऐसा करने से आप कुढ़ने से बच जायेंगे.

बॉस नहीं लीडर बनें, जिसके लिये निम्न तरीके अपनाएं :

1. तारीफ और सच्ची प्रशंसा से बात शुरू करें.
2. आदेश सीधे देने की बजाय प्रश्न पूछिये. मसलन इस काम को तुरन्त करें कहने के बजाय, क्या आप इस काम को तत्काल कर सकते हैं?
3. लोगों की गलतियां सीधी तरह से न बताएं. सामने वाले आदमी को अपनी लाज बचाने दें.
4. थोड़े से सुधार की तारीफ करें और हर सुधार पर मुक्त कंठ से तारीफ करें और उन्हें सराहें.
5. उत्पादकता तभी अधिकतम होती है, जब प्रबंधक व कामगार के संबंध सौहार्दपूर्ण एवं सहयोगपूर्ण हों. प्रबंधक काम का प्रभारी हो, लोगों का नहीं.

के.एस. वेंकटेश, औद्योगिक संबंध प्रभाग, के.का, मुंबई में वरिष्ठ प्रबंधक (मासं) हैं.

डॉ. नीरा प्रसाद

टकराव या सामंजस्य - चुनाव आपका

प्रत्येक व्यक्ति, संस्था एवं देश के समक्ष कई बार ऐसे अवसर आते हैं, जब तनाव या टकराव की स्थिति खड़ी हो जाती है और ऐसी स्थिति में यह निर्णय लेना कठिन हो जाता है कि टकराव या सामंजस्य में से कौन-सा रास्ता अपनाया जाए. अतः जब भी कोई ऐसी स्थिति आती है तो हमें टकराव या सामंजस्य में से एक का चुनाव करना पड़ता है. किसी व्यक्ति के समक्ष आने वाली परिस्थितियों के लिए उसे स्वयं ही निर्णय लेना पड़ता है. किसी संस्था या देश के समक्ष उत्पन्न तनाव की स्थिति में, संबंधित देश या संस्था के नेता को (अपने सहयोगियों की राय के आधार पर) निर्णय लेना पड़ता है. अतः व्यक्ति हो या संस्था/देश, दोनों के समक्ष उत्पन्न तनाव की परिस्थिति में निर्णय लेने वाला व्यक्ति ही होता है, इसलिए हम व्यक्ति को आधार बनाकर इस विषय पर चर्चा करेंगे.

साधारणतया जीवन की परिस्थितियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है - 1.सामान्य 2. असामान्य या विशेष.

सामान्य परिस्थितियां वे हैं, जिनसे हम दैनन्दिन जीवन में हर रोज रूबरू होते हैं. इन परिस्थितियों में हमें तुरंत निर्णय लेना पड़ता है. यद्यपि हमें बहुत अधिक लाभ या हानि नहीं होती, परंतु हमें टकराव या सामंजस्य में से एक का चुनाव करना पड़ता है. यथा पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-भाई की नोंक-झोंक, कार्यालय के कार्यों में अधिकारियों के बीच द्वन्द्व, दूकानदार-ग्राहक के बीच संघर्ष, पड़ोसी के साथ तीखी बातचीत, लोकल बस या ट्रेन में चढ़ते-उतरते समय किसी यात्री के साथ झगड़ा तथा इसी तरह की अनेक सामान्य परिस्थितियां जीवन में तनाव पैदा करती हैं. जीवन में हमें हर कदम पर चुनाव करना पड़ता है, अर्थात् यह हमारी मर्जी होती है कि हम टकराव का रास्ता अपनाएं या सामंजस्य का रास्ता अपनाएं. जीवन में तनाव दूसरों के कारण ही नहीं होता, अपितु हमें अपने विचारों

एवं भावनाओं में अन्तर्द्वन्द्व का सामना भी करना पड़ता है और निर्णय लेना पड़ता है.

स्वयं से अन्तर्द्वन्द्व होने पर यदि समय रहते निर्णय न किया जाए तो हमारा तनाव और बढ़ सकता है. यथा कार्यालय में अत्यावश्यक कार्य लम्बित है और बॉस ने उसे शीघ्र निपटाने के आदेश दिए हैं. प्रातः बिस्तर से उठते हैं तो सिरदर्द के कारण मन में एक विचार आता है - ''आज छुट्टी लेकर आराम किया जाए''. तुरंत दूसरा विचार आता है - ''कार्यालय में अर्जेंट कार्य लम्बित है, सिरदर्द की गोली खाकर कार्यालय जाकर काम निपटाया जाए''. ऐसी स्थिति में हम जो भी चुनाव करें, उसके बारे में एकबार सोच-विचार कर लें. जीवन की सामान्य परिस्थितियों में कॉमन सेंस से ही काम चल जाता है कि क्या निर्णय लिया जाए. विशेष परिस्थितियों में तनाव उत्पन्न होने पर टकराव या सामंजस्य में से कौन-सा रास्ता चुना जाए, उसके लिए कॉमन सेंस के साथ-साथ विशेष ज्ञान, अनुभव, विशेष तकनीकी ज्ञान और किसी विशेषज्ञ का परामर्श आदि की आवश्यकता पड़ती है, लेकिन निर्णय व्यक्ति को स्वयं ही लेना पड़ता है, यथा पति-पत्नी के तलाक, जमीन जायदाद एवं अन्य अदालती मामले, प्रबंधन एवं कर्मचारी यूनियन के मसले, कार्यालय में भ्रष्टाचार, लापरवाही के कारण उत्पन्न परिस्थितियां.

➢ सामंजस्य बेहतर चुनाव :

परिस्थितियां सामान्य हों या विशेष, दोनों में सामंजस्य का चुनाव ही बेहतर रहता है, क्योंकि टकराव से किसी भी पक्ष को कोई लाभ नहीं होता है. टकराव में भले ही हम जीत जाएं, लेकिन फिर भी हम बहुत-कुछ हारते हैं. व्यक्तिगत स्तर पर टकराव में धन, प्रेम, सहयोग, मनोबल, आनन्द की हानि होती ही है, विशेष परिस्थितियों में विशेषकर देश के स्तर पर टकराव जान-माल की हानि, बर्बादी और विनाश का कारण भी बन जाता है. परंतु सामंजस्य का अर्थ समझौता (compromise) कर लेना भी नहीं है, क्योंकि इससे दूसरे पक्ष की दुष्टता एवं कुटिलता और बढ़ जाती है. इसलिए सामंजस्य की राह अधिक बेहतर है. सामंजस्य का रास्ता आनन्द का रास्ता है. टकराव जीवन के सुनहरे पलों का आनन्द छीन लेता है. टकराव का रास्ता केवल उस स्थिति में अपनाया जाना चाहिए, जब अपने आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए और कोई तरीका बाकी न बचे, उसके लिए पूरी तैयारी हो और जीत की पूरी उम्मीद हो तथा सामने वाला पक्ष सामंजस्य के लिए हाथ बढ़ाने के लिए तैयार न हो.

➢ सच्चाई एवं न्याय का साथ :

टकराव या सामंजस्य हम किसी को चुनें, लेकिन सच्चाई का साथ कभी न छोड़ें. सच्चाई के साथ-साथ न्यायप्रियता को ध्यान में रखकर निर्णय लिया जाना चाहिए. ऐसी स्थिति में पूर्वाग्रहों को अधिक महत्व नहीं देना चाहिए. कई बार बैंकर और ग्राहक के बीच टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है. यथा ग्राहक द्वारा समय पर ऋण की क़िस्त जमा न करने के कारण उत्पन्न एनपीए की स्थिति. इस मामले में हमें ग्राहक की वास्तविक स्थिति, उसकी मंशा और ईमानदारी को ध्यान में रखकर ही निर्णय लेना चाहिए. बैंक ओटीएस तथा लोक अदालतों के जरिये सामंजस्य स्थापित करने का ही प्रयास करते हैं. परंतु जब सामने वाली पार्टी सामंजस्य के लिए तैयार न हो तो बैंक सरफेसिया के जरिये अथवा अन्य न्यायाधिकरणों के जरिये टकराव का रास्ता अपनाकर एनपीए की वसूली के लिए बाध्य हो जाते हैं. इसप्रकार सच्चाई एवं न्याय का रास्ता अपनाया जाना चाहिए. व्यक्तिगत मामलों में भी निर्णय लेते समय सच्चाई एवं न्यायप्रियता को नहीं छोड़ना चाहिए.

➢ टकराव से कैसे बचें :

व्यक्ति को जीवन में कदम-कदम पर सामंजस्य करना पड़ता है. सामंजस्य के बिना जीवन को गति नहीं मिलती है. जिस व्यक्ति में सामंजस्य करने की आदत नहीं होती, उसका विकास रुक जाता है. सामंजस्य से व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के रास्ते खुलते हैं, इसलिए टकराव से बचने के उपाय करने चाहिए.

❖ मूर्खों/अज्ञानियों से दूर रहें

प्रत्येक व्यक्ति को अपना जीवन अपने ढंग से जीने का अधिकार है, लेकिन कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो अपने स्वार्थ एवं अहंकार के लिए अपना जीवन तो अपने ढंग से जीते हैं, लेकिन दूसरों के अधिकारों का हनन करते हैं. जब हमें कोई सांप नज़र आता है तो हम उससे बचकर चलते हैं, उससे दोस्ती नहीं करते. इसी प्रकार संसार में भी कुछ लोग जहर लेकर पैदा होते हैं. आप उन्हें कितना भी दूध पिला दो, सब जहर बन जाता है. सांप की दोस्ती और दुश्मनी दोनों घातक हो सकती हैं. ये सांप-सरीखे लोग हमें घर-बाहर-कार्य पर हर जगह मिलते हैं. उनके जहर की मात्रा के आधार पर ही उनसे संबंधों को सीमित करने और उनसे दूरी बनाने का चुनाव उचित होगा. इनसे टकराव या दोस्ती दोनों ही स्थितियों में हम घाटे में रहेंगे.

❖ धैर्य एवं सहनशीलता

प्रायः टकराव का कारण धैर्य एवं सहिष्णुता की कमी होती है. हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे सम्पर्क में आने वाले अनेक लोग हमें भी धैर्यपूर्वक सहन करते हैं. हमारी अपनी ही कमियां एवं कमजोरियां टकराव का कारण बनती हैं. इसलिए हमें दूसरों को सहन करने की आदत भी डालनी चाहिए. अगर हम किसी की कमी, कमजोरी एवं व्यवहार को सहन नहीं कर पाते तो हमें अपनी मर्जी का निर्णय लेते हुए उसके साथ अपने संबंधों को सीमित करने का प्रयास करना चाहिए.

टकराव से बचने के लिए धैर्य एवं सहनशीलता की इसलिए भी आवश्यकता है, क्योंकि विपरीत परिस्थितियां सदैव नहीं रहती हैं. ये परिस्थितियां कुछ अवधि के लिए होती हैं. जीवन में हर चीज परिवर्तनशील है, इसलिए धैर्य धरना उचित है.

❖ क्षमाशीलता एवं क्षमायाचना

व्यक्ति को क्षमाशील होना चाहिए. उसे दूसरों की सामान्य कमियों, कमजोरियों एवं गलतियों को नज़रअंदाज़ करना चाहिए. इसका अभिप्राय यह नहीं है कि दूसरों द्वारा आपको जानबूझकर दिए गए कष्टों एवं अन्याय को भी आप माफ कर दें. आपके साथ जानबूझकर किए गए अन्याय को माफ करने पर आप कमजोर हो जाएंगे. क्षमाशीलता कमजोरी का लक्षण नहीं है, वह वीरता का लक्षण है. अतः ऐसी स्थिति में टकराव से बचने के लिए, उस स्थान पर जाना छोड़ देना ही बेहतर है, जहां आपका सम्मान न हो अथवा आपके साथ अन्याय हो.

कोई भी सर्वगुण-सम्पन्न नहीं है. हम प्रतिदिन गलतियां करते हैं. गलती होने पर सच्चे दिल से क्षमायाचना करने पर सामने वाले व्यक्ति का दुर्भाव कम हो जाता है. अपनी गलती के लिए क्षमा मांगने पर हमारा कुछ घटता नहीं है. इससे टकराव से बचाव होता है. अंग्रेज हमें बड़ा अच्छा शब्द देकर गये हैं - 'सॉरी'. यह शब्द टकराव से बचने की अद्‌भुत क्षमता रखता है.

❖ अच्छी सोच

अच्छी सोच टकराव से बचने और सामंजस्य स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. नकारात्मक सोच के व्यक्ति अधिकांशतः विपरीत परिस्थितियों में दूसरों के साथ लड़ने के लिए उन्हें आमंत्रित करते रहते हैं. उनका अहंकार और मन की दशा उन्हें परेशान किए रहती है, जिसके कारण क्षणिक एवं

निम्न विजय पाकर उन्हें बड़ी खुशी होती है. प्रायः हर बात पर बहस करने वाले, बहस में हार होती देख, सामने वाले पर व्यक्तिगत टिप्पणियां करने वाले मानसिक रूप से विक्षिप्त व्यक्ति, टकराव को आमंत्रित करते हैं. अपनी सोच के कारण ही इन्हें जीवन में बार-बार अनेक कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है. कार्यालय में प्रबंधन के साथ टकराव में कई बार इन्हें अपनी नौकरी से भी हाथ धोना पड़ता है.

अच्छी सोच हमारी परिपक्वता की ओर संकेत करती है. हमारा जीवन लड़ने के लिए नहीं, अपितु रचनात्मक कार्य करते हुए आनन्द-विभोर होने के लिए है. नकारात्मक सोच को अच्छी सोच में बदला जा सकता है. जिस प्रकार गंदे पानी के गिलास में बार-बार स्वच्छ जल डालने से अंततः जल साफ हो जाता है, उसीप्रकार मन में अच्छे विचार, शक्ति एवं वीरता, दया तथा सहानुभूति आदि भावनाएं मन के धरातल को उर्वरक बनाकर हमारे मन की दशा को परिवर्तित कर देती हैं. इसलिए अगर हो सके तो हमें ईर्ष्या, द्वेष, घृणा और बदले की भावनाओं से ऊपर उठकर अपने मन के धरातल पर अच्छी भावनाओं एवं विचारों के बीज बोने चाहिए, ताकि हमारे व्यवहार में टकराव एवं द्वन्द्व की तीव्रता शिथिल पड़ जाए. अपने परिवार, कार्य और समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों एवं जिम्मेवारियों को समझना, **विन-विन** विचारधारा को विकसित करना तथा आध्यात्मिक विचार अच्छी सोच को जन्म देते हैं.

संक्षेप में, परिवार, कार्य एवं समाज में हमारी सफलता बहुत अधिक इस बात पर निर्भर करती है कि हमें विभिन्न परिस्थितियों (विशेषकर विपरीत परिस्थितियों) में टकराव या सामंजस्य में से किसे चुनना है. इस समझ की कमी के कारण कई प्रतिष्ठित, कुशाग्र-बुद्धि व्यक्ति भी यथेष्ट सफलता प्राप्त करने से पिछड़ जाते हैं और अभाव एवं निराशा का जीवन जीने को अभिशप्त होते हैं. यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन में सफलता अन्तर-निर्भरता से ही मिलती है. कोई व्यक्ति टकराव के कारण अकेला एवं विमुख रहकर तथा लड़-झगड़कर सफलता की उस ऊंचाई पर नहीं पहुंच सकता, जिस ऊंचाई पर पहुंचकर बड़े-बड़े नेता-अभिनेता, वैज्ञानिक और व्यवसायी आदि ऐश्वर्यपूर्ण जीवन के साथ-साथ दुनिया का बेशुमार प्रेम पाते हैं. टकराव दोनों पक्षों को विनाश की ओर धकेलता है और सामंजस्य दोनों का विकास करता है, लेकिन सामंजस्य से अभिप्राय अन्याय के आगे घुटने टेकना नहीं है. अतः टकराव की बजाय दोनों पक्षों में पारस्परिक समझ से सामंजस्य का रास्ता ही बेहतर है. न्याय पर आधारित सामंजस्य ही प्रजातंत्र का मूलाधार है.

डॉ. नीरा प्रसाद, स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

नरेंद्र सिंह परमार

स्वयं की पहचान

महान् चिंतक-विचारक एवं प्रसिद्ध लेखक नैपोलियन हिल ने कहा था "आपका जीवन आपके विचारों को प्रतिबिंबित करता है", अर्थात् किसी व्यक्ति की पहचान उसके शारीरिक गठन, सुन्दरता, बनाव-शृंगार या पहनावे से नहीं होती है, बल्कि उसके विचार, हावभाव, गुण और कर्मों से होती है. व्यक्ति के जीवन में कर्मों का बहुत महत्व है. कार्य करने की प्रेरणा मनुष्य के अंतःकरण में व्याप्त चेतना से उद्भूत विचारों से मिलती है. यह चेतना क्या है? यह है "मैं हूँ". और "मैं हूँ" क्या है? "मैं हूँ" का अर्थ है कि मैं सर्वेसर्वा हूँ. जीव सोचता है कि वही इस भौतिक जगत का स्वामी तथा स्रष्टा है. प्रत्येक व्यक्ति में जागृत चेतना के दो मनोमय विभाग हैं - एक के अनुसार मैं ही स्रष्टा हूँ और दूसरे के अनुसार मैं ही भोक्ता हूँ.

कड़ी प्रतिस्पर्धा के इस युग में मनुष्य के सामने सबसे बड़ी समस्या अपना अस्तित्व बनाए रखने की है. अस्तित्व बनाए रखने के लिए केवल जल, वायु, भोजन, मकान, कपड़े आदि की जरूरत पूरी करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि अपनी पहचान बनाना भी बहुत ही आवश्यक है. इस संसार में अधिकतर लोग लकीर के फकीर हैं. लेकिन उनसे अलग हटकर यदि हम दुनिया के सामने अपने आपको पेश नहीं करते तो हमारी पहचान पानी के बुदबुदे की माफिक क्षणिक होती है. इस भीड़ भरी दुनिया में स्वयं की पहचान बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने गुणों और कर्मों को इस तरह पेश करें कि उनसे हमारी पहचान दुनिया के समक्ष कायम हो सके. अभिप्राय यह कि "खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तदवीर से पहले, खुदा बंदे से खुद पूछे, बता तेरी रज़ा क्या है?"

पहचान बनाने के लिए मुख्यतः दो योग्यताओं का होना आवश्यक है - पहली योग्यता है अंतःप्रेरणा और दूसरी है आत्म सम्मान. अंतःप्रेरणा अर्थात् मनुष्य के

भीतर व्याप्त चेतना जब तक जागृत नहीं होती, वह कुछ भी करने के लिए आगे नहीं बढ़ सकता. जब तक रॉकेट के भीतर आग प्रज्वलित नहीं होती, वह वायुमंडल को चीरते हुए आसमान की उड़ान नहीं भर सकता. किसी के कहने से या उकसाने से व्यक्ति आगे नहीं बढ़ सकता. अगर कोई व्यक्ति ऐसा सोचता है तो वह एक तरह से उसका अपने-आप को दिया गया भुलावा अर्थात् ऐसी नींद है, जिसमें पलक नहीं झपकते. अधिकतर लोग अच्छे होते हैं, लेकिन दुनिया की नजर में अच्छे नहीं दिखायी देते. यदि हम दूसरों को पूछें कि हमें आगे बढ़ने के लिए क्या करना चाहिए तो वे हमें कुछ न कुछ सलाह अवश्य दे डालेंगे तथा कई ऐसे रास्ते भी बताएंगे, जो हम स्वयं जानते हैं. लेकिन सवाल यह है कि दूसरों से पूछने के स्थान पर हम अपने आपसे क्यों नहीं पूछते? बड़ी ही अजीब बात है कि ''कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूंढै बन मांहि''.

इसका अर्थ है, हमारे भीतर छुपी हुई अंतःप्रेरणा का बाहरी तत्वों से अलगाव. किसी कार्य को करने के लिए जरूरी होता है कि हम जो काम करें, उसमें यकीन रखें और स्वयं पर पूरी जिम्मेदारी डाल दें. हम बार-बार सोचें कि जब कोई दूसरा कर सकता है तो मैं क्यों नहीं कर सकता और स्वयं को मजबूत बनाएँ.

मनोवैज्ञानिक बताते हैं कि जब मनुष्य की भौतिक जरूरतों की सीमा खत्म हो जाती है तो वह आध्यात्मिकता की ओर बढ़ने लगता है. इसका ज्वलंत उदाहरण है - मंदिरों, मस्जिदों, चर्चों तथा गुरुद्वारों में बढ़ती हुयी भीड़. पहले जो पूजा-स्थल खंडहर हो रहे थे, वे आज आलीशान और प्रख्यात हो गए हैं. उनमें लम्बी-लम्बी कतारें लगने लगी हैं. क्या यकायक मनुष्य की ईश्वर में आस्था बढ़ रही है? नहीं, ऐसा नहीं है. मनुष्य के भौतिक संसाधन बढ़ गए हैं और उन्हें संजोए रखने के लिए उसकी चिंताएं बढ़ रही हैं. अब एक ही रास्ता बच गया है मनुष्य के पास और वह है ईश्वर में आस्था. क्षणिक आर्थिक लाभ से अधिक मनुष्य अपनी प्रतिष्ठा, मान्यता, प्रशंसा, तरक्की, जिम्मेदारी, परिपूर्णता आदि में अपने जीवन की सार्थकता मानता है. वह अब इन्हीं से अपनी पहचान बनाने में लगा हुआ है. अंतःप्रेरणा हमें सफल होने के लिए प्रेरित करती है और सफलता के बिना न तो इज्जत मिलती है और न ही मन को आनंद या शांति प्राप्त होती है. इसीलिए असफल होने वाले व्यक्ति में निराशा घर करने लगती है. उसमें स्वयं के प्रति हीन भावना पनपने लगती है तथा वह वापस ''शून्य'' की ओर लौटने लगता है. धीमे-धीमे वह अपनी पहचान खोने लगता है. कभी अपने आपको सूरमा समझनेवाला व्यक्ति मानने लगता है कि वह इस भीड़ में कुछ भी नहीं है और उसके द्वारा किया गया योगदान किसी काम का नहीं है.

अतः ऐसी विपरीत या नकारात्मक स्थिति से बचने और स्वयं की पहचान बनाने के लिए मनुष्य को अपने जीवन में निम्नलिखित लक्षणों को विकसित करने की नितांत आवश्यकता है:

मुस्कान बिखेरना :

मुस्कराते हुए व्यक्ति को अपनी पहचान बनाने के लिए किसी के सहयोग की आवश्यकता नहीं होती. मुस्कराने में कोई खर्चा भी नहीं होता. 'हींग लगे न फिटकरी, आए रंग चोखा-चोखा'. किंतु हाँ, इसमें कोई शक नहीं कि मुस्कान बिखेरता व्यक्ति भी न जाने कितने गम और परेशानियों को जेहन में समेटे रहता है. इसीलिए तो किसी विचारक ने ठीक ही कहा है कि ''The person who is always smiling, doesn't mean that he has no problems. But his smile shows that he has ability to overcome all those problems''.

सहयोगी बनना :

ऐसा कहा गया है कि व्यक्ति यदि किसी को सहयोग नहीं करता तो वह निरा पशु का जीवन जी रहा है. हर स्थान पर सहयोगी व्यक्ति उभरकर सामने आता है. कितनी भी भीड़ हो, उसमें वही व्यक्ति उभर कर सामने आएगा, जो दूसरों को सहयोग दे रहा हो. चाहे वह कोई प्राकृतिक आपदा-विपदा हो, बाढ़-भूकंप हो, बस-ट्रेन-हवाई दुर्घटना हो या कुछ और. ज्यादातर लोग केवल दर्शक की तरह खड़े होंगे, जिनका कोई चित्र स्मृति-पटल पर अंकित नहीं होगा. किंतु कुछ व्यक्ति ऐसे अवश्य होंगे जो घायलों की मदद कर रहे होंगे, उन्हें उठाकर अस्पताल या सुरक्षित स्थान पर ले जा रहे होंगे. वे हर किसी के दिलोदिमाग में बस जाएंगे. ऐसे व्यक्तियों की अटूट और अमिट छाप बन जाती है.

प्रशंसा करना :

प्रशंसा किसे अच्छी नहीं लगती! मनुष्य का जन्म व्यर्थ है, यदि वह अपने साथियों से सिर्फ अपेक्षाओं की पूर्ति की कामना करता रहे और उनकी सफलताओं के प्रति बिलकुल ही निर्लिप्त रहे. उपलब्धियां मिलने पर अपने साथियों का एहसानमंद न हो, ऐसा व्यक्ति अपने साथियों में पहचान नहीं बना पाता, जबकि हर अच्छाई तथा अच्छे कार्य की प्रशंसा करने और सफलता या खुशी को आपस में बांटने से वह द्विगुणित हो जाती है.

मीठा बोलना :

इतिहास गवाह है कि संतों ने अपनी मधुर वाणी के बल पर असंख्य दिलों को जीता है. दिलों में कड़वाहट लाने का कार्य भी वाणी ही करती है. गाली-गलौज, अपशब्द, कटु-शब्द, वाणी में कठोरता आपसी मनमुटाव और क्लेश का एक बड़ा कारण होती है. मधुर वाणी जीवन में मिठास घोल सकती है, इसीलिए तो संत कबीरदास ने कहा है, ''मीठी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय, औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय''.

ईमानदार रहना :

ईमानदारी की बड़ी-बड़ी मिसालें देखने में आती हैं. हम अक्सर किसी व्यक्ति की तारीफ़ में कहते हैं कि वह एक बड़ा ही नेकदिल और ईमानदार इंसान है. ईमानदारी वह गुण है, जो जीवन के हर क्षेत्र में व्यक्तित्व के निखार में सहायक होती है. चाहे वह समाज हो, परिवार हो, कार्यालय हो, मित्रों का समूह हो या कोई भी छोटा-बड़ा कार्य हो. मनसा, वाचा, कर्मणा ईमानदार व्यक्ति सभी के दिलों में विशिष्ट और आदरपूर्ण स्थान पाता है.

जिम्मेदारी लेना :

स्वयं की पहचान में जिम्मेदारी वहन करना एक बहुत ही अहम् कार्य होता है. जो व्यक्ति जिम्मेदारी को समझते हुए कार्य करता है, उसकी एक अलग ही पहचान होती है. कर्मठ और जिम्मेदार व्यक्ति के जीवन की फिलौसफी है, ''दरिया की जिंदगी पर, सदके हजार जानें, मुझको नहीं गंवारा, साहिल की मौत मरना''. जिम्मेदार व्यक्तित्व नेतृत्व का कार्य भी संभालता है. सब लोग उसी से अपेक्षा करते हैं, उसी की ओर देखते हैं, उसी का भरोसा करते हैं. इतना ही नहीं, लोग उसके नाम का लोहा भी मानते हैं.

आइये, अब हम स्वयं को परखें कि उपर्युक्त लक्षणों या गुणों की कसौटी पर हम कितने खरे उतरते हैं. बेशक हममें से कोई भी जिंदगी में अपनी समस्त क्षमताओं को पूर्णतया विकसित नहीं कर पाता है. पर हमें इस बात पर विचार अवश्य करना चाहिए कि हम अपनी विद्यमान छवि को बदलकर क्या बनना चाहते हैं? अब सवाल यह उठता है कि क्या छवि को बदला जा सकता है? क्या हम विभिन्न गुणों को अपने अंदर विकसित कर सकते हैं? यदि हाँ, तो किस सीमा तक? वस्तुतः सवाल जितना दुरूह है, जवाब उतना ही आसान है. इसे प्रसिद्ध कवि दुष्यंत कुमार ने अपने अंदाज

में बयां किया है, ''कैसे आकाश में, सूराख नहीं हो सकता, एक पत्थर तो, तबियत से उछालो यारो''.

उससे भी आगे स्वामी विवेकानंद ने कहा है, ''If there is sin,this is the only sin to say that you are weak or others are weak. If you think yourselves weak, weak you will be, if you think yourselves strong, strong you will be'', अर्थात् स्वयं को कभी कमजोर न समझें. क्योंकि हो सकता है आप अब तक के जीवित प्राणियों में सबसे ज्यादा क्षमतावान और प्रतिभाशाली हों. हो सकता है आप सफलता के सिद्धांतों को अच्छी तरह से जानते हों. बस, अपनी क्षमताओं पर दृढ़ विश्वास रखते हुए डटे रहें, आगे बढ़ें.

महान् विचारक Paulo Coelho के शब्दों में 'जब तुम सचमुच कुछ पाना चाहते हो तो सारी कायनात उसे मिलाने में तुम्हारा साथ देती है'.

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जॉयसी ब्रदर्स ने भी कहा है, ''किसी व्यक्ति की आत्म अवधारणा उसके व्यक्तित्व का केंद्र होती है. वह मानव व्यवहार के हर नजरिये को प्रभावित करती है - सीखने की योग्यता को, बढ़ने और बदलने की क्षमता को, दोस्तों, साथियों और केरियर का चुनाव करने को. वस्तुतः एक वाक्य में कहें तो ''मन के हारे हार है, मन के जीते जीत''.

भगवान श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवत्गीता में कहा है, ''सनातन राज्य को वही प्राप्त करता है, जो निर्माण-मोहा है''.

इसका अर्थ है कि हम उपाधियों के पीछे पड़े रहते हैं, हम शरीर के आसक्त बने रहते हैं, क्योंकि पदवी और उपाधियों का मोह शरीर से संबंधित होता है. लेकिन हम केवल शरीर नहीं हैं, इसकी अनुभूति होना ही आत्म-साक्षात्कार अर्थात् स्वयं की पहचान है.

अंत में, निष्कर्ष स्वरूप मैं अपने एक प्रणेता के इस कथन से अपनी बात समाप्त करना चाहूँगा कि किसी भी व्यक्ति की असली पहचान उसके जनाजे के पीछे चलने वाली कतार की लंबाई से होती है, जब उस कतार को देख पाना उसके नसीब में नहीं होता.

नरेंद्र सिंह परमार, केंद्रीय राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, मुंबई में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

पुष्कर कुमार सिन्हा

बैंकिंग उद्योग में मानव संसाधन पूँजी की भूमिका

बैंकिंग एक ऐसा उद्योग है, जहाँ उत्पाद की नकल आसानी से की जा सकती है. फिर यह प्रश्न उठता है कि प्रतिस्पर्धा के वातावरण में अपने उत्पाद में विशेषता कैसे लाई जाए. अच्छी ग्राहक सेवा एक ऐसी विशेषता है जो एक उत्पाद को दूसरे उत्पाद से या एक ब्रांड को दूसरे ब्रांड से अलग कर सकती है. हम अपने उत्पाद को श्रेयस्कर साबित कर सकते हैं. ग्राहकों का झुकाव हमारे उत्पाद की तरफ बढ़ सकता है.

निरंतर अच्छी ग्राहक सेवा कैसे लायी जाए - यह एक ज्वलंत प्रश्न है. क्या यह सिर्फ तकनीकी बदलाव से संभव है? निस्संदेह यह तकनीकी विकास से कतई संभव नहीं, बल्कि अच्छी ग्राहक सेवा, मानव संसाधन एवं उसके विकास से संभव है. पुनः यह प्रश्न उठता है कि मानव संसाधन तो प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है. फिर हम अपने उत्पाद को अच्छी ग्राहक सेवा के साथ क्यों नहीं श्रेष्ठ बना सकते हैं? यह करने के लिए हमें अपने ग्राहकों तथा उनकी जरूरतों को समझना होगा. इस कार्य के लिए हमें तकनीक एवं मानव संसाधन के सही मिश्रण के साथ आगे बढ़ना होगा. बैंकों में तकनीक का पर्याप्त विकास हो चुका है, लेकिन एक बड़ा प्रश्न है कि मानव संसाधन का कैसे विकास किया जाए, जिससे तकनीक का बेहतर प्रयोग हो सके तथा बैंकों के कारोबार में गुणात्मक वृद्धि हो सके.

यदि हम स्वतंत्रता के बाद की बैंकिंग व्यवस्था की बात करें तो हमें मानव संसाधन के परिप्रेक्ष्य में भी काफी बदलाव दिखाई देगा. बैंकिंग, राष्ट्रीयकरण से पहले उद्योगपतियों के द्वारा संचालित होती थी. आम लोगों में बैंकिंग का प्रचार-प्रसार नहीं हो पाया था. लेकिन परिस्थितियां बदलीं, बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ, साथ ही साथ, बैंकिंग व्यवसाय को आम लोगों तक पहुँचाने के लिए कई नियम बनाए गए तथा

संस्थाओं का निर्माण हुआ. बैंकों की कई शाखाएँ शहर, कस्बों एवं गाँवों में खुलीं. बैंकिंग व्यवस्था का विस्तार हुआ, आम लोगों का बैंकों की तरफ झुकाव बढ़ा, किन्तु बैंक आम लोगों के बीच बचत करने वाली संस्था ही बनकर रह गये. ऋण देने के संदर्भ में बैंकिंग उद्योग ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो पाया. फिर बैंकिंग उद्योग में 1991 के बाद तीसरा तथा अब तक का श्रेष्ठतम बदलाव आया. निजी बैंक प्रतिस्पर्धा में आए, बैंकों में तकनीक का उपयोग बढ़ा तथा केन्द्र सरकार ने सरकारी बैंकों से अपनी पूँजी का प्रतिशत कम कर परस्पर प्रतिस्पर्धा को और बढ़ा दिया. अतः सरकारी बैंकिंग संस्थाओं में आकर्षक बदलाव आया. इन सभी बदलावों के बीच मानव संसाधन में भी बदलाव आया, लेकिन बदलाव एवं विकास की गति धीमी होने के कारण तकनीक आगे निकल गयी, मानव संसाधन कदम-से-कदम नहीं मिला पाया.

जिस तरह वित्तीय पूँजी के सही एवं सामयिक उपयोग से ही व्यापार तथा लाभ की बढ़ोत्तरी हो सकती है, उसी तरह मानव पूँजी के सही एवं सामयिक प्रयोग की जरूरत है. जिस तरह प्रबन्धन के शब्दों में कहा जाता है कि सही समय, सही उत्पाद, सही जगह, सही ग्राहक तथा सही मूल्य का सम्मिश्रण व्यापार के विकास एवं प्रसार के लिए उपयोगी है, उसी तरह सही कर्मचारी का सही जगह पर, सही काम के लिए, सही समय पर पदस्थापन भी व्यापार के विकास के लिए जरूरी है. इस तरह हम मानव पूँजी में संस्था-नागरिकता-व्यवहार अर्थात् संस्था तथा उसके विकास के प्रति अपनत्व की भावना बढ़ा सकते हैं.

कर्मचारी असंतुष्ट नहीं है, इसका कतई यह मतलब नहीं है कि कर्मचारी संतुष्ट है. मनुष्य की संतुष्टि उस काम में ज्यादा होती है, जिसको वह सही तरह से समझ सकता है तथा सही तरीके से निष्पादित कर सकता है. बदलाव को आसानी से स्वीकार नहीं करना तथा जिस काम को सही तरीके से समझ नहीं पाए, उसमें मन नहीं लगना, यह मनुष्य के स्वभाव में है. लेकिन हम सभी जानते हैं कि समय के साथ हम नहीं बदले तो समय हमें बदल देगा. जब हम अपनी संस्था में हो रहे या किए जा रहे बदलाव को फायदे से जोड़कर देखते हैं तो लोगों में बदलाव को स्वीकार करने की इच्छाशक्ति बढ़ती है. यदि हम सुबह उठकर टहलने वालों या योग करने वाले लोगों का उदाहरण लें तो हमें सर्वेक्षण से पता चलेगा कि अधिकतर लोग किसी-न-किसी रोग से ग्रस्त हैं या वैसे लोग हैं जो रोग को दूर रखना चाहते हैं. उसी तरह यदि हम बदलाव करने से संस्था को होने वाले लाभ या बदलाव नहीं करने से होने वाली हानि को समझते हैं तो संस्थागत बदलाव के प्रति हमारी स्वीकृति बढ़ती है. निरंतर काम करते रहना मानव की नियति में है. यदि कोई मनुष्य अपनी दिनचर्या

का विश्लेषण करे तो उसे यह जानकर आश्चर्य होगा कि वह एक मिनट भी खाली नहीं बैठ सकता है. हम अपनी रोज की दिनचर्या के अलावा कई काम करते हैं, यथा लिखते हैं, पढ़ते हैं, बातें करते हैं, खेलते हैं, टी. वी. देखते हैं, यहां तक कि इंतजार के क्षण में हाथ-पांव हिलाते हैं. लेकिन हमें थकावट कब आती है - जब हम एक ही काम को लगातार तथा ज्यादा देर तक करते हैं या हमें ऐसा काम करना पड़ता है, जिसमें हमारा मन नहीं हो या मन नहीं लगता हो.

हम यदि एक ही काम को ज्यादा देर तक करते हैं तो शारीरिक थकावट होती है, जिसे हम आराम करके या काम में बदलाव लाकर दूर कर लेते हैं. लेकिन जब काम में हमारी रुचि नहीं होती है या काम का ज्ञान नहीं होता है या किसी के दबाव में वो काम करना होता है, जिसमें रुचि नहीं है तो हमारी थकावट मानसिक होती है. मानसिक थकावट को आराम करके दूर नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस परिस्थिति में अच्छी नींद नहीं आती है. अतः मानसिक थकावट को काम में रुचि पैदा कर या रुचि वाले काम को करके दूर किया जा सकता है. सवाल यह उठता है कि काम को रुचिकर कैसे बनाया जाए या कर्मचारी को उसकी रुचि का काम कैसे दिया जाए. लोगों की आदत होती है एक दूसरे के बारे में विचार बनाने की. उदाहरण के तौर पर, यदि कोई मनुष्य किसी बैंक की शाखा में पदभार संभालता है तो सह-कर्मचारी या उच्च/निम्न पद पर आसीन लोग या ग्राहक, उसके बारे में विचार बनाते हैं कि यह काम अच्छा करता है या वो काम अच्छा नहीं करता है या अच्छा तकनीकी ज्ञान है या ग्राहकों को संतुष्ट कर सकता है या बैंक के सारे उत्पाद का अच्छा ज्ञान है. यदि इन विचारों को तकनीक के माध्यम से एक जगह संग्रहित कर उसका विश्लेषण किया जाए तो हम कर्मचारी को उसकी रुचि का काम दे पाएँगे तथा उसकी योग्यता का सही उपयोग, संस्था के विकास में हो पाएगा.

अच्छे तथा योग्य कर्मचारी को उसके रुचिकर काम में लगाने से ग्राहक सेवा कैसे अच्छी होगी? इस संबंध में अच्छा व्यापार करने वाले एक किराना स्टोर के मालिक को उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता है. वह ग्राहक की रुचि का ध्यान रखता है. यह तभी संभव हो पाता है, जब उसे ग्राहक के कार्यक्षेत्र, वित्तीय स्थिति, परिवार के सदस्य एवं उनकी रुचि की पूरी जानकारी होती है.

बैंकों में कई ग्राहक ऐसे होते हैं, जिनका यदि बचत खाता हमारे पास है तो क्रेडिट कार्ड किसी अन्य बैंक का वे उपयोग करते हैं. उद्योग ऋण हमारे पास है तो कर्मचारियों का बचत खाता किसी अन्य बैंक में है. गाड़ी ऋण हमारे पास है तो बीमा किसी और संस्था से किया गया है. इस तरह के कई उदाहरण हैं, जिनसे पता चलता

है कि ग्राहक के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान नहीं होने के कारण हम ग्राहक को संतुष्ट नहीं कर पाते हैं तथा एक ग्राहक को कई उत्पाद बेचने में सफल नहीं हो पाते हैं. कई बार हमें हमारे उत्पाद का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं होने के कारण, ग्राहक को अच्छी सेवा नहीं मिल पाती है. हमारे उत्पादों का अच्छा प्रचार मौखिक तौर पर हमारे काउन्टर पर बैठे कर्मचारी कर सकते हैं. लेकिन उन्हें सारे उत्पादों का सही ज्ञान नहीं होने के कारण, रुचि नहीं बढ़ पाती है.

जिस तरह कोई मनुष्य सारे कार्यक्षेत्रों में अच्छा नहीं हो सकता है, उसी तरह सारे कार्यक्षेत्रों में खराब भी नहीं हो सकता. यदि शाखा स्तर की बात करें तो हम पाएँगे कि शाखा के कारोबार, लक्ष्य तथा योजनाओं की जानकारी शाखा प्रबन्धक या एक-दो अधिकारियों को होती है. शाखा के अन्य लोगों की जिम्मेवारी उन्हें दिए गए काम तक सीमित होती है. फिर यह प्रतीत होने लगता है कि कारोबार को आगे बढ़ाने में अन्य कार्मिकों के योगदान की कोई जरूरत नहीं है. अतः अन्य कर्मचारियों का कारोबार के विकास कार्यक्रम में समावेश नहीं होता है. यदि हम सारे कर्मचारियों को विकास में शामिल करें तो कारोबार में बढ़ोत्तरी की संभावना बढ़ जाती है.

आजकल संवेदना के महत्व को यह मानकर स्वीकार किया जा रहा है कि यह कार्यशैली को प्रभावित करती है या कर सकती है. उदाहरण के तौर पर असंतुष्ट एवं क्रोधित कर्मचारी या ग्राहक से बात-व्यवहार होना. संवेदना एक एहसास है क्रोध का, भय का, खुशी का या आश्चर्य का, जो व्यवहार से जुड़ा है. संवेदना को प्रबंधित करने के लिए, प्रबन्धक को एक मैत्रीपूर्ण वातावरण बनाने की जरूरत होती है, जो एक अच्छा तथा सही उदाहरण पेश कर सकते हैं.

मनुष्य का विश्वास एवं मूल्य भी महत्वपूर्ण पहलू हैं, जो संस्था में हमारे व्यवहार को प्रभावित करते हैं. कई बार हमारे मूल्य हमें दिशा निर्देशित करते हैं कि हमें क्या करना चाहिए. आजकल कार्यक्षेत्र में मूल्य एवं इससे संबंधित पहलुओं को काफी प्रचारित-प्रसारित किया जा रहा है, क्योंकि युवावस्था एवं प्रौढ़ावस्था में मूल्यों का अन्तर रहता है, जो कार्यक्षेत्र में विवाद का कारण बनता है. हम मूल्य कैसे सीखते हैं, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है. मूल्य हम बचपन से ही सीखना शुरू कर देते हैं, जब हम अपने माता-पिता, गुरु, परिवार के अन्य सदस्य एवं पड़ोसियों को देखते हैं. हमारे मूल्य तथा हमारे कार्यक्षेत्र में यदि समानता होती है तो हमारे कार्यक्षेत्र में सफल होने की संभावना बढ़ जाती है. हम ऐसी सदी से गुजर रहे हैं, जहाँ आधुनिक व्यावसायिक संस्था की मूल आस्ति कर्मचारियों का ज्ञान, समझ, कुशलता एवं अनुभव है, न कि जमीन, जायदाद, मशीन इत्यादि. आज के समय की सबसे बड़ी जरूरत कर्मचारी के

कार्य-कुशलता तथा कार्य-समर्पण के ताने-बाने को बुनना है. जो वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता हो, उसे ही कम्पनी का अधिकार मिलता है, न कि उसे जो बुद्धि एवं विवेक की पूँजी खर्च करता है. यह सही है कि आजकल व्यावसायिक संस्थाओं की कार्यशैली में काफी बदलाव आया है, उच्च एवं निम्न पदों पर काम कर रहे लोगों के बीच की दूरी कम हुई है, किन्तु यह सशक्तीकरण अभी भी सीमित मात्रा में है. इसलिए कई जानकार एवं अनुभवी कर्मचारी किसी महत्वपूर्ण निर्णय में अपना विचार व्यक्त नहीं कर सकते हैं.

एडम स्मिथ ने स्थायी पूँजी को चार प्रकार से व्यक्त किया है :

1. उपयोगी मशीनें, व्यापार के उपकरण
2. लाभ अर्जित करने वाले मकान / महल
3. जमीन
4. मानव पूँजी

मानव-पूँजी समाज के लोगों द्वारा अर्जित की गयी योग्यता है, इस योग्यता को हासिल करने के लिए, इसको बरकरार रखने के लिए तथा इसके विकास के लिए पूँजी खर्च की जाती है. जिस तरह से वस्तु-पूँजी में लोग खर्च करते हैं, उसी तरह मानव-पूँजी में भी खर्च की जरूरत पड़ती है. जैसे ही किसी संस्था में इस वास्तविकता को समझा जाता है, उपयोग तथा लागत अर्थशास्त्र के बीच का अन्तर खत्म हो जाता है. उपयोग की व्यक्तिगत उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए लागत माना जाता है. यह खासकर बच्चों के परिप्रेक्ष्य में काफी महत्वपूर्ण होता है. अगर हम बच्चों के विकास एवं शिक्षा में कम खर्च करते हैं तो वयस्क होने पर उनकी क्षमता भी कम होती है. क्षमता कम होने से आर्थिक मूल्य कम हो जाता है.

उसी तरह संस्था में संस्था के विकास के लिए मानव-पूँजी के मूल्य को समझना होगा, तभी हम संस्था में नयी धारा एवं नयी सोच की परिस्थिति बना सकते हैं. खासकर बैंक जैसी संस्था में, जहाँ हम उत्पाद में विविधता नहीं ला सकते हैं, मानव-पूँजी का विकास नयी ऊँचाई दिला सकता है.

अतः बैंकिंग एक सेवा उद्योग है, मानव संसाधन जिसकी एक महत्वपूर्ण पूँजी है. इस पूँजी का जितना अच्छा उपयोग होगा, कारोबार के विकास की गति भी उतनी ही तेज होगी.

पुष्कर कुमार सिन्हा, प्रबन्धक, संप्रति स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूर में एम. ई. पी. के प्रतिभागी हैं.

केशव ग्रोवर

अध्यात्म एवं गृहस्थ जीवन

अध्यात्म का अर्थ दो प्रकार से लिया जा सकता है, एक तो अपने भीतर की शुद्धता अर्थात् अपने मानसिक एवं बौद्धिक शुद्धीकरण के लिए किए जाने वाले कार्य एवं दूसरे संसारी आत्माओं द्वारा उस परम आत्मा से मिलने, उसे पाने के लिए किए गए प्रयत्न.

गृहस्थ का अर्थ है, अपने घर - परिवार, रिश्तेदारों, नातेदारों से जुड़कर अपने जीवन एवं अपने से जुड़े लोगों के जीवन को आसान बनाने वाले कार्य करने वाला.

अब इनको जोड़कर देखने के लिए ये तीन परिस्थितियाँ देखें, जिनमें तीन ऋषि अपनी सांसारिक परिस्थितियां, यूं कहें कि गृहस्थ परिस्थिति को लेकर उस प्रभु - परमात्मा को धन्यवाद दे रहे हैं.

- प्रभु ! आपका बहुत बहुत धन्यवाद. मुझे आपने इस संसार में गृहस्थ रूपी जाल से मुक्त कर दिया. मेरी भार्या को अपने पास बुलाकर मुझे अपनी जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया, ताकि मैं पूर्ण समर्पित हो आपकी आराधना कर सकूं.
- प्रभु ! आपका कोटिशः धन्यवाद. मुझे आपने इस संसार में गृहस्थ में रहते हुए भी भार्या के रूप में वो आत्मा दी है, जो सदा मुझसे झगड़ा करती रहती है. इससे मेरा मन उसमें नहीं रमता और हर समय आपका ही ध्यान लगा रहता है.
- प्रभु! आपका कोटि कोटि धन्यवाद. मुझे पत्नी के रूप में ऐसी जीवन - संगिनी दी है कि जो सदा मेरी छोटी से छोटी आवश्यकता का भी ध्यान

रखती है और मेरी आवश्यकताओं की सुध-बुध रखती है, जिससे मैं निःशंक होकर आपका भजन - ध्यान कर पाता हूँ.

- तीनों ही दृष्टांतों में भक्त अपने भगवान का धन्यवाद कर रहे हैं. हालांकि तीनों परिस्थितियां एक - दूसरे से ज़मीन और आसमान का फर्क रखती हैं - परंतु तीनों ही गृहस्थ हैं.

योगीराज भगवान कृष्ण का भी कथन है कि वे संसारी पुरुष जो पूर्ण ईमानदारी से अपने गृहस्थ कर्म का पालन करते हुए भी उसमें लिप्त नहीं होते, मुझे सर्वप्रिय हैं. वे पुरुष इस संसार में ऊपर उठने का प्रयास करते हुए मेरा भजन करते हैं.

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम ने भी लंका विजयोपरांत अपने साथ अयोध्या आए अपने सभी साथियों विभीषण, हनुमान, जामवंत, सुग्रीव, अंगद आदि महावीरों को अयोध्या से वापिस भेजते हुए यही उपदेश दिया कि आप सब अपने-अपने घरों को लौट जाएं एवं अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए मुझे सदा याद रखें.

इस प्रकार और भी अनेक महापुरुषों एवं बड़े-बड़े महात्माओं ने यही संदेश दिया है कि मनुष्य को अपने सांसारिक कर्मों को करते हुए ही अपने उद्धार के लिए प्रयत्नरत रहना चाहिए.

स्वयं भगवान कृष्ण जब गोकुल से कंस के बुलाने पर मथुरा के लिए निकले तो अक्रूर जी ने उनसे कहा कि मैया यशोदा एवं गोपियाँ और पूरा गोकुल त्रस्त हो रहा है. तब भगवान कृष्ण बोले, यदि इस समय मैं यह भावनाओं का चक्रव्यूह नहीं तोड़ पाया तो आगे चलकर दुरात्माओं द्वारा रचे गए चक्रव्यूहों का भेदन कैसे कर पाऊंगा.

वेद पुराणों में हमारे ऋषि मुनियों ने जो चार आश्रमों का जीवन हमें बताया है, वह भी केवल कहने भर को नहीं है, अपितु जीवन को सही ढंग से जीने का तरीका है. इन आश्रमों में प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम अर्थात् शिक्षा ग्रहण कर स्वयं को आने वाले जीवन हेतु परिपक्व करना.

द्वितीय में गृहस्थ आश्रम जहां मनुष्य को अपने सांसारिक दायित्वों की पूर्ति अर्थात् विवाहादि गृहस्थ कार्य करने की शिक्षा दी गई है.

तृतीय में संन्यास आश्रम अर्थात् गृहस्थ में रहकर भी स्वयं को उसमें लिप्त न करना और भगवद्भजन में लगे रहना.

चतुर्थ में वानप्रस्थ आश्रम अर्थात् अपने से जुड़े सभी व्यक्तियों, अपने संबंधियों आदि से विदा लेकर वनगमन करना एवं वहां रहकर प्रभु प्राप्ति का साधन करना. गुरूनानक देवजी एवं अन्य गुरू, महाराजा जनक, संत कबीर, संत रविदास और भी जाने कितने ही संतों से हमारा इतिहास भरा हुआ है, जिन्होंने गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही अपने को आध्यात्मिकता में उस ऊंचाई तक पहुंचाया कि आज भी वे चांद सितारों की मानिंद अंधेरे में भटकती आत्माओं को रास्ता दिखा रहे हैं.

ऐसा नहीं है कि केवल गृहस्थ में रहकर प्रभु प्राप्ति करने का विधान है, वरन् अनेक संतों महात्माओं यथा देवर्षि नारद, महात्मा बुद्ध, स्वामी विवेकानंद आदि ने गृहस्थी में न बंधकर भी आध्यात्मिक ऊंचाइयों को पाया है. परंतु यदि सभी उस राह पर चल निकले तो यह संसार समाप्त ही हो जाएगा. अतः कुछ विरले भगवद् भक्त हैं, जो समय समय पर आकर मानव जाति का मार्ग-दर्शन करते हैं. साधारण मानवों को अपने गृहस्थ जीवन के साथ साथ अपने को भगवद् भक्ति से जोड़ना चाहिए. कमल के समान इस संसार रूपी जल और कीचड़ में लिप्त न होकर अपना जीवन व्यतीत करते हुए अपना एवं योग्य पात्रों का मार्ग-दर्शन करना चाहिए. यदि मनुष्य जीवन के उद्देश्य को पूर्ण करे तो वह भगवद् प्राप्ति का सरलतम उपाय बन सकता है.

"संभव है भगवत् प्राप्ति करते हुए गृहस्थ,
कर्मों में न लिप्त हो बने रहो तटस्थ".

केशव ग्रोवर, सीएमएस, हैदराबाद में वरिष्ठ प्रबंधक हैं.

अरविन्द कुमार

असंभव को संभव बनाने का मंत्र - अभिप्रेरणा

अभिप्रेरणा किसी भी व्यक्ति का वह आंतरिक गुण है, विशेषता है जो उसे अपने निर्धारित उद्देश्यों तथा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ऊर्जावान एवं क्रियाशील बनाकर आगे बढ़कर उसको प्राप्त करने को प्रेरित करती है तथा प्राप्ति में सहायक होती है. दूसरे शब्दों में यह किसी व्यक्ति के अंदर की वह संभावना है, जो उसे कठिन से कठिन अथवा असंभव से लगने वाले कार्य को भी करने के लिए उसकी कार्यक्षमता, उसकी मस्तिष्क की कार्य करने की गति को कई गुना बढ़ाकर उस कार्य को करके, उसके लक्ष्य को प्राप्त करवा कर उसकी क्षमता को मुखरित करती है. उसकी इच्छाओं, अभिलाषाओं एवं जरूरतों की पूर्ति करती है.

अभिप्रेरणा ही व्यक्ति के जीवन को सार्थकता प्रदान करती है, क्योंकि इसके अभाव में व्यक्ति के अंदर महत्वाकांक्षा की कल्पना करना भी व्यर्थ है. यह व्यक्ति की सोच है, उसकी कल्पना शक्ति है, जो कि उसे विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी अपने द्वारा निर्धारित पथ से विचलित हुए बिना, अपने द्वारा बनाये गये लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है.

हमारे जीवन का निर्माण तीन शक्तियों अथवा वृत्तियों द्वारा होता है - इच्छा (चाह), विचार और क्रिया. हमारे मन में किसी कार्य को संपन्न करने की, किसी वस्तु को प्राप्त करने की अथवा किसी लक्ष्य को प्राप्त करने की इच्छा अथवा चाह उत्पन्न होती है. विचार शक्ति द्वारा हम अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की योजना बनाते हैं तथा अपनी क्रियाशक्ति अर्थात् अपने अंदर की शक्ति, जो कि अभिप्रेरणा है, के द्वारा उस कार्य को क्रियान्वित करने का प्रयत्न करते हैं. इसी विविध प्रक्रिया द्वारा विश्व के समस्त क्रियाकलाप संचालित होते हैं तथा समस्त क्रियाकलाप एवं गतिविधियों के मूल में प्रेरक शक्ति के रूप में हमारी इच्छा शक्ति स्थित रहती है.

वास्तविकता तो यह है कि जीवन और जगत में जितनी भी राहें दिखाई देती हैं, वे सब मनुष्य की अदम्य चाह, उसकी अभिप्रेरणा की ही देन है. हम किसी भी आविष्कार को देख लें तो पायेंगे कि वह उसके आविष्कारकर्ता की अभिप्रेरणा थी, जो उसने अपनी चाह को पूरा करने के लिए अपनी समस्त शक्तियों को झोंक दिया तथा अपने लक्ष्य को प्राप्त किया. आज से सौ वर्ष पहले मानव ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी कि वह खुले आसमान में पंछी की तरह उड़कर एक स्थान से दूसरे स्थान, एक देश से दूसरे देश की सैर कर पायेगा. लेकिन यह राइट्स बंधुओं (ऑलिवर और विलीवर) की चाह, अभिप्रेरणा ही थी कि इस असंभव से दिखने वाले कार्य को संभव में परिणत कर दिया. आज हमें अंधकार से निजात दिलाने वाले महान आविष्कारक थॉमस अल्वा ऐडिसन को, "विद्युत बल्ब" का आविष्कार करने के लिए एक हजार बार प्रयोग करना पड़ा, तब जाकर वे बल्ब के आविष्कार में सफल हो सके. विश्व की सबसे ऊंची पर्वत चोटी माउंट ऐवरेस्ट जो कि 1953 तक अजेय मानी जाती थी और सैंकड़ों पर्वतारोहियों के असफल प्रयास द्वारा इसके शिखर तक पहुंचना लगभग असंभव सा करार कर दिया गया था, वही 29 मई, 1953 को एडमंड हिलेरी और तेनजिंग नार्वे द्वारा इस असंभव को संभव में परिणत कर दिया गया तो दूसरी तरफ नील आर्मस्ट्रांग और एडविन एल्ड्रिन द्वारा चांद तक पहुंचने वाली असंभव सी घटना को संभव बनाने के मूल में भी उनकी प्रबल इच्छा शक्ति उनकी आत्मिक प्रेरणा ही रही थी.

दृढ़ इच्छाशक्ति द्वारा कठिन से कठिन कार्य करने के तथा विकटतम समस्याओं से समाधान के उदाहरणों से इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं. मध्यकाल में छत्रपति शिवाजी और महाराणा प्रताप की अदम्य चाह द्वारा शत्रु के चंगुल से निकलने वाली राहों की कहानियों से हमारे देश का बच्चा - बच्चा वाकिफ है. अतीत में चाणक्य का उदाहरण हमारी आँखें खोल देने वाला है, जहां एक साधारण से ब्राह्मण चाणक्य ने नंद वंश के शासक द्वारा अपमानित होने के उपरांत, एक साधारण से बालक को इस योग्य बना दिया कि वह बाद में भारत का अजेय सम्राट बन कर चंद्रगुप्त मौर्य के रूप में विश्व विख्यात हुआ और जिसने चाणक्य की अभिप्रेरणा और इच्छा को पूर्ण करने के लिए नंद वंश का समूल नाश कर दिया.

दक्षिण अफ्रीका में निवास करते हुए एक दिन मोहनदास करमचंद गांधी को एक गोरे व्यक्ति के हाथों अपमानित होना पड़ा, क्योंकि वह एक गुलाम देश के निवासी थे. बस उसी क्षण उन्होंने तय कर लिया कि मैं अपने देश को स्वतंत्र करवा कर रहूंगा तथा अपने मस्तक पर लगे गुलामी के कलंक को मिटा के रहूंगा. गांधीजी के इस संकल्प का पूरा होना सर्वथा असंभव-सा था, क्योंकि मुकाबला एक ऐसी प्रबल शक्ति

से था, जिसके राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता था. परंतु यह मोहनदास की प्रबल इच्छा, उनकी प्रबल अभिप्रेरणा थी, जिसके बल पर वे अंहिसात्मक संघर्ष का मार्ग अपना कर अपने उद्देश्य में सफल रहे तथा लोक ने उन्हें "महात्मा" कह कर उनकी अभ्यर्थना की. वहीं 53 वर्षों तक अपने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में असफल रहने के बावजूद, अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन देश के सबसे प्रतिष्ठित पद पर विराजमान हुये और विश्व विख्यात हुये. यह अभिप्रेरणा की ही शक्ति थी, जिसने एक साधारण से सैनिक हिटलर को जर्मनी का चांसलर बना दिया. इसी प्रकार नेपोलियन और बिस्मार्क के उदाहरण भी हमारे सामने हैं.

हमारे धार्मिक ग्रंथ "रामायण" में निर्वासित श्रीराम की कथा विश्व विख्यात है, जिसमें उन्होंने बंदरों एवं भालुओं की सहायता से अनंत समुद्र को पाट कर त्रिलोकजयी लंकेश रावण पर विजय प्राप्त कर असंभव को संभव में परिणत कर अपना पुरूषार्थ सिद्ध किया. आधुनिक कालीन प्रसिद्ध अभिप्रेरक लेखक स्वेट मार्डेन का कथन भी द्रष्टव्य है, "किसी भी कार्य को करने से पहले आप उस काम को करने की दृढ़ इच्छा मन में कर लें और समस्त मानसिक शक्ति को उस ओर झुका दें तो सफलता निश्चित है".

इसी संदर्भ में एक कथा प्रचलित है कि एक बार एक राज्य में वर्षा न होने के कारण वहां अकाल पड़ गया, किंतु उस राज्य का राजा बड़ा दयालु तथा प्रजावत्सल था तथा उसने अपने भंडार में एकत्रित खाद्य सामग्री को निःशुल्क वितरित करना प्रारंभ कर दिया, परंतु उसी के राज्य में एक ऐसा किसान भी था, जिसने सोचा कि क्या वर्षा के अभाव में खेती करना असंभव है? क्या मैं बिना वर्षा के खेती नहीं कर पाऊंगा? और उसने अन्न लेना अस्वीकार कर दिया तथा अपने राज्य की सीमा में स्थित एक तालाब से पानी ला - लाकर अपने खेत को सींचना प्रारंभ कर दिया. कुछ दिनों के बाद तालाब का पानी भी सूख गया, किंतु निराश न होकर उसने कुछ और दूरी पर स्थित एक नदी से पानी लाने की योजना बनाई. तीन दिनों तक वह और उसके परिवारजन नदी से पानी भर कर लाते रहे और खेत को सींचते रहे. संयोग की बात है कि रात में वर्षा हो गयी, वहीं यह सब बात जब राजा को ज्ञात हुई तो उसने उस किसान को अपने दरबार में बुलवाया और उससे पूछा कि तुमने इस विकटतम परिस्थिति में इस असंभव से कार्य को करने का साहस कैसे जुटाया तो किसान ने जवाब दिया कि महाराज यह मेरी अंतरात्मा की आवाज थी तथा अपनी अभिप्रेरणा के बल पर मुझे इस विपरीत परिस्थिति में कार्य करने की अदम्य क्षमता प्राप्त हुई. किसी ने ठीक ही कहा है कि "जहाँ चाह है, वहाँ राह है".

परमात्मा ने हमको इच्छाशक्ति का वरदान दिया है, फलतः हम स्वतंत्र रूप से निर्णय करने के लिए तथा इच्छित रूप से पुरुषार्थ करने के लिये स्वतंत्र हैं तथा हमारा यह परम कर्तव्य भी है कि हम अपनी इच्छा शक्ति को तन मन से पूरा करने में जुट जायें. प्रकृति भी चाहती है कि हम प्रत्येक अवसर पर, विशेषकर किसी समस्या के उपस्थित होने पर अपनी इच्छा शक्ति की सहायता से अपना मार्ग निर्धारित करने का अभ्यास करें.

एक प्रसिद्ध शायर के शब्दों में "सागर की लहरों के साथ तो सभी चल लेते हैं, लेकिन बहादुरी उसमें है, जो लहरों के विपरीत चलकर उसको चीर कर आगे बढ़ता है", अर्थात् उपलब्ध साधनों की सहायता से तो सभी व्यक्ति अपने मनोरथ को पूरा कर लेते हैं, परंतु वैसे व्यक्ति जो कि इसके विपरीत प्रतिकूल परिस्थिति में अपनी आंतरिक कार्यक्षमता, अपनी अभिप्रेरणा के द्वारा कार्य को सिद्ध करते हैं, वही दूसरों के लिए मिसाल बनते हैं तथा इतिहास के पन्नों में अपना नाम दर्ज करा पाते हैं.

"चाह" का दूसरा नाम संकल्पशक्ति अर्थात् अभिप्रेरणा है. अमेरिका के प्रसिद्ध विचारक एवं निबंधकार इमसेन का कथन है कि इतिहास, पुराण सभी साक्षी हैं कि मनुष्य के संकल्प के सम्मुख देव - दानव सभी पराजित होते हैं. समुद्र मंथन द्वारा अमृत की प्राप्ति से संबंधित पौराणिक आख्यान दृढ़ इच्छा शक्ति द्वारा असंभव को संभव में परिणत कर सफलता प्राप्ति का निदर्शन ही तो है. कोई भी विकट समस्या उपस्थित होने पर हम आत्म मंथन करें और एकाग्र मन से समाधान पर विचार करके दृढ़ शक्ति जागृत कर लें तो समाधान अवश्य निकल आयेगा और हमारी चाह, राह निकाल लेगी.

निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं कि संकल्प ही मनुष्य का वास्तविक बल है तथा संसार में प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक कार्य, संकल्प पर निर्भर है. हिंदी के प्रसिद्ध उपन्यासकार जैनेंद्र कुमार का कथन है, "दृढ़ संकल्प में जीवन सिद्धि है". समस्त विश्व प्रपंच हमारी चाह, हमारी अभिप्रेरणा का ही परिणाम तो है. हमें जितनी भी राहें दिखाई दे रही हैं, उनका निर्माण "चाह" नामक वृत्ति अर्थात् व्यक्ति की अभिप्रेरणा द्वारा ही तो हुआ है.

अंत में एक प्रसिद्ध शायर के लफ़्ज़ों में "कहिये तो आसमां को भी जमीं पर उतार दूं, मुश्किल नहीं है कुछ भी अगर ठान लीजिये".

अरविन्द कुमार, क्षेत्रीय कार्यालय, हैदराबाद में सहायक प्रबंधक (विपणन) हैं.

रणनिपुण बनर्जी

शारीरिक भाषा और सम्प्रेषण

भाषा, भावों के आदान प्रदान का एक साधन है. 'भाषा' शब्द भाष् धातु से बना है, जिसका अर्थ है बोलना. कण्ठ, तालु आदि उच्चारण यंत्र, जिनकी सहायता से हम बोलते हैं , वह भाषा के लिये आवश्यक हैं और इसके साथ साथ लिपि भी भाषा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है.

शारीरिक भाषा इनसान की सबसे स्वाभाविक और प्राकृतिक भाषा है. भाषा सृष्टि से पहले मानव समाज में सम्प्रेषण का माध्यम सिर्फ यही था. अहम बात यह है कि भाषा के व्यवहार से इसका गुरुत्व कम नहीं हुआ, परंतु नयी नयी गवेषणाओं से शारीरिक भाषा के अलग अलग पहलू सामने आ रहे हैं. शारीरिक भाषा सही ढंग से पढ़ना आज एक कला है और यह कला अनेक वैज्ञानिकों के आविष्कारों की देन है. अपनी शाब्दिक भाषा से हम सिर्फ 7% भाव ही व्यक्त कर पाते हैं. 38% व्यक्त होना होता है, वाचन शैली, लहज़े व भाव व्यक्त करने के तरीके से और शेष 55% सम्प्रेषण पूर्ण होता है शारीरिक भाषा से.

शाब्दिक सम्प्रेषण के साथ साथ शारीरिक भाषा के तदनुसार प्रयोग से सम्प्रेषण काफी महत्वपूर्ण हो जाता है. सिर्फ कार्यालयीन सम्प्रेषण ही नहीं, सामान्य जीवन में भी हम इसकी अनेक उपयोगिताएं देखते हैं. इसलिए रेडियो के प्रचार-प्रसार से टीवी का प्रचार-प्रसार अधिक आकर्षक होता है. वास्तव में किसी भी समारोह के दौरान दर्शक प्रस्तुतकर्ता के वक्तव्य और शारीरिक भाषा से मिले भावों को समेकित करके ही समझते हैं. अगर वक्तव्य के साथ शारीरिक संकेत सही नहीं हो तो दर्शकों के पास गलत संदेश पहुंचता है. यह हो सकता है कि वक्ता दर्शकों को अपनी बातों पर विश्वास दिलाने में नाकामयाब रहा हो या उससे भी ज्यादा सम्भावना हो कि दर्शकों ने वक्ता की बातें बिलकुल ख़ारिज करके सिर्फ शारीरिक भाषा ही पढ़ ली हो. क्योंकि जैसे पहले बताया गया है कि यह इनसान की सबसे स्वाभाविक भाषा है और

इसे सीखने के लिए कोई औपचारिक शिक्षा की भी आवश्यकता नहीं है. कोई अगर अंग्रेजी या हिंदी न भी समझता हो, उसे शारीरिक भाषा समझने में फिर भी कोई समस्या नहीं आएगी.

शारीरिक भाषा को समझने के लिये हम पहले तो यह देखेंगे कि किसी भाव को अभिव्यक्त करते समय हम ख़ुद कैसी शारीरिक भाषा का इस्तेमाल करते हैं. हमारे शरीर के विभिन्न अंग विभिन्न भाव या संकेत प्रदान करते रहते हैं. यह हमारी इच्छा के अनुसार भी हो सकता है या तो अज्ञानवश भी ! जब कोई ट्रैफिक पुलिस जान बूझकर किसी गाड़ी की तरफ हाथ दिखाता है तो गाड़ी चालक अपनी गाड़ी रोक देते हैं, क्योंकि यह रोकने का संकेत है. ठीक उसी ढंग से वही गाड़ी चालक जब दाएं या बाएं मुड़ना चाहता है तो हाथ दिखाकर या अपनी गाड़ी में निर्दिष्ट बत्ती जलाकर संकेत देता है. अलग-अलग जगह पर अलग अलग शारीरिक भाषा का उपयोग होता है. जैसे कार्यालय में आंतरिक कामकाज के लिये कुछ विशिष्ट शारीरिक भाषा का उपयोग किया जाता है; सामाजिक स्तर पर कुछ विशिष्ट शारीरिक भाषा मान्यता पाती है. फौजी या प्रतिरक्षा विभाग में भी वैसे ही कुछ विशेष शारीरिक भाषा का प्रचलन है.

कार्यालय में हम किसी का स्वागत करते हैं तो खड़े होकर खुली हथेली से सामनेवाली कुर्सी दिखाते हैं. सहकर्मियों से या ग्राहकों से मिलने पर हाथ मिलाते हैं या दोनों हथेलियां जोड़कर नमस्कार करते हैं. यह शारीरिक भाषा हम अपने संस्कारों और अभिव्यक्ति के अनुसार कार्यालय में और पारिवारिक जीवन में भी उपयोग में लाते हैं. फिर कुछ संकेत किसी विशेष कार्यालय के आंतरिक कामकाज में ही उपयोग में लाये जाते हैं. जैसे वायुसेना में विमान चालक ऊपर की तरफ अपना अंगूठा दिखाकर सब कुछ ठीक-ठाक है, यह सूचना देता है. यही अंगूठा सामाजिक जीवन में किसी को दिखाने से सब कुछ ठीक-ठाक न भी हो सकता है.

शारीरिक भाषा हमारे अज्ञानवश भी प्रकट हो सकती है और इस स्थिति पर किसी के मन की बात पढ़ने का अवसर भी मिल सकता है. बात करते हुए कोई अपने शरीर के अंगों का संचालन कैसे करते हैं, यह देखकर हम आम तरीके से उनकी बात जान सकते हैं. अगर अंग संचालन से उद्भाषित तथ्य से बोली हुई बातों का अंतर होता है तो उनकी बातों पर हम पूरी तरह से भरोसा भी नहीं कर सकते हैं. क्योंकि मुंह की बात मुंह-देखी-बात भी हो सकती है. शारीरिक भाषा आत्मचालित होती है. यह किसी के दिल की बात बोलती है.

हमारी इच्छा के अनुसार हो या न हो, शारीरिक भाषा जबान से बोली भाषा की अनुपूरक है. इसलिये बहुत सारे सम्प्रेषण हम शारीरिक भाषा के जरिए प्रभूत कार्यकारी रूप से सम्पन्न कर सकते हैं. इस विषय पर हम आगे विस्तार से चर्चा करेंगे.

कार्यालय में सम्प्रेषण कई प्रकार के होते हैं - जैसे लिखित या मौखिक, औपचारिक या अनौपचारिक, शीर्ष प्रबंधन से अधीनस्थ कर्मी या इसके विपरीत क्रम से आदि. इसके अलावा ग्राहकों के साथ भी लिखित और मौखिक सम्प्रेषण होता है. शारीरिक भाषा सिर्फ मौखिक सम्प्रेषण के समय इस्तेमाल हो सकती है, क्योंकि लिखित सम्प्रेषण के समय शारीरिक मौजूदगी आवश्यक नहीं है. स्वाभाविक रूप से यह औपचारिक या अनौपचारिक दोनों क्षेत्रों में ही उपयोग में आती है.

ग्राहकों के साथ मौखिक सम्प्रेषण या वार्तालाप के समय शारीरिक भाषा काफी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है. कर्मचारी का ज्ञान, संस्था और उत्पाद के बारे में उसका अपना आत्मविश्वास ग्राहकों की निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करती है. यह आत्मविश्वास और ज्ञान का क्षेत्र ग्राहकों के समक्ष बैठे कर्मचारी की शारीरिक भाषा पर अधिकतर निर्भर रहता है. कर्मचारी की शारीरिक भाषा परिवेश की गंभीरता और उसकी प्रतिबद्धता दर्शाती है. ग्राहक अपने आप को संस्था के लिये महत्वपूर्ण समझते हैं, उस पर उनका निर्णय निर्भर करता है. ऐसा ही कोई एक निर्णय संस्था का भाग्य निर्धारक भी बन सकता है.

शारीरिक भाषा हमारे अंगों का संचालन, बैठने या खड़े होने का ढंग, पोशाक, आंखों का व्यवहार इत्यादि का समेकित रूप होता है. कुछ शारीरिक भाषा के संकेत सर्वव्यापी हैं, जो दुनिया में सारे लोग आसानी से समझ जाते हैं, जैसे आनंद होने पर मुस्कुराना, दर्द होने पर रोना, बिदाई पर हाथ ऊपर उठाकर हिलाना. कुछ शारीरिक भाषा ऐसी है, जो अलग अलग देश या समाज को अलग अलग संदेश देती है. जैसे अंगूठा दिखाने का अर्थ पश्चिमी देशों में "अच्छे" हैं, वहीं इटली में "एक" और जापान में "पांच" है. भारत के पूर्वी प्रदेशों में अंगूठे का मतलब 'शून्य' या 'खाली' होता है. इसलिए शारीरिक भाषा प्रयोग करते समय प्रादेशिक संस्कारों को भी ध्यान में रखना जरूरी है. सम्प्रति टी वी के माध्यम से अमरीकी संस्कार विश्वव्यापी प्रचारित हो रहे हैं. इसलिये ज्यादा से ज्यादा लोगों की शारीरिक भाषा पर अमरीकी प्रभाव दिखायी देता है. आजकल यह सार्वजनिक रूप से उपयोग हो रहा है.

सामाजिक स्तर पर आज भी हमारे देश की पारम्परिक श्रद्धा और सम्मानसूचक के रूप में शारीरिक भाषा का प्रयोग प्रचलित है. बड़ों के सम्मानपूर्वक पैर छूना, झुककर

नमस्कार करना, दोनों हथेलियां जोड़कर नमस्कार करना, पवित्र त्योहारों पर गले लगाना आदि सामाजिक शारीरिक भाषाएं आज भी हमारे देश में प्रभावी हैं.

शारीरिक भाषा शैली पर नज़र डालते हुए हम मूलतः कुछ अंग संचालन पर ध्यान देंगे. परंतु यह अवश्य ज्ञात रखना है कि आस-पास की परिस्थितियाँ भी शारीरिक भाषा को प्रभावित करती हैं. शारीरिक स्वस्थता, सकारात्मक सोच-विचार, सार्थक भावनाएं आदि एक प्रभावी सम्प्रेषण के लिए आवश्यक होती हैं. अन्यथा सही तरीके से शारीरिक भाषा का प्रयोग करके सम्प्रेषण का मानदण्ड उत्कृष्टता के स्तर तक पहुँचाना नामुमकिन है.

हाथों का प्रयोग :

खुली हथेली निरंतरता और विश्वस्तता का प्रतीक है. हिंदू देवताओं की मूर्ति या चित्रों में भी हम ऐसी भंगिमाएं देखते हैं. विभिन्न देशों के बड़े-बड़े नेता और मनीषियों ने भी खुली हथेली का खुले आम प्रयोग किया है और आज भी करते हैं. इससे लोगों के मन में विश्वास और आस्था का यकीन दिलाया जाता है. फिर बंद हथेली शासन और प्रताप विस्तार करने की निशानी है. जर्मनी के राष्ट्रपति हिटलर ने इस शैली का काफ़ी इस्तेमाल किया था.

हाथ मिलाने की परम्परा पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से हमें मिली है और अब यह एक अंतरराष्ट्रीय संस्कार बन गई है. पर हाथ मिलाते हुए कोई अगर दूसरे का हाथ अपने दोनों हाथों से पकड़ता है तो वह उनकी अधीनता स्वीकार करने की सूचना देता है. जब दो कॉरपोरेट प्रभारी फोटोग्राफर के सामने हाथ मिलाते हुए खड़े होते हैं तो ज्यादा प्रभावशाली व्यक्ति विपरीत व्यक्ति को अपने बाएं रखना पसंद करता है.

अपने हाथों को परस्पर मोड़ के रखना, नाटकीय रूप से किसी की विश्वसनीयता को 50% घटा देता है. ऐसी शारीरिक शैली से उस व्यक्ति की बाहरी दुनिया के साथ लेन-देन न करने की इच्छा ज्ञात होती है. शरीर के पीछे हाथ छुपाके रखना भी निरंतरता के अभाव को सूचित करता है. बात करते समय दोनों हाथ, एक दूसरे से रगड़ने पर आत्मविश्वास कम होना साबित करता है - भले ही उस समय होठों पर हंसी हो.

आंखों का उपयोग :

कहते हैं कि दिल की बात आंखों से उभरती है. जबान जो भी बोले, आंखें कभी झूठ नहीं बोलती हैं. इसलिए किसी भी वार्तालाप के समय हम आंखों की तरफ

देखते हैं. सामान्य रूप से आंखों से आंखें मिलाकर झूठ बोलना कठिन होता है. झूठ बोलते समय ज्यादातर लोगों की आंखें झुक जाती हैं. अगर बात करते समय आप बोलने या सुनने वालों की आंखों की तरफ न देखें या आंखें सदा चंचल रहें तो यह भंगिमा बातों पर आपका नियंत्रण न होने की सूचना देती है. आंखों से आंख मिलाकर बात ही प्रभावी सम्प्रेषण का सबसे बड़ा आधार होता है.

बैठने का ढंग :

किसी कार्यालय या ऑफ़िस में हम यह देखने से अवश्य चूकते हैं कि बॉस की कुर्सी बाकी अधीनस्थ कर्मियों की कुर्सी से ऊंची होती है. यह कार्यालय का प्रशासनिक सोपान सूचित करती है. मंदिर में देवता का आसन भक्तों के आसन से ऊपर होता है. नीचे आसन पर बैठना अनादर व्यक्त करना होता है.

कुर्सी के पीछे टेक लगाकर बैठना एक अनौपचारिक भंगिमा है और यह सामनेवालों को गलत संदेश देता है. इससे आगंतुक सोच सकते हैं कि संबंधित व्यक्ति उनसे बात करने के इच्छुक नहीं है. फिर टेबल के करीब आकर हाथ सामने फैलाकर बात करने से आलोचना का पर्याप्त आग्रह दिखाया जाता है. कुर्सी के हत्थे पर या सामने टेबल पर हाथ रखना स्वामित्वसूचक है. कुछ लोग कहीं भी बैठते हैं तो तुरंत अपने पैर सिलाई मशीन चलाने जैसे नचाते रहते हैं या सामने कोई टेबल मिले तो उसपर पैर उठा कर रख देते हैं. पहले वाला लक्ष्यविहीनता और दूसरा स्वामित्व सूचक है. सामाजिक रीति के अनुसार दोनों ही अनुचित हैं.

सिर और कंधा :

सिर उठाकर चलना भरपूर आत्मविश्वास का प्रतीक है. सकारात्मक सोचने पर हमारा सिर ऊपर से नीचे आंदोलित होता है. नकारात्मक स्थिति पर ये दाएं से बाएं चलता है. वैज्ञानिकों का कहना है कि यह आदत माँ का दूध पीते समय से ही बच्चा सीखता है. सिर सामने, दाएं या बाएं झुक जाना अधीनता स्वीकार करना सूचित करता है. शोक या असहायता व्यक्त करते समय भी सिर सामने झुकता है.

मुस्कुराना :

हंसना और मुस्कुराना शायद सकारात्मक सोच की सबसे ज्यादा सशक्त अभिव्यक्ति है. मुस्कुराते हुए चेहरा सामने दिखने पर हम खुली मानसिकता से सम्पर्क बनाने के लिये प्रस्तुत होते हैं. चाहे वह ग्राहक हो या बॉस, मुस्कुराना सब पसंद करते हैं. पर मुस्कुराना अगर फीका हो तो उसका असर नकारात्मक हो सकता

है. हार्दिक मुस्कुराने से होंठों के साथ साथ आंखों में भी उसकी झलक दिखती है. फीकी मुस्कान सिर्फ दो होठों के बीच दबी हुई रहती है.

सहायक उपकरण :

जैसे पहले बताया गया था कि शारीरिक भाषा सिर्फ किसी का शारीरिक अंग-संचालन ही नहीं, आस-पास की परिस्थितियों पर भी निर्भर है. एक व्यक्ति के साथ मौजूद सहायक उपकरण भी उसकी शारीरिक भाषा को प्रभावित करते हैं. इसमें शामिल हैं - चश्मा, बैग, कलम, टाई, घड़ी, पोशाक, टेबल का विन्यास इत्यादि. संस्था के कारोबार और व्यक्ति के पद और हैसियत पर इन उपकरणों का विन्यास निर्भर करता है. टेबल पर उपकरणों के आयोजन से ऐसा लगता है कि कार्यालय में संगठन क्षमता मज़बूत है. ग्राहकों के सामने अपने आप को पेश करते हुए इस विषय पर ध्यान रखना ज़रूरी है कि इन सब ने क्या समेकित संदेश पहुंचाया है. पोशाक की मलिनता कहीं संस्था की दीनता तो प्रकट नहीं कर रही है?

सतर्कता और शिक्षण :

आकर्षक शारीरिक भाषा के लिए हमें ध्यान में रखना है कि मुखमण्डल अभिव्यक्ति-पूर्ण हो और मुख पर मुस्कान हो; आँखों की दृष्टि स्वच्छ और स्पष्ट हो, सिर का संचालन स्वाभाविक हो, वार्तालाप आमने-सामने हो और खड़े होकर या बैठकर जैसे भी हो, आराम-दायक दूरी बरकरार रहे.

अब तक बतायी गयी शारीरिक भाषा की विभिन्न शैली से न हम सिर्फ सामनेवालों की शारीरिक भाषा सही ढंग से पढ़ पाएंगे, बल्कि ध्यान से अपनाने और अपनी मौखिक भाषा के साथ सही संतुलन के साथ जुड़कर एक अति संवेदनशील और प्रभावी सम्प्रेषण का आधार भी प्रस्तुत कर सकते हैं. शारीरिक भाषा मौखिक सम्प्रेषण का एक ऐसा हिस्सा है, जो कि एक व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के अध्ययन से ही पूरी तरह से प्रकाश में आता है. यह सिर्फ हाथ, सिर, पैर या मुस्कान के संकेत को लेकर अलग अलग भावार्थ तैयार करना नहीं या फिर एक वाक्य विश्लेषण सिर्फ कुछ शब्दों का अर्थ समझाना ही नहीं, बल्कि शारीरिक भाषा समझने से हम दूसरों के दिल की बात समझ सकेंगे और अधिक संवेदनशीलता से सम्प्रेषण कर पायेंगे. ग्राहक सेवा में यह संवेदनशीलता काफी महत्वपूर्ण है. याद रखना है कि जैसे हमारी शारीरिक भाषा पढ़कर कोई हमारे बारे में निर्णय ले सकता है, वैसे ही उनकी शारीरिक भाषा पढ़कर हमें भी उनके विचारों को समझना है.

रणनिपुण बनर्जी, यूनियन लोन पॉइन्ट, कोलकाता में प्रबंधक हैं.

संतोष श्रीवास्तव

अध्यात्म एवं कार्यालय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज में रहते हुए, अपना जीवन सुख एवं शांति से व्यतीत करना चाहता है. इसके लिए वह ध्यान, योग एवं साधना का सहारा लेता है. यदि मानव मन संतुष्ट एवं शांतचित्त है तो वह अपने कार्य को सुचारु रूप से करने के लिए प्रेरित होगा. वास्तव में कार्यस्थल पर अपने कार्य को लगन, मेहनत और ईमानदारी से पूरा करना ही अध्यात्म का निचोड़ है. भारतीय दर्शन के अनुसार जीवन की सार्थकता जीवन को सुसंयत तरीके से जीने की है.

मानव जीवन में अध्यात्म का महत्व :

ऋग्वेद में कहा गया हैः

"ओऽम् समानो मंत्रः समिति समानी समानं मनःसहचित्तमेषाम्
समानं मंत्रममिमन्त्रयेवः समानेन वो हविषा जुहोमि।"

अर्थात् समान विचार, समान मन, समान चित्त स्थिति और एक समान विचार श्रृंखला और समान आहार की भावना से युक्त होकर मनुष्य का जन्म हुआ. यह मानव का पहला चरण था, दूसरा चरण शुरु हुआ उसके संघर्ष से, जब उसने सब कुछ समान रखते हुए भी अन्यों से आगे जाने की सोची, सफलता का स्वाद महसूस किया और उसको लगा कि मैं श्रेष्ठ हूँ, क्योंकि मैं सफल हूँ, श्रेष्ठ हूँ अर्थात् जो मेरे पास है, उससे ज्यादा चाहिए और इसके लिए जो मुझे करना था वो मैंने किया. बस यहीं से शुरू हुआ सफलता और असफलता के बीच संघर्ष, मानव की प्रतिस्पर्धायुक्त जीवन यात्रा.. इस भाव के साथ कि ... "सर्व कार्येषु सर्वदा."

आधुनिक परिवेश में उपर्युक्त विवेचन में स्पष्ट है कि मानव जन्म के साथ ही उसको संघर्षमय जीवन की प्रेरणा मिल जाती है, क्योंकि जहां प्रतिस्पर्धा होगी, जहां

श्रेष्ठता की भावना होगी, सफलता अथवा असफलता की बात होगी, वहां कर्म का पहलू स्वतः ही ऊपर उठ जाता है.

अध्यात्म एवं ज्ञान का संबंध :

ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में यदि हम यहां पूर्णता की चर्चा नहीं कर पाये तो अध्यात्म का उद्देश्य अधूरा रह जायेगा, क्योंकि पूर्णता में ही सम्पूर्ण जीवन सार्थक है. पूर्ण चन्द्रमा ही पूर्णिमा कहलाता है एवं पूर्ण लेखन ही ग्रंथ बनता है, इसी तरह पूर्ण ज्ञान प्राप्त व्यक्ति पंडित होता है. अपने कार्यस्थल पर पूर्ण ज्ञान [नॉलेज] से कार्य करने वाला व्यक्ति ही श्रेष्ठ एवं सफल समझा जाता है.

अध्यात्म में "पूर्णता" का सिद्धांत एवं कार्यालय में उसकी उपयोगिता :

"ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते,
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते."

याने कि "सब कुछ पूर्ण है, फिर भी पूर्ण की अपेक्षा रहती है, पूर्ण में से पूर्ण देने के बाद भी पूर्ण शेष रह जाता है" - फिर यह पूर्णता क्या है, क्यों हम पूर्णता के पीछे दौड़ते हैं. मनुष्य अपने ज्ञान, अन्तर्ज्ञान, विज्ञान की सीढ़ियां लगाकर पूर्ण होना चाहता है. आज के वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण, उदारीकरण एवं भौतिकवादी युग में पूर्णता के मायने विश्व प्रतिस्पर्धा में अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ना है एवं अपने को स्थायित्व देना है. यह तो स्पष्ट है कि यदि कोई देश अथवा संस्था विश्वस्तरीय आर्थिक मैराथन दौड़ में पिछड़ जायेगी तो उसका अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा और उसे अपूर्ण माना जायेगा. इसलिए पूर्णता प्राप्त करना ही "जीवन" का लक्ष्य होना चाहिए. पूर्णता "संस्था" के स्थायित्व का आधार है और यह स्थायित्व उसे प्राप्त होता है, अपने कार्यालय के कर्मठ कर्मचारियों से. किसी संस्था एवं कर्मचारियों में जितना आपसी विश्वास, तालमेल एवं खुला संवाद होगा, वह संस्था उतनी ही उन्नति के शिखर तक पहुँच सकेगी. यही आधुनिक अध्यात्म कहलाता है. आज का अध्यात्म केवल हिमालय की चोटियों तक ही सीमित नहीं रह गया है, वह घर-घर तक पहुँच गया है, क्योंकि आज के योगी ज्ञान, विज्ञान, तकनीक, आर्थिक सुदृढ़ता प्रदान करते हैं.

अध्यात्म एवं कार्यालय में "मनन" का महत्व :

कहा गया है कि कम बोलने वाला एवं अधिक मनन करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ होता है. व्यक्ति के द्वारा अनर्गल बोल कर अपनी शक्ति क्षीण करना एवं चार लोगों के सामने अपने आधे अधूरे ज्ञान का प्रदर्शन कर, अपनी छवि धूमिल करने का कोई औचित्य नहीं

होता. हम तभी बोलें, जब संबंधित विषय का हमें ज्ञान हो, उसकी विषयवस्तु से हम परिचित हों एवं हमारे बोलने से सामने वालों को कुछ हासिल हो. प्रायः देखा गया है कि अधूरे ज्ञान वाला व्यक्ति ज्यादा बोलता है. व्यक्ति को विषयवस्तु का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए सतत् मनन एवं चिंतन करना चाहिए और मनन भी "मंत्र" स्वरूप हो. "मननात् त्रायते इति मंत्रः" अर्थात "मनन" करने पर जो रक्षा करे वही "मंत्र" है. अपनी संस्था के सुचारू संचालन, उन्नति, सुदृढ़ता तथा संतुष्टिपूर्ण ग्राहक सेवा में मनन एवं उसको अपने जीवन में ग्रहण करने का बहुत महत्व है.

अध्यात्म एवं कार्यालय के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य के गुणों का महत्व :

अध्यात्म के हर पहलू में यह कहा गया है कि मनुष्य को गुणों को ग्रहण करना चाहिए, चारित्रिक एवं कर्म संबंधी गुणों में सुधार लाना चाहिए. मनुष्य की पहचान उसके गुणों से होती है. अपने कर्मों के कारण ही राम देवता एवं रावण दानव कहलाया.

चाणक्य नीति में कहा गया हैः

"गुणैस्तमता याति नोच्चैरासन संस्थितः
प्रसाद शिखरोस्थोऽपि काकः किं गरुडायते"

अर्थ है - "मनुष्य अपने श्रेष्ठ गुणों के कारण ही उत्तम होता है, किसी बड़े भवन के शिखर पर बैठने से कौआ गरुड़ नहीं बन सकता है."

यह नीति सूत्र आज के युग में भी प्रासंगिक है. वस्तुतः पद की एक गरिमा होती है और उस गरिमा का आभास "शुभ" उस स्थिति में ही लगता है, जब उस पर आसीन व्यक्ति अपने गुणों का अपनी चारित्रिक शक्ति से संतुलित बनाये रखे, अन्यथा "स्वाभिमान" अचानक "अभिमान" में परिवर्तित हो जाता है और पद की गरिमा धुंधलाने लगती है. गहराई से देखा जाये तो गुणों का मूलतत्व होता है, व्यक्ति का अपना "चरित्र" और उसका निर्माण होता है संस्कारों से. वास्तव में यह एक ऐसा चक्र है जो परस्पर पूरक का कार्य करते हुए व्यक्ति के चारित्रिक विकास के साथ साथ उस परिवार, समाज एवं संस्था का भी विकास करता है.

कार्यालय में हमारी पहचान तभी सार्थक होती है, जब हम अपनी चारित्रिक विशेषताओं से अपनी एक पहचान बनायें. हमारे कर्म ही हमारे गुणों को उजागर करते हैं. परन्तु जब सफलता की ऊँचाई के करीब पहुँचते हुए व्यक्ति में "अहं" आ जाता है, तब व्यक्ति का चारित्रिक पतन शुरु हो जाता है और उसके अब तक किये गये प्रयास क्षीण हो जाते हैं.

अध्यात्म एवं मानव संसाधन तथा प्रबंधन :

कार्यालय में मानव संसाधन एवं प्रबंधन एक महत्वपूर्ण घटक होता है, जो अपने कर्मचारियों के बीच प्रेरणा, ऊर्जा देने के साथ साथ उनके गुणों का भी विकास करता है. कर्मचारियों के चरित्र को विकसित करने में संस्था का महत्वपूर्ण योगदान होता है. पूर्ण वेतन, सुविधाएं, पारस्परिक विश्वास, उन्नति के पूर्ण अवसर, कार्य का उचित एवं समग्र मूल्यांकन तथा कर्मचारियों का सम्मान ऐसी बातें हैं, जो कर्मचारियों के चरित्र के विकास में सहायक होती हैं. मात्र अपेक्षा से मानव गुणों का विकास नहीं होता है. साथ ही सैद्धांतिक विचारों से ऊपर उठते हुए, व्यावहारिक विचार पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए. कहा भी गया है कि : "बिना चरित्र एवं विनम्रता का व्यक्ति, जानवर से भी ज्यादा खतरनाक होता है." चूंकि हमारा बैंकिंग जगत "धन" एवं "जन" के अधिक करीब है, इसलिए हमारे यहां "मन" का अधिक महत्व है, जो चरित्र, ईमानदारी, लगन, मेहनत जैसे गुणों का समूह है.

"सफलता" भाग्य की नहीं, कर्म की अपेक्षा करती है :

गीता में कहा गया हैः

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन,
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सड.गोस्त्वकर्मण्ये."

तात्पर्य यह कि "तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फलों में कभी नहीं. इसलिए तू कर्मों के फल का हेतु मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो."

हमारा कार्यस्थल मंदिर है, हम कर्ता हैं तथा हमारी पूजा हमारा कर्म है. अध्यात्म की दृष्टि के प्रति निष्ठा भाव से अपने कर्म करना ही हमारी इष्ट आराधना है. अध्यात्म एवं कार्यालय [कार्यस्थल] एक दूसरे के पर्याय हैं, इसमें अध्यात्म जुड़ जाने पर यह अपेक्षा और की जाती है कि व्यक्ति ईमानदारी से अपना कार्य करने के लिए प्रेरित हो.

आत्मविश्लेषण की अवधारणा एवं उसका महत्व :

अध्यात्म के अंतर्गत ईश्वर ने व्यक्ति को आत्मविश्लेषण का एक अतिरिक्त गुण दिया है, इसलिए जरुरी है कि व्यक्ति अपने जीवन में इसका सतत उपयोग करते रहें. 24 घंटों में रात को सोने के पूर्व हर व्यक्ति के पास स्वतः ही 10 मिनट ऐसे आते हैं, जब एक बार उसके सामने पिछले 24 घंटे का घटनाक्रम एक बार घूम जाता है और यही समय

होता है आत्मविश्लेषण का. ईश्वर एक बार यह मौका जरुर देता है कि यदि व्यक्ति ने दिन भर में कुछ गलत किया है तो उसे वह सुधार ले. दर्शनशास्त्र के अनुसार यह बहुत संवेदनशील एवं निर्णायक क्षण होते हैं, यदि व्यक्ति आत्मविश्लेषण करते हुए, अगले दिन अपनी गलती में सुधार कर ले तो वह किसी बड़ी मुसीबत से बच सकता है.

कार्यालय एवं मानसिक तनाव प्रबंधन, एक नयी अवधारणा :

बैंकिंग जैसे कार्य क्षेत्र में काम का दबाव, नवीन तकनीक, उच्चाधिकारियों की उच्च अपेक्षाओं से कभी - कभी अधिकारी / कर्मचारी विचलित हो जाते हैं. ऐसे में वह कभी ग्राहक से उलझ जाता है तो कभी अपने उच्चाधिकारियों से और मानसिक तनाव का दोहरा दबाव उस पर आ जाता है.

मानव संसाधन के अंतर्गत "मानसिक तनाव प्रबंधन" की एक नयी अवधारणा आज विकसित हो रही है. इसमें संस्थान पहले यह निर्धारित करते हैं कि हमें अपने कर्मचारी से अधिक से अधिक कितने मानसिक तनाव में कार्य लेना है, इसके बाद प्रारंभिक प्रशिक्षण के दौरान कर्मचारी पर क्रमानुसार मानसिक तनाव डाला जाता है और यह मालूम किया जाता है कि संबंधित कर्मचारी उस मानसिक तनाव में भी बिना विचलित हुए अपना कार्य सुगमता से कर रहा है तो वह संबंधित कर्मचारी सफल माना जाता है. इसका फायदा यह होता है कि अपने कार्यक्षेत्र में कार्य के दौरान कर्मचारी संस्था को बिना नुकसान पहुँचाए एवं स्वयं भी मानसिक एवं शारीरिक नुकसान से बचते हुए, सफलतापूर्वक कार्य करता रहता है.

कार्यालय एवं सहज योग :

अपने कार्यस्थल पर कार्य करते हुए भी व्यक्ति यदि सहज योग का सहारा ले तो काफी हद तक उसका तनाव एवं थकान दूर हो सकती है. आज के समय में व्यक्ति की जिन्दगी बहुत भागमभाग एवं तनावयुक्त हो गई है, जो व्यक्ति को विभिन्न बीमारियों में घेर लेती है. ऐसे में सहज योग उसका तनाव कम करने में मददगार हो सकता है. सहज योग में कर्मकांड की जगह "ध्यान" का सहारा लिया जा सकता है.

कार्यस्थल पर मानसिक शांति के उपाय :

1. "ओऽम ॐ" का चमत्कारः ब्रह्मांड में "ओऽम ॐ" की प्रतिध्वनि सदैव गूंजती रहती है. जिस तरह बिजली के तार में करंट का संचार हमेशा रहता है, हमें जहां से करंट की जरूरत होती है, हम वहां तार जोड़ कर बिजली ले लेते हैं. इसी तरह अपने कार्यस्थल पर अपनी सीट पर बैठे हुए ब्रह्मांड में गुंजायमान होने वाले शब्द "ॐ" का

मन ही मन कुछ क्षण के लिए उच्चारण करें, यह ध्यान का सहज योग है, जो हमें असीम मानसिक शांति देगा एवं मानसिक तनाव कम करेगा.

2. इष्ट प्रतिमा की उपादयेता : अपने कार्यस्थल पर अपने इष्ट की प्रतिमा स्थापित करें, इससे मन में शांति रहेगी एवं कार्य के लिए प्रेरणा मिलती रहेगी.

3. प्रार्थना का महत्व : कार्य समय आरंभ होने के पूर्व कार्यालय में समस्त स्टाफ सदस्यों के साथ सामूहिक प्रार्थना करें. इससे पूरा दिन आत्मविश्वास के साथ बीतेगा.

"अच्छी सोच, अच्छे परिणाम" का महत्व :

अध्यात्म में "सोच" का बहुत महत्व है, अपने कार्यस्थल पर अपने कार्य, अपने सहकर्मियों के प्रति अच्छी सोच रखनी चाहिए. अच्छी सोच के साथ किये गये कार्य के परिणाम भी निश्चित रूप से अच्छे ही होंगे.

बैंकिंग क्षेत्र में हम देखेंगे कि शाखाओं के लिए "लक्ष्य" निर्धारित किये जाते हैं, अब यदि शाखा प्रबंधक, लक्ष्य देख कर यह सोच बना लें कि "यह तो बहुत ज्यादा है, मैं इसे पूरा नहीं कर पाऊंगा" तो वह कार्य शुरू करने के पहले ही निराश हो जायेगा. लेकिन यदि दूसरा शाखा प्रबंधक उस लक्ष्य को उत्साह से स्वीकार करता है, उसके प्रति आशावान रहता है, अच्छी सोच रखता है और अपने काम में लग जाता है तो इसके परिणाम अच्छे निकलेंगे और वह लक्ष्य प्राप्त कर लेगा. इसलिए अपने कार्यालय के कार्य के प्रति हमेशा अच्छी सोच रखनी चाहिए, जिसके परिणाम अच्छे ही होंगे.

"विश्वासी बनना, अंधविश्वासी नहीं" :

अध्यात्म में विश्वास को तो स्थान है, परन्तु अंधविश्वास को नहीं. कार्यालय में अपने कार्य को आत्मविश्वास के साथ पूर्ण करना चाहिए. कार्य में पारदर्शिता विश्वास को जन्म देती है. हर कार्य के लिए मुहूर्त देखना कार्य में विलम्ब करता है एवं अंधविश्वास की पराकाष्ठा है. हर दिन, हर समय एवं हर क्षण शुभ होता है, बस जरूरत होती है, कार्य को ईमानदारी, लगन से पूर्ण करने की.

सफलता एवं उन्नति में बाधक है - "क्रोध" :

वैज्ञानिक शोध में यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि 60 सेकेण्ड का क्रोध व्यक्ति के शरीर को 600 सेकेण्ड तक विचलित रखता है, क्रोध से जुड़े तत्व व्यक्ति की ऊर्जा का क्षय करते हैं. हर परिस्थिति में व्यक्ति अपने अनुकूल परिणाम चाहता है, लेकिन सामने वाले व्यक्ति की भी सीमाएं एवं मजबूरियां होती हैं. इन्हीं के चलते अनुकूल परिणाम

प्राप्त नहीं हो पाते हैं तो व्यक्ति क्रोधित हो जाता है. मनुष्य के अंदर शारीरिक, जैविक, परिवेश, संस्कार, दृष्टिकोण क्रोध के उत्प्रेरक स्रोत होते हैं. इसी के कारण मनुष्य का स्वभाव चिड़चिड़ा, कड़वे वचन बोलने वाला, कुंठाग्रस्त, ईर्ष्यापूर्ण होता है. प्रबंधकीय क्षेत्र में इस तरह की परिस्थिति सामान्यतः बनती रहती है, लेकिन अध्यात्म में इसका समाधान बहुत उत्तम तरीके से किया गया है, जिसके अंतर्गत "सामने वाले की बात को सुनना एवं उसका सर्वमान्य हल निकालना है. अपनी ही बात थोपने के बजाय, बीच का रास्ता निकालना चाहिए." हमेशा अपनी ही चलाना "अहं" को जन्म देता है.

व्यक्ति थोड़े से प्रयास से अपने क्रोध को नियंत्रित कर, अपनी ऋणात्मक ऊर्जा को सकारात्मक ऊर्जा की ओर ले जा सकता है. सकारात्मक ऊर्जा के साथ व्यक्ति उचित निर्णय लेने की स्थिति में जल्दी पहुँच जाता है, क्योंकि वह ऋणात्मक ऊर्जा के चलते तर्क-कुतर्क से बच जाता है, इससे समय की बचत होती है. सकारात्मक ऊर्जा जीवन को एक नया आयाम देती है.

"सभी के कल्याण की भावना का महत्व" :

अध्यात्म में यह बात बार-बार कही गई है कि जब एक समूह में कार्य किया जा रहा हो, तब ईर्ष्या, दुर्भावना, कपट आदि को कोई स्थान नहीं दिया जाना चाहिए. सभी के कल्याण की भावना, संस्था को उच्चतर पायदान तक पहुँचाती है. कहा भी गया है कि "फूल नहीं बन सको तो कांटे भी मत बनना. किसी का भला नहीं कर सको तो बुरा भी मत करना." "सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे संतु निरामयाः..." की धारणा जहां स्वयं हमें शांति प्रदान करती है, वहीं सामने वाले को भी संतुष्टि एवं पूर्णता प्रदान करती है. कबीर ने भी कहा है "ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोये", याने कि जीवन में वाणी, संस्कार, मन एवं कर्म का बहुत अधिक महत्व है.

अध्यात्म, मानव मन को शांति प्रदान करता है, अच्छे एवं बुरे का भेद बताता है एवं सद्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है और यही सब बातें अपने कार्यस्थल एवं कार्यालय में बहुत प्रासंगिक एवं उपयोगी हैं. अध्यात्म, आत्मिक उन्नति के साथ-साथ अपनी संस्था, परिवार, समाज एवं देश की उन्नति के लिए भी विशेष महत्व रखता है. कॉलिन पॉवेल ने भी कहा हैः "हममें से कोई अपने अतीत को नहीं बदल सकता, परन्तु हम सभी अपने भविष्य को बदल सकते हैं."

संतोष श्रीवास्तव, स्टाफ प्रशिक्षण केन्द्र, भोपाल में आशुलिपिक हैं.

दीपक व्ही. राचेलवार

हर समस्या एक चुनौती : हर चुनौती एक अवसर

इस शीर्षक पर विचार करने पर महसूस होता है कि "समस्या, चुनौती, अवसर" इन तीनों शब्दों का अटूट गठबन्धन है. समस्या से चुनौती और चुनौती से अवसर का निर्माण होता है. विचारणीय है कि समस्या क्या है, जो चुनौती के साथ अवसर को सामने लाती है. मानव जीवन एक ऐसा चौराहा है, जहाँ चौराहे से सही मार्ग की ओर बढ़ना एक चुनौती है और वहां सही राह का चयन करने का एक अवसर भी उसके पास है. जीवन की डगर पर चलते हुए जन्म से लेकर मौत तक मार्ग पर आने वाला हर अवरोध अपने आप में एक समस्या है. कई समस्याएं नैसर्गिक या कहा जाए तो हर व्यक्ति के साथ रहती ही हैं. इन्हें रोकना असंभव नहीं है. प्राकृतिक समस्याएं अर्थात् बाढ़, सूखा, भूकम्प, बीमारियां आधुनिक विज्ञान के सहयोग से दूर की जा सकती हैं.

कुछ समस्याओं का निर्माण मानव स्वयं करता है, उसके सामने आई चुनौती उसको अवसर देती है. हर कोई स्वनिर्मित समस्या से प्राप्त चुनौती का मुकाबला करता है, लेकिन प्राप्त अवसर का उपयोग करते हुए समस्या का निराकरण एक या दो प्रतिशत ही कर सकते हैं. सामान्यतः समस्या चुनौती और अवसर का गठबंधन इंसान को कार्य से इच्छा शक्ति, दूरदृष्टि, मूल्यांकन-क्षमता के साथ आगे बढ़ने का एक अवसर देता है.

क्या सभी समस्याएं चुनौती बनेंगी?
क्या सभी चुनौतियां अवसर भी देंगी?

इस प्रश्न पर विचार भी आवश्यक है

इंसान के जन्म से मौत तक असंख्य समस्याओं का भंडार भरा है. जबकि समस्या से बनी चुनौती से प्राप्त अवसर का उपयोग नहीं किए जाने के कारण या हार मानने वालों के लिए समस्या और चुनौती निरर्थक हो जाती है.

एक बार एक शासकीय अस्पताल में छः परिवार की गर्भवती बहुएं भर्ती थीं. तीन ने लड़कों को जन्म दिया और तीन ने लड़कियों को -

1. राजेश को यह दूसरा पुत्ररत्न प्राप्त हुआ.
2. मनीष को एक बेटी के बाद दूसरा पुत्र प्राप्त हुआ.
3. दिनेश को पहली बेटी के बाद दूसरी बेटी मिली.
4. सुरेश को पहली बेटी के साथ दूसरा बेटा मिला.
5. मुकेश भी दो बेटियों का पिता बन गया.
6. विनोद भी दो बेटों का पिता बन गया.

डॉक्टर के द्वारा शासन के नारे हम दो हमारे दो के अनुसार उन्हें गर्भ निरोधक आपरेशन करवाने की सलाह दी गई. पारिवारिक कलह से बचने के लिए पत्नी की और घर के बुजुर्गों की अनुमति प्राप्त करके ही आगे कदम उठाया जाए, के विचारों ने उनके सामने एक समस्या बना दी.

राजेश और मनीष ने डाक्टर को तुरन्त इस कार्य के लिए अनुमति दे दी. उनके सामने समस्या ही नहीं रही, इसलिए चुनौती और अवसर का निर्माण ही नहीं हो सकता है. दिनेश ने घर के बुजुर्गों के साथ अपनी पत्नी को भी समझाया कि आजकल लड़की और लड़का एक समान माने जाते हैं, इसलिए आप अपनी अनुमति दीजिए, लेकिन इस आशा के साथ कि तीसरा बेटा होगा, माता-पिता मना करते रहे. दिनेश का कहना था - क्या आपकी आशा इस बात की गारंटी देगी कि तीसरा बेटा ही होगा, अगर बेटी हुई तो? मेरी सलाह मानिए और आपको बेटे की चाहत है तो हम अनाथाश्रम से एक लड़का गोद ले लेंगे. एक अनाथ बच्चे की जिन्दगी बन जाएगी और समाज भी आपकी तारीफ करेगा. अंत में सबकी सहमति प्राप्त करके उसने डाक्टर को स्वीकृति दे दी. अवसर का सही उपयोग किया.

सुरेश, मुकेश और विनोद को घर के बुजुर्गों ने स्पष्ट कहा कि बच्चे ईश्वर की देन है. हम लोग सिर्फ एक माध्यम ही बनते हैं. जन्म से लेकर मौत तक उसकी सारी आवश्यकताएं ईश्वर पूरी करता है, हम ईश्वर से नहीं टकरा सकते. तीनों

साधारण लिपिक के पद पर कार्य कर रहे हैं, मासिक वेतन से गुजारा करते हैं.

सुरेश समझाने लगा कि आज तो हम सुखी हैं, दो बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाकर उनका जीवन बना देंगे, कल को आपके नाती भी खुश रहेंगे और उनके साथ किसी को भी कोई परेशानी नहीं होगी. ज्यादा बच्चे होने पर घर की पूरी व्यवस्था बिगड़ जाएगी. आप भी भगवान का साथ दीजिए और भगवान के दिए बच्चों को परेशानी न होने दीजिए. आपकी सलाह मानकर मैं डॉक्टर को भी मना कर दूंगा, लेकिन और अधिक बच्चों को खुश रखना मेरे लिए सम्भव नहीं है और भगवान भी उनके दिए बच्चों को दुखी देखकर नाराज होगा और उनकी नाराजगी के जिम्मेदार आप बनेंगे, मैं नहीं. थोड़ी बहुत ना-नुकुर के साथ भगवान की नाराजगी से डरकर सबकी सहमति सुरेश को मिल गई.

मुकेश और विनोद को घर में साफ कह दिया गया कि बच्चों को जन्म देने वाले ईश्वर को हम नाराज नहीं करेंगे, लाख समझाने पर भी वो अपने निर्णय पर अडिग रहे. अंत में उन्होंने साफ कहा कि अगर तुम हमारा कहना नहीं मानोगे तो तुम अपने अलग रहने की व्यवस्था कर लो, पन्द्रह दिनों का समय है, उसके बाद इस घर में तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं रहेगी.

दोनों ने अपनी पत्नियों से बातचीत की, मुकेश की पत्नी ने कहा, सास-ससुर तो अपनी पेंशन से अपना खर्चा चला ही लेंगे, लेकिन हमारे बच्चों का भविष्य क्या होगा? उनकी धमकी को भूलकर आप अपने अलग रहने की व्यवस्था कर लीजिए और डॉक्टर को अपनी सहमति दे दीजिए. हमें आज कुछ परेशानी तो होगी, लेकिन बाद में हम लोग आराम से रह सकेंगे.

विनोद और उसकी पत्नी ने आपसी विचार-विमर्श के साथ निर्णय लिया कि घर में बुजुर्गों को नाराज करना उचित नहीं है और अपना अलग घर बनाना तो बिल्कुल ही गलत होगा, उनकी सलाह ही उचित है और उन्होंने डॉक्टर को इस आपरेशन के लिए साफ-साफ इंकार कर दिया.

राजेश, मनीष, दिनेश, सुरेश, मुकेश और विनोद इन सबके सामने डॉक्टर के गर्भनिरोधक आपरेशन की सलाह एक समस्या बनी है.

राजेश और मनीष ने समस्या को समूल नष्ट कर दिया, इसलिए चुनौती और अवसर की कोई बात ही नहीं रही. दिनेश और सुरेश ने अपनी इच्छाशक्ति और दूरदर्शिता से विचार करके समस्या का निराकरण कर लिया. मुकेश और विनोद के सामने इसी समस्या ने बहुत बड़ी चुनौती खड़ी कर दी, लेकिन मुकेश ने

दूरदर्शिता के साथ आत्मविश्वास से समय पर उचित निर्णय लेने का कार्य किया और चुनौती से मिले अवसर का सदुपयोग कर लिया. विनोद ने आत्मविश्वास की कमी के साथ ही साथ अपने भविष्य को नकारते हुए दबाव में आकर लिए निर्णय के कारण मिले हुए अवसर को गवां दिया.

यह घटनाक्रम स्पष्ट करता है कि - **हर समस्या एक चुनौती - हर चुनौती एक अवसर** सही है.

"हर समस्या और चुनौती एक समान है", लेकिन अवसर का उपयोग करने के लिए इच्छाशक्ति के साथ दूरदर्शिता एवं आत्मविश्वास के साथ सही निर्णय लेने वाला ही चुनौती पर विजय प्राप्त करके समस्या का निराकरण कर सकता है, दूसरा नहीं.

इसी तरह हर परीक्षा, चाहे वो स्कूलों की हो चाहे कार्यालयों में नियुक्ति के लिए या प्रमोशन के लिए हो, शत-प्रतिशत परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं. रोजगार या प्रमोशन के लिए हजार स्थानों के लिए लाखों आवेदन आते हैं. कुछ स्थान हैं, लेकिन पदोन्नति की आशा में कई गुना आवेदन आते हैं, सभी का सफल होना पूर्णतः असम्भव है.

रोजगार और पदोन्नति की समस्या रूपी चुनौती से प्राप्त अवसर सबके लिए हैं, लेकिन सभी इसका उपयोग नहीं कर सकते हैं. परीक्षा में असफल होने पर उनके निर्णय भी अलग-अलग होते हैं. जैसे :

1. इस बार फेल हो गये तो क्या हुआ, अगली बार और मेहनत करेंगे, आज नहीं तो कल पास होंगे ही. इनकी इच्छाशक्ति, दूरदर्शिता और आत्मविश्वास के साथ लिया गया निर्णय इनकी समस्या के निराकरण के लिए एक प्रबल सहयोगी है.
2. क्या होगा भूल जाओ और जब अपने भाग्य में होगा तो अपने-आप ही पास हो जाएंगे. इनके पास समस्या ही नहीं है. भाग्यवादी विचारधारा के कारण चुनौती और अवसर कहां से सामने आयेगा.
3. इतनी मेहनत करके भी फेल हो गये, इससे तो अच्छा होगा कि मैं अपने काम में ही लगा रहूंगा, इस लफड़े में न पड़ूं. ये घोर निराशावादी स्वयं अपनी हार मानते हैं, इसलिए कोई बात ही नहीं.

कुछ समस्याएं इंसान स्वयं ही बनाता है और अपने लिए चुनौती का निर्माण करता है, लेकिन अवसर का सही उपयोग नहीं कर पाता है.

उदाहरणार्थ :

एक ही स्कूल में पांचवीं में पढ़ने वाले चार छात्र रास्ते में जाते समय बातें कर रहे हैं.

एक कहता है कि मैं पिछले साल प्रथम आया था, इस साल भी प्रथम आऊंगा.

दूसरा कहता है कि मैं तीन विषयों में गुरूजी से ट्यूशन पढ़ रहा हूँ, प्रथम स्थान मैं ही प्राप्त करूंगा.

तीसरा कहता है कि अरे यार छमाही में मैं प्रथम रहा हूँ, वार्षिक परीक्षा में भी पहला नम्बर मैं ही पाऊंगा.

चौथा छात्र कहने लगा, परीक्षा के बाद कोई एक ही पहले नम्बर पर आयेगा, अभी से क्यों परेशान हो रहे हो. मेहनत करो और अपनी क्षमता प्रदर्शित करो.

अति आत्मविश्वासी तीनों छात्रों की समस्या चुनौती नहीं रही, लेकिन प्रथम स्थान चौथे छात्र ने प्राप्त किया. समस्या से मिली चुनौती के निराकरण के लिए आत्मविश्वास तो होना ही चाहिए, लेकिन अति आत्मविश्वास भी ठीक नहीं होता, क्योंकि "अति सर्वत्र वर्जयेत्" एकदम सही है.

कई बार देखा गया कि आत्मविश्वास के साथ आगे कदम बढ़ाने पर इंसान दो-चार बार पिछड़कर भी विजय प्राप्त कर लेता है. एक छोटा सा उदाहरण है कि किंगकांग और दारासिंह कई बार अखाड़े में उतरे, लेकिन बार-बार हारने के बाद भी दारासिंह ने हार नहीं मानी और अंत में वो विजयी हुए. सिकंदर और पोरस के बीच तीन बार युद्ध में हारकर भी सिकन्दर चौथी बार विजयी बना. अर्थात् आत्मविश्वास के साथ इच्छाशक्ति और मेहनत करते हुए प्रयास करने वाले के लिए कोई भी समस्या रह ही नहीं सकती है.

समस्या से प्राप्त चुनौती और उससे मिले अवसर को गंवाने के कारण, निराश न होकर पुनः प्रयास करने वाला आज नहीं तो कल अपने अवसर का सदुपयोग करके चुनौती पर विजय प्राप्त करके हर समस्या को मिटा सकता है.

कई बार हमारे विपक्षी द्वारा अपने स्वार्थ या अपनी जलन के कारण समस्याओं का निर्माण किया जाता है. समस्या से प्राप्त चुनौती और उससे मिले अवसर को कुछ लोग हतोत्साहित होकर अपने से कमजोर विपक्षी से हार स्वीकार करते हैं तो कई बार इनका प्रयास असफल होता है और हमें और भी आगे बढ़ा देता है. विपक्षियों द्वारा हतोत्साहित करने का प्रयास सामने वाले को और भी उत्साहित कर देता है. जैसे - आप देख सकते हैं -

राम और श्याम स्कूल में बेडमिंटन के अच्छे खिलाड़ी हैं, लेकिन अपने अच्छे खेल के कारण राम पिछले तीन वर्षों से लगातार बेडमिंटन में प्रथम पुरस्कार पा रहा है. वास्तव में वह एक अच्छा खिलाड़ी है, लेकिन कुछ छात्र उसकी इस प्रतिभा के कारण अन्दर ही अन्दर उससे जलते हैं, हालांकि वे स्वयं बेडमिंटन खेलते ही नहीं हैं. इस वर्ष फायनल मुकाबले में जयप्रकाश ने श्याम को तीसरे सेट में हराया और आज फायनल में राम और जय का मुकाबला प्रारम्भ हुआ. वास्तव में जय, राम के सामने एक कमजोर खिलाड़ी है और राम फिर से प्रथम स्थान प्राप्त कर सकता है. विपक्षी वहां आ गए और हर शॉट पर जय बहुत अच्छा और खूब, अरे जय क्या शानदार शॉट लगाया है, जोर-जोर से बोलते रहे हैं, पहला सेट हारने के बाद भी दूसरा और तीसरा सेट जीतकर जय ने मैच में विजय प्राप्त की. विरोधियों या राम की प्रतिभा से जलने वालों के प्रयास के कारण राम को जीतने का अवसर भी खोना ही पड़ा.

मैं स्वयं अपने अध्ययनकाल में निबंध, भाषण, वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेता रहा और कई इनाम भी पा चुका हूँ, लेकिन नौकरी में आने के बाद यह सब भूल गया. ऑडिटर ने मुझको हिन्दी में काम करते देखकर पूछा कि आप हिन्दी में लेख, कहानियां भी लिखते हैं क्या? मेरे नहीं कहते ही उन्होंने सलाह दी कि आप लेख, कहानियां, कविताएं आदि लिख सकते हो, यह आपकी लेखन-शैली ही बता रही है. आप अपनी तरफ से प्रयास करो और पत्रिकाओं में अपने लेख भेजो, अगर प्रयास करोगे तो फायदा ही होगा, नुकसान नहीं.

एक समय लिखना मेरे लिए एक समस्या और चुनौती रही, लेकिन विपक्षियों द्वारा इस समस्या और चुनौती को और बढ़ाने के बाद भी मैंने मिले अवसर का फायदा उठाया और अपने प्रयास में सफल रहा.

उज्ज्वल भविष्य की आशा में ऊंची छलांग न लगाकर सीढ़ी .दर सीढ़ी आगे बढ़ना, सफलता की इच्छा और आत्मविश्वास के साथ सफल भविष्य के विचार एवं निराशावादियों से न हारकर कार्य करने का उचित समय पर लिया गया सही निर्णय आज नहीं तो कल सफलता दिलाता ही है. "हर समस्या एक चुनौती - हर चुनौती एक अवसर" अपने आप में एक सच्चाई है. विचार करने वाला कोई भी व्यक्ति इससे इंकार नहीं कर सकता है.

दीपक व्ही. राचेलवार, शहडोल शाखा (म. प्र.) में कार्यरत हैं.

आदर्श कुमार

मानव संसाधन विकास में मूल्यांकन रिपोर्ट का महत्व

महान वैज्ञानिक एवं गणितज्ञ लॉर्ड केलविन ने कहा था, "अगर हम किसी चीज का मूल्यांकन नहीं कर सकते तो हम उस चीज को सुधार नहीं सकते". मानव संसाधन के आयाम में भी अगर हम किसी चीज का मूल्यांकन कर सकते हैं तो हम उसको बेहतर बना सकते हैं. इसी सिद्धांत को आगे बढ़ाते हुए मानव संसाधन विशेषज्ञों ने मूल्यांकन की आवश्यकता को लगातार उजागर किया है.

आज की आधुनिक प्रदर्शन-आधारित कार्यशैली में मूल्यांकन के महत्व को समझते हुए अधिकतम संस्थाओं ने मूल्यांकन को अपना लिया है. प्रस्तुत लेख में मूल्यांकन से होनेवाले अनेक लाभों का विस्तृत विवरण है.

मानव संसाधन के इतिहास में मूल्यांकन का इतिहास बहुत संक्षिप्त है. इसकी जड़ें 20 वीं सदी में दिये गये मैनेजमेंट गुरू टेलर के टाइम एण्ड मोशन के अध्ययन से जुड़ी हैं. टेलर के इस अध्ययन को, उद्देश्य निर्धारण और उसकी उपलब्धि और इसकी प्रक्रिया से मूल्यांकन का श्रेय जाता है. परंतु फ्रेड्रिक टेलर के इन साइंटिफिक मैनेजमेंट की विधियों, जिनके द्वारा मैनेजमेंट में विज्ञान का पदार्पण हुआ, को आधुनिक मानव संसाधन प्रबंधन के विकास का श्रेय दिया जा सकता है.

अगर हम और इतिहास में जाएं तो मूल्यांकन की मौजूदगी सैन्य व्यवस्थाओं में देखने को मिलती है. भारतीय, रोमन, ग्रीक आदि सारे सैन्य बलों में प्रदर्शन के आधार पर पदोन्नति के उल्लेख हैं. सबसे सुव्यवस्थित ऐतिहासिक सेना रोमन साम्राज्य की रोमन लीजंस को माना जाता है. इस सेना में अनेक रैंक या वर्ग होते थे और इन वर्गों में प्रदर्शन के आधार पर यानि कि प्रदर्शन के मूल्यांकन और उसके आधार पर पदोन्नति की व्यवस्था थी.

आज मानव संसाधन मूल्यांकन किसी भी प्रकार के संगठन के प्रभावी और व्यवस्थित कार्य संपादन के लिए महत्वपूर्ण प्रक्रिया है. आमतौर पर इसका अर्थ एक कर्मचारी के प्रदर्शन का व्यवस्थित और ठोस रूप से मूल्यांकन या जांच या पहचान करना है. व्यक्तिगत कर्मचारियों के संगठित होने से ही किसी संस्था का निर्माण संभव हो पाता है. अंग्रेजी के मुहावरे "The whole is greater than sum of its parts" की तरह ही एक संस्था का प्रदर्शन भी उसके सदस्यों के प्रदर्शन पर ही निर्भर करता है. अतः सदस्यों के प्रदर्शन को मापने और सुधार करने से ही संस्थाओं की प्रगति को उनके विज़न एवं मिशन के मार्ग पर अग्रेषित किया जा सकता है. मूल्यांकन के द्वारा प्रबंधकों को बेहतर प्रदर्शन करनेवालों की पहचान होती है. इसके साथ-साथ प्रबंधन के सामने ऐसे तथ्य भी उजागर होते हैं, जो कर्मचारियों के प्रदर्शन में बाधा डालते हैं. पर इनसे भी ज्यादा महत्वपूर्ण तथ्य, जो कि मूल्यांकन से उजागर होता है, वह है कर्मचारियों के प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक सुविधाएं, प्रशिक्षण जैसी अन्य आवश्यकताएं. मूल्यांकन और उसके परिणाम प्रबंधन को कर्मचारियों के विकास, संगठनात्मक प्रदर्शन को बेहतर बनाने एवं कारोबार के लिये योजना और कार्यनीति बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं. इसके सहयोग से प्रबंधन के लिए व्यापार एवं मानव संसाधन के लिए एकात्मकता कार्यनीति बनाना आसान एवं प्रभावी हो जाता है.

ह्यूमन कैपिटल या मानव पूंजी, कारोबार का विस्तार करने और उसको बनाये रखने के लिए किसी भी संस्था के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग बन गया है. इसके बावजूद भी इस इनटेंजिबल या अमूर्त संपत्ति की पहचान, विकास, प्रबंधन और मूल्यांकन के लिए उठाये गये कदम काफी नहीं हैं. इनमें अनेक सुधार संभव हैं. आज मानव संसाधन प्रबंधकों को सही मायने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने के लिए मानव संसाधन के मूल्यांकन करने और इसके योगदान को संगठन के मिशन से जोड़ने में सक्षम होना होगा. एच आर स्कोरकार्ड इसी उद्देश्य हेतु एक प्रबंधन प्रणाली है. यह प्रणाली आम तौर पर किये गये मूल्यांकन और संगठन की उन्नति के मायने रखने वाले मूल्यांकन में अंतर को कम करती है. ऐसी विभिन्न मूल्यांकन प्रणालियों के द्वारा ही मूल्यांकन के संपूर्ण सामर्थ्य का वास्तविक उपयोग संगठन के विकास में संभव है. मूल्यांकन प्रणाली का उपयोग उद्देश्यों या ऑब्जेक्टिव का निर्धारण करने, इसके पश्चात उनके अनुसार प्रदर्शन की समीक्षा करने के साथ-साथ इसके अन्य प्रभावी उपयोग कस्टमर फोकस और प्रतिस्पर्धा बढ़ाने हेतु हो सकते हैं. ऐसा संभव हो सकता है, अगर उद्देश्यों के निर्धारण और उनके प्राप्ति के तरीके निम्नलिखित होंगेः

- उद्देश्य या ऑब्जेक्टिव किस हद तक कस्टमर वैल्यू को बढ़ायेंगे.
- उद्देश्य या ऑब्जेक्टिव किस हद तक संस्था के बदलाव की आवश्यकताओं को पूरा करेंगे.
- उद्देश्य या ऑब्जेक्टिव किस हद तक संस्था को प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ायेंगे.

किसी भी व्यवस्था से लाभ उसके होने से नहीं, बल्कि उसको कार्यान्वित करने से मिलता है. एक प्रभावी मूल्यांकन प्रणाली कर्मचारियों को उद्देश्य पर केंद्रित रखती है. इससे कर्मचारी अपने कार्यप्रदर्शन को उद्देश्यों के अनुकूल ढाल सकते हैं. एक प्रभावी मूल्यांकन प्रणाली पूरे संगठन को बदलाव से अनुकूलन, प्रदर्शन और उद्देश्यों में सामंजस्य लाने और बेहतर मूल्य-निर्माण करने वाली कार्यनीतियों का निर्धारण करने में मदद करती है. मौजूदा उच्च प्रतिस्पर्धा वाले माहौल में अग्रणी होने के लिए मानव संसाधन की गुणवत्ता को लगातार बढ़ाने की जरूरत है. मूल्यांकन प्रणाली मानव संसाधन के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है.

मूल्यांकन का उपयोग प्रदर्शन प्रबंधन अथवा परफॉर्मेंस मैनेजमेंट के लिए होता है. प्रदर्शन प्रबंधन संस्थान को एक नींव प्रदान करता है, जिस पर संगठन अपने कारोबार संबंधी कार्यों में सुधार और कर्मचारियों को उनके प्रदर्शन को सर्वोत्कृष्ट करने के लिए समर्थ और सशक्त कर सकते हैं.

मानव संसाधन में मूल्यांकन की शुरूआत बहुत ही सरल रूप में कर्मचारियों की आय को, उनके प्रदर्शन पर आधारित करने से हुई. मूल्यांकन का उपयोग एक कर्मचारी के वेतन में वृद्धि या कटौती के लिए किया जाने लगा. अगर मूल्यांकन से किसी कर्मचारी के प्रदर्शन को आदर्श से कम पाया गया तो उसके वेतन में कटौती, अन्यथा वृद्धि करने के निर्णय लिये जाने लगे. ऐसा माना जाता था कि वेतन में वृद्धि ही किसी को बेहतर प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित करने हेतु पर्याप्त है.

मूल्यांकन के बेहतर उपयोग, जैसे कि कर्मचारियों और संगठन के प्रदर्शन में सुधार लाना एवं अन्य विकास की संभावनाएं आदि को पर्याप्त विचार और महत्व नहीं दिया गया. 1950 के दशक तक हुये अनेक शोधकर्ताओं के शोध ने यह साबित कर दिया कि वेतन-दर महत्वपूर्ण तो थी, परंतु वह एकमात्र प्रेरक नहीं थी. इसके फलस्वरूप पारंपरिक पारितोषिक प्रेरकों का महत्व कम हुआ और अन्य प्रेरकों का महत्व तथा उपयोग बढ़ने लगा. इसी दशक में विश्व स्तर पर मूल्यांकन की प्रेरणा तथा विकास की संभावित उपयोगिता को धीरे - धीरे पहचान मिलने लगी. आधुनिक प्रदर्शन मूल्यांकन का प्रारूप तैयार होने लगा था.

मूल्यांकन व्यवस्था के अनेक लाभ सामने आये हैं. एक आदर्श मूल्यांकन की प्रक्रिया उद्देश्य निर्धारण से शुरू होती है. उद्देश्य निर्धारण चरण में हम संस्था स्तर के उद्देश्यों को व्यक्तिगत उद्देश्यों में रूपांतरित कर सकते हैं. "मैनेजमेंट बाइ ऑब्जेक्टिव" तथा "बैलेंस स्कोअर कार्ड" आदि का उपयोग उद्देश्यों के निर्धारण के लिए बहुत प्रभावी तौर पर किया जाता है. उद्देश्यों के निर्धारण के बाद एक या एक से ज्यादा चरणों में उनका मूल्यांकन किया जाता है. मूल्यांकन प्रक्रिया में 360 डिग्री मूल्यांकन, सहकर्मियों के विकास के लिए किये गये प्रयास, कार्यात्मक मूल्यांकन के साथ-साथ व्यावहारिक या बिहेवियरल मूल्यांकन आदि आधुनिक बदलाव हैं. इनके द्वारा हम सही मूल्यांकन और उसके संभावित लाभों को हासिल कर सकते हैं. 360 डिग्री मूल्यांकन में एक कर्मचारी के सहकर्मियों, मातहतों, वरिष्ठ कर्मियों एवं अगर उचित हो तो ग्राहकों से मूल्यांकन करवाया जाता है. मूल्यांकन के तीसरे चरण में मूल्यांकन रिपोर्ट से मूल्यांकन के परिणाम सामने आते हैं. इन परिणामों से प्रबंधन को कई महत्वपूर्ण जानकारियां मिलती हैं. इस तरह की प्रक्रिया से मूल्यांकन के सारे पक्ष सामने आते हैं और मैनेजमेंट के पास कई महत्वपूर्ण जानकारियां जाती हैं. इन जानकारियों के सहयोग से मैनेजमेंट, कर्मचारियों के विकास की जरूरतों, प्रेरणात्मक या मोटिवेश्नल जरूरतों, यथोचित कार्य आबंटन इत्यादि का सटीक समाधान कर सकते हैं.

मूल्यांकन और मूल्यांकन रिपोर्ट का योगदान मानव संसाधन में सर्वोत्कृष्ट रहा है. आज मानव संसाधन के विकास के लिए एक ठोस मूल्यांकन प्रक्रिया की उपस्थिति एवं अनुपालन अनिवार्य है.

आदर्श कुमार, क्षे.का., हैदराबाद में सहायक प्रबंधक (मासं) हैं.